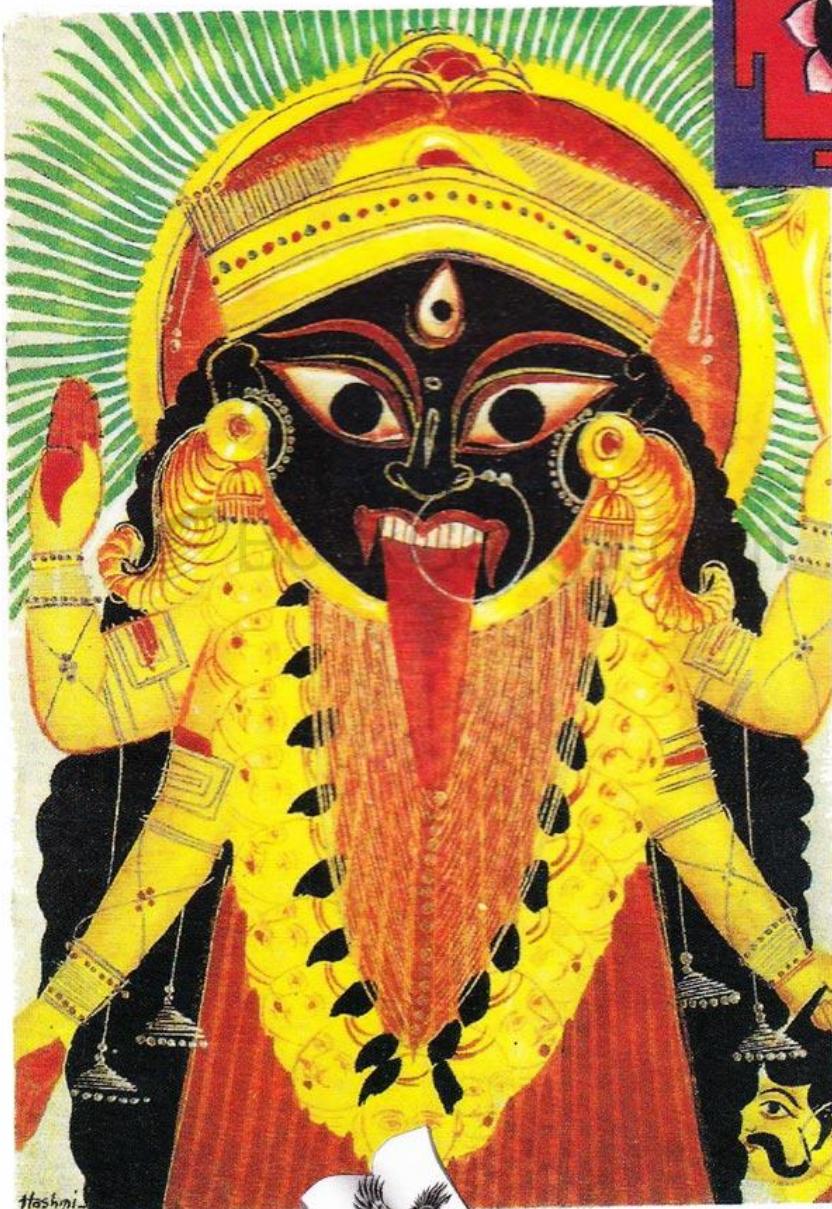
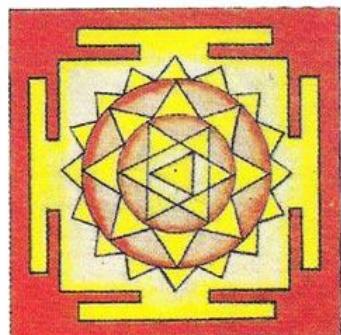


# तांत्रिक सिद्धयां

डॉ. नारायणदत्त श्रीमाली



Hashni.org



वी एंड एस पब्लिशर्स



## COLLECTION OF VARIOUS

- > HINDUISM SCRIPTURES
- > HINDU COMICS
- > AYURVEDA
- > MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with  
By  
  
Avinash/Shashi

Icreator of  
hinduism  
server

प्रकाशक  
हिन्दू पुस्तक भण्डार, दिल्ली-110006

संबद्ध संस्था  
पुस्तक महल, दिल्ली-110006

विक्रय केन्द्र

- 6686, खारी बावली, दिल्ली-110006.....फोन 239314, 2911979
- 10 वी, नेताजी सुभाष मार्ग, दरियागज, नई दिल्ली-110002.....फोन 3268292-93

प्रशासनिक कार्यालय  
एफ-2/16, असारी रोड, दरियागज, नई दिल्ली-110002  
फोन 3276539, 3272783, 3272784  
टेलेक्स 031-78090 एस वी पी इन \* फेक्स 91-11-2924673

शाखा कार्यालय  
• 23-25, जाओवा वाडी, ठाकुरद्वार, वडई-400002 फोन 2010941  
• 22/2, मिशन रोड (शामा राव कम्पाउड), बगलोर-560027 फोन 2234025  
• खेमका हाउस, वूमेन्स हॉस्पिटल के सामने, अशोक राजपथ, पटना-800004 फोन 653644

सूचना

इस पुस्तक के तथा इसमें समाहित सारी सामग्री (रेखा व छाया चित्रों सहित) के सर्वाधिकार 'पुस्तक महल' द्वारा सुरक्षित हैं। इसलिए कोई भी सज्जन इस पुस्तक का नाम, टाइटल डिजाइन, अन्दर का मैटर व चित्र आदि आशिक या पूर्ण रूप से तोड़-मरोड़कर एवं किसी भी भाषा में छापने व प्रकाशित करने का साहस न करें। अन्यथा कानूनी तौर पर हज़ेर-खर्चें व हानि के जिम्मेदार होगे।

Revised Price  
Rs 40/-  
PUSTAK MAHAL

मुद्रक पेरिस ऑफसेट प्रिन्टर्स, नारायणा, नई दिल्ली - 1100

## दो शब्द

मुझे प्रसन्नता है कि एक ऐसा ग्रन्थ प्रकाशित होने जा रहा है जिसकी विषय-वस्तु सर्वथा भौतिक और अप्रकाशित है, तथा वे साधनाएं तथा सिद्धिया जिनके बल पर भारत सम्पूर्ण विश्व का सिरमोर कहा जाता है और प्रत्येक साधक की इन सिद्धियों को प्राप्त करने की लालसा रहती है, वे सिद्धिया स्पष्ट रूप में इस पुस्तक के माध्यम से पहली बार प्रकट हो रही हैं।

सिद्धियों और साधनाओं का विवरण स्पष्ट रूप से दे दिया गया है, इस सबध में जो भी पत्र मुझे प्राप्त हुए, मैंने विना उनमें सशोधन किये उन पत्रों को इस पुस्तक में स्थान दिया है, अत इन सिद्धियों की सफलता-असफलता के प्रति प्रकाशक लेखक या सम्पादक किसी भी प्रकार से उत्तरदायी नहीं हैं। जो साधक साधना करना चाहे, वे अपने विवेक और इच्छा के अनुसार इनसे लाभ उठा सकते हैं।

साधना कार्य एक कठिन कार्य है। इस पुस्तक में जो भी सिद्धिया और साधनाएँ दी हैं, वे प्रामाणिक हैं, पर सफलता और असफलता के मूल में साधक का विवेक और सामर्थ्य शक्ति मुख्य रूप से प्रभावक रहती है। यदि साधक किसी साधना में असफल होता है तो यह उसके अपने विवेक और सामर्थ्य शक्ति की न्यूनता ही कही जा सकती है।

प्रकाशक महोदय को तत्परता और रुचि के कारण यह पुस्तक इतने शीघ्र समय में सज-धज करके प्रकाशित हो रही है, उसके लिए प्रकाशक साधुवाद के पात्र हैं।

पुस्तक में वर्णित घटनाएं कल्पना एवं यथार्थ का सुखद सामजस्य हैं।

यह पुस्तक ३०० श्रीमाली के सम्पूर्ण व्यक्तित्व पर प्रकाश ढालती है। अत उनका नाम मैं अपने गुरु होने के नाते आदर व्यक्त करने के लिए दे रहा हूँ। इस दृष्टि से यह पुस्तक मैं गुरु चरणों में समर्पित भाव से प्रस्तुत कर रहा हूँ।

—योगी ज्ञानानन्द

## भूमिका

योगी ज्ञानानन्द ने परम प्रिय नारायणदत्त श्रीमाली के जीवन से सम्बन्धित पत्रों का सप्रह मुझे दिखाया, उनकी इच्छा इन पत्रों के प्रकाशन की है, इनमें जो पत्र उन्होंने चुने हैं वे वास्तव में ही महत्वपूर्ण हैं और श्रीमाली जी के व्यक्तित्व की ज्ञानी इन पत्रों के माध्यम से प्राप्त होती है।

मेरी धारणा है कि ये पत्र बहुत पहले प्रकाशित हो जाने चाहिए थे, क्योंकि ये पत्र कालजयी होने के साथ-साथ साधना के क्षेत्र में कार्य करने वाले साधकों के लिए भी प्रेरणा स्तम्भ हैं। इनके माध्यम से वे अपने प्राणों में एक नई ऊर्जा का सचार बनुभव कर सकेंगे और अपने पथ पर बढ़ने में उन्हें एक नया साहस और शक्ति प्राप्त हो सकेगी।

मैं श्रीमालीजी के बहुमुखी व्यक्तित्व से परिचित हूँ, यद्यपि मैं उनके समूर्ण व्यक्तित्व को आकर्ते में समर्थ नहीं हूँ परन्तु जितना भी मैं उनके सम्पर्क में आ सका हूँ उससे जात होता है कि उनका व्यक्तित्व हिमालय के समान विराट और गगा के समान निर्मल है। उन्होंने जीवन को पूर्ण क्षमता के साथ जीया है, और प्रत्येक क्षण का उन्होंने आनन्द के साथ उपभोग किया है। कई बार जब उनके व्यक्तित्व के बारे में चिन्तन करता हूँ तो आश्चर्यचकित रह जाता हूँ कि एक व्यक्ति साधना के इतने विविध आयामों को किस प्रकार से स्पर्श कर सकता है, पर श्रीमालीजी का व्यक्तित्व हमारे सामने इसका प्रत्यक्ष उदाहरण है, जिस प्रकार से वह अपनी विराटता को छू सका है।

मन्त्र के क्षेत्र में श्रीमालीजी अद्वितीय हैं, उन्होंने मन्त्रों के मूलस्वरूप को स्पष्ट किया है और वेदोक्त मन्त्रों की मूल व्यंगि को स्पष्ट कर हमें उस युग से साक्षात्कार कराया है जब इन मन्त्रों की रचना हुई थी। उनके द्वारा इस प्रकार के मूलध्वनियुक्त मन्त्रों के टेप तैयार किये गए हैं जो कि अपने आप में ऐतिहासिक कार्य हैं। आने वाली पीड़ियों के लिए ये टेप सप्रहणीय रहेंगे क्योंकि इनके माध्यम से वे

साधक वेदों की ऋचा और उसकी मूल ध्वनि का परिचय या सकेंगे कि हमारे मह-पियों के मुह से वेदों की ध्वनि किस आरोह-अवरोह के साथ निसृत हुई थी जिससे कि उन मन्त्रों का प्रभाव अमिट था ।

वर्तमान युग के सर्वश्रेष्ठ योगीराज श्री सच्चिदानन्दजी का शिष्य होना ही अपने आप में अत्यन्त उच्चस्तरीय सौभाग्य है और यह सौभाग्य श्रीमालीजी को प्राप्त है । योगीराज सिद्धाश्रम के मूल प्रवर्तकों में से एक हैं और पूरा विश्व उनके प्रति कृतज्ञ है, इस प्रकार के परम श्रेष्ठ योगीराज के दर्शन ही हम साधकों के लिए दुर्लभ हैं ऐसे योगीराज के शिष्य होना ही अपने आप में इस व्यक्तित्व का प्रमाण है । श्रीमालीजी, श्री योगीराज सच्चिदानन्दजी के परम प्रिय शिष्य हैं और उनके माध्यम से मन्त्रों का साकार रूप हमें प्राप्त हो सका है ।

कामाक्षा के तात्रिक सम्मेलन की हल्की-सी ज्ञाकी योगी ज्ञानानन्द ने इस पुस्तक में दी है । उस सम्मेलन में श्रीमालीजी ने जो दुर्लभ और कठिन साधनार्थे सबके सामने उपस्थित की थीं वे अपने आप में अन्यतम हैं । उनके तात्रिक स्वरूप को मैं पहले से ही जानता था और यदि इस क्षेत्र में उन्हे आधुनिक गोरखनाथ कहा जाए तो अतिशयोक्ति नहीं होगी ।

ज्योतिष के क्षेत्र में उन्होंने जो कुछ योगदान दिया है उससे पूरा भारत परिचित है, आने वाले समय में इस क्षेत्र में उनका और अधिक योगदान हमें मिल सकेगा, ऐसी प्रभु से प्रार्थना है ।

श्रीमालीजी के व्यक्तित्व के बारे में कुछ लिखूँ ऐसी सामर्थ्य में अपने आप में अनुभव नहीं करता हूँ । उनके सामने मैं लघु हूँ, भले ही आयु में मैं उनसे बड़ा हूँ परन्तु वास्तव में ज्ञानवृद्ध ही वृद्ध कहलाता है इसलिए मैं उनके प्रति सम्मान और आदर प्रदान करता हूँ ।

उन्होंने जीवन में जो कष्ट और यातनाएं सहन की हैं, वे रोमाञ्चकारी हैं । उन्होंने कभी भी अपने जीवन को जीवन समझा ही नहीं, अपितु अपने प्रत्येक क्षण को सार्थकता प्रदान करने में ही जुटे रहे । तात्रिक क्षेत्र में उन्हे त्रिजटा अघोरी जैसे युग-पुरुष का सानिध्य प्राप्त हो सका है, यह कम महत्व की बात नहीं है ।

मैं श्रीमालीजी के स्वभाव से परिचित हूँ । वे अत्यन्त सकोची हैं, अपने बारे में कभी कुछ भी नहीं कहते हैं अपितु अपनी प्रशसा सुनना भी वे पसन्द नहीं करते । इसलिए इन-पश्चों का प्रकाशन यदि नहीं होता तो साधक समाज एक बहुत बड़े अभाव में रह जाता । वास्तव में ही उनके ये पत्र प्रकाशन के योग्य हैं जिससे कि आने वाली पीढ़िया और हम सब लाभ उठा सकें । इस दृष्टि से ज्ञानानन्द ने जो कार्य किया है, वह वास्तव में ही सराहनीय है ।

इन पत्रों के साथ कुछ दुर्लभ साधनाओं से सम्बन्धित पत्र भी प्रकाशित हो रहे हैं, जिससे यह ज्ञात होता है कि सही रूप में साधना करने पर उसका फल निश्चय ही मिलता है। इससे भी साधक वर्ग लाभ उठा सकता है। आज भी श्रीमालीजी सक्रिय हैं, और अपने ज्ञान को शिष्यों के भाष्यम से प्रदान करने में प्रसन्नता अनुभव करते हैं, यह उनके पत्रों से स्पष्ट है।

मेरी भावनाएं उनके प्रति नमन हैं और मैं प्रभु से प्रार्थना करता हूँ कि वे अभी और काफी समय तक गृहस्थ में रहे जिससे कि उनका लाभ समाज उठा सके और वे दीर्घायु हो जिससे हम सब उनसे प्रेरणा प्राप्त कर सकें।

—भूर्भुआ बाबा

## विषय क्रम

दो शब्द	3
भूमिका	4
मनोदृगार	9—65
डॉ० श्रीमाली के पत्र अपनी पत्नी के नाम	66—98
डॉ० श्रीमाली का पत्र ऋषु के नाम	99—107
पत्र—डॉ०श्रीमाली के नाम	108—128

## साधना और सिद्धियाँ

बगलामुखी साधना	131—139
तारा साधना	140—147
कर्ण पिशाचिनी साधना	148—156
अष्ट लक्ष्मी साधना	157—165
सम्मोहन साधना	166—175
अधोर गौरी साधना	176—179
काल ज्ञान मत्र	180—183
अनंग साधना	184—187
दत्तात्रेय साधना	188—191

प्रसिद्ध भविष्यवक्ता, प्रकाण्ड ज्योतिषी व हस्तरेखा विशेषज्ञ  
डॉ० नारायणदत्त श्रीमाली कृत एक अन्य प्रकाशन



## बृहद् हस्तरेखा शास्त्र

आप खुद अपने हाथ की रेखाएं पढ़कर अपना भविष्यफल जान सकते हैं। किसी पण्डित अथवा ज्योतिषी के पास जाने की आवश्यकता नहीं है। इस पुस्तक में पहली बार हस्तरेखा का प्रैक्टिकल ज्ञान चिन्हों सहित समझाया गया है।

पुस्तक की कुछ अभूतपूर्व  
विशेषता एं—



- ★ हस्तरेखा के 240 विभिन्न योगों का पहली बार प्रकाशन : जैसे—आपके हाथ में धन-सम्पत्ति का योग, पुत्र योग, विवाह योग, अकस्मात् धन प्राप्ति योग, विदेश यात्रा योग आदि हैं या नहीं ? इन सबका चिन्हित वर्णन ।
- ★ हस्तरेखा ज्ञान चिन्हों द्वारा सिर्फ 15 दिन में सीखिए और अपने व अपने मित्रों के हाथ देखकर आग्ने का हाल बताए ।
- ★ आपके हाथ की रेखाएँ क्या कहती हैं ? कौन-से व्यापार से आपको लाभ होगा ? नीकरी में तरक्की कब तक होगी ? पत्नी कैसी मिलेगी ? प्रेम में सफल होगे या नहीं ? विवाहित जीवन सुखी होगा या नहीं, कब होगा आदि ।
- ★ आप डॉक्टर बनेंगे या इंजीनियर ? नेता बनेंगे या अभिनेता ? लेखक बनेंगे या प्रोफेसर, विदेश यात्रा पर कब जायेंगे ? मन की अशान्ति एवं कष्टों का कब अन्त है ? मुकदमे में जीत होगी या हार ? कर्ज से छुटकारा कब मिलेगा ? गृह-क्लेश कब खत्म होगा ? हृत्यादि सैकड़ों प्रश्नों के उत्तर आदि ।

मूल्य 40/- डाकखर्च 6/-

पृष्ठ संख्या : 348

## मनोद्गार

वात प्रारभ करता हू, कामाक्ष्या के तात्रिक सम्मेलन से । इस सम्मेलन की काफी कुछ चर्चा हम लोगों के बीच थी, विशेषकर जो तत्र में विश्वास रखते थे या तात्रिक कियाए जानते थे, उनके लिये यह एक अशूलपूर्व अवसर था । जबकि तत्र की आराध्य कामाक्षा स्थान पर तात्रिक सम्मेलन होने जा रहा था । यद्यपि इसकी चर्चा पञ्च-पञ्चिकाओं में नहीं थी, परन्तु तत्र के जानने वालों के लिये यह सूचना अनुकूल थी और इसमें भारत के ही नहीं, कुछ विदेशी के भी तात्रिकों के भाग लेने के बारे में समाचार सुनने को मिले थे ।

यह भी सुना था कि इसमें पूरे भारत से विशिष्ट तात्रिक भाग लेंगे और उन तात्रिकों के भाग लेने की भी यह शर्त थी कि इसमें केवल वे ही तात्रिक भाग ले सकते हैं जो कि दस महाविद्याओं में से कोई एक महाविद्या सिद्ध की हो । तत्र के क्षेत्र में यह काफी ऊचे स्तर की वात होती है । यह शर्त इसलिये रख दी थी जिससे कि विशिष्ट तात्रिक ही भाग ले सकें, सामान्य तात्रिकों से प्रागण भर जाय और व्यर्थ में ही समय दीत जाय, आयोजक ऐसा नहीं चाहते थे ।

यह आयोजन न तो राजनीतिक स्तर पर था और न सामाजिक स्तर पर । इसके पीछे न किसी सेठ साहूकार का धन था और न कौतूहल आदि । इसका एकमात्र उद्देश्य यही था कि बदलते हुए परिवेश में तात्रिकों का समाज को क्या योगदान हो सकता है, और समाज उनसे किस प्रकार से लाभ उठा सकता है ?

इसके अलावा यह मी जात करना था कि वास्तव में उच्चकोटि के कितने तात्रिक हैं । इसके लिये उन माध्यमों को चुना था जिनका सम्पर्क सुदूर हिमालय स्थित योगियों से और तात्रिकों से भी था ।

यहा जब मैं 'तात्रिक' शब्द का प्रयोग कर रहा हू तो इसका तात्पर्य केवल तात्रिक ही नहीं अपितु मत्र शास्त्र के जानने वाले व्यक्तियों या विद्वानों से भी है । मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि इस सम्मेलन में उच्च कोटि के मत्र शास्त्री और तत्र शास्त्रियों को बुलाना था और परस्पर विचार विमर्श करना था ।

लेने के लिये उत्सुक थे। अधीरता से उस तारीख की प्रतीक्षा कर रहे थे जब यह तात्रिक सम्मेलन होना था। कुल १० दिन का यह सम्मेलन था और उन सभी तात्रिकों से सम्पर्क स्थापित किया जा चुका था जो इस क्षेत्र में विशिष्ट थे या अति विशिष्ट थे। इसके साथ-ही-साथ उन मन्त्र शास्त्रियों या मन्त्र के जानने वालों और विद्वानों को भी बुलाया था जिन्होंने उस क्षेत्र में अभूतपूर्व कार्य किया हो, मन्त्रों के माध्यम से जो कुछ भी करने में समर्थ हो।

उन सभी योगियों और साधकों से सम्पर्क किया जा चुका था, जिन्होंने अपने जीवन का बहुत बड़ा हिस्सा उस विशिष्ट साधना में विताया हो, और यह प्रसन्नता की बात थी कि भारत के अति विशिष्ट मन्त्र-मर्मज्ञों और तात्रिकों ने भाग लेने की स्वीकृति दी थी। इनमें पगला बाबा, स्वामी चैतन्य मूर्ति, कृपालु स्वामी, बाबा भैरवनाथ, स्वामी प्रेत बाबा, अधोरी गिरजानन्द, अधोरी खर्षणनद भारती, त्रिजटा अधोरी, आदि कई ऐसी विशिष्ट विभूतियां थीं जिनके बारे में लाखों करोड़ बार सुना था, जिनके साथ आश्चर्यजनक कहानियां जुड़ी हुई थीं जो विशिष्ट सिद्धियों के स्वामी थे। इस प्रकार के तात्रिकों, मात्रिकों और अधोरियों का सम्मेलन एक स्थान पर हो, यह हम जैसों के लिये आश्चर्यजनक था।

इस सम्मेलन में निर्णय यही था कि इसमें वाममार्गी और दक्षिण मार्गी साधना से सम्पन्न साधक एक स्थान पर एकत्र हो और अपनी सिद्धियों का प्रदर्शन करें। सिद्धियों को प्राप्त करने में जो वाधाएं आ रही हैं, उनका निराकरण किस प्रकार से हो तथा इन साधनाओं और सिद्धियों का सामना जनमानस को किस प्रकार से मिल सके, इसका निर्णय और विचार इस सम्मेलन में होना था।

इसके अलावा पिछले पाँच हजार वर्षों में यह पहला अवसर था जबकि इस प्रकार के अति विशिष्ट योगी, साधक, तात्रिक और मात्रिक एक स्थान पर एकत्रित हुए। इसके लिये कुछ विशिष्ट योगियों ने जो प्रयत्न किया था वह बास्तव में ही सराहनीय था, और उनके ही प्रयत्नों से यह असभव कार्य सभव हो सका था। उनके प्रयत्नों से ही सुदूर हिमालय स्थित साधकों से सम्पर्क हो सका था और उनको उस सम्मेलन में भाग लेने के लिये तैयार किया जा सका था।

प्रयत्न यह था कि इस सम्मेलन की चर्चा ज्यादा न हो, क्योंकि इससे पूरे भारत से लोग दर्शनों के लिये या मिलने के लिये एकत्र हो जाते और इससे अव्यवस्था-सी उत्पन्न हो जाती, फलस्वरूप जिस उद्देश्य के लिये यह सम्मेलन बुलाया जा रहा था, वह उद्देश्य ही अपने आप में समाप्त हो जाता। इसके अलावा साधकों ने भी यह शर्त लगा दी थी कि हम जन-साधारण के सामने न तो जाना चाहते हैं और न अपना या अपनी सिद्धियों का प्रदर्शन करना चाहते हैं।

उनकी बात अपने स्थान पर सही भी थी और यह उचित ही था कि जिस उद्देश्य के लिये यह अभूतपूर्व सम्मेलन हो रहा है, उसकी गरिमा बर्नी रह सके, साय-

हीन्साथ इसमें जो महापुरुष या विशिष्ट साधक भाग ले रहे हैं उनकी प्रतिष्ठा में किसी प्रकार की आवं न आवे तथा किसी प्रकार की न्यूनता न रहे।

पिछले बीस वर्षों में मैंने तत्र के क्षेत्र में घुसने का प्रयत्न किया है और तारा साधना को, जो कि दस महाविद्याओं में से एक है सिद्ध किया है, और सफलतापूर्वक प्रयोग भी किया है, इससे मैं अपने आपको कुछ समझने लग गया था। सही कहूँ तो अपने आपको बहुत कुछ समझने लग गया था, परन्तु इस सम्मेलन में भाग लेने पर ज्ञात हुआ कि मैं कुछ भी नहीं हूँ यो कहूँ कि भाग लेने वाले साधकों के पास जो सिद्धिया हैं उनके सामने मैं नगण्य हूँ, ब्रूल के कण जितना भी मेरा महत्व नहीं है। यदि मैं सैकड़ों वर्षों तक उनके चरणों में बैठकर ज्ञान प्राप्त करूँ तब भी उनकी थाह नहीं आ सकती।

इस तारा साधना की कड़ी परीक्षा देने के बाद ही मुझे इस सम्मेलन में भाग लेने की अनुमति मिली थी। मैं सोचता हूँ कि पिछले बीस वर्षों में भी मैं जो नहीं जान सका था वह इस सम्मेलन से जान पाया। यह मेरे पूर्व जन्म और इस जन्म का पुण्य प्रभाव ही था, जिससे कि मैं इस सम्मेलन में भाग लेने का अधिकारी माना गया। यह मेरी पीढ़ी का सौभाग्य है कि इस पीढ़ी में इस प्रकार का अभूतपूर्व सम्मेलन हो सका और हम अपनी आखो से इस सम्मेलन को देख सके। वह मेरे पुण्यों का उदय था जिससे कि मैं उन विशिष्ट साधकों को देख सका जिनके तो दर्शन ही दुर्लभ हैं। यदि तत्र और मत्र इस देश में जीवित हैं तो केवल इस प्रकार के विशिष्ट साधकों के बल पर ही। ये साधक नहीं, मत्र-तत्र के मूर्तमत रूप हैं।

जीवन के प्रारम्भ में मैं कानून का विद्यार्थी रहा था और मैंने उच्च श्रेणी में कानून की परीक्षा पास की थी, पर मेरे द्वारा एक बार एक गलत फैसला हो जाने के कारण एक निर्दोष को फासी की सजा मिल गई। यह मेरी गलती थी। उस गलती से मैं इतना अधिक दुखी रहा कि मैंने अपने पद से त्यागपत्र दे दिया, और हमेशा के लिये नौकरी छोड़ दी। इसके बाद पत्रकारिता के क्षेत्र में मैंने भाग लिया और अपनी पैनी दृष्टि तथा निर्मम लेखनी से मैं शीघ्र ही पत्रकारों के बीच लोकप्रिय हो गया और पत्रकार-संघ का अध्यक्ष भी कई वर्षों तक रहा, अग्रेजों का जमाना होने के कारण मुझ पर उनकी कुद्द दृष्टि शुरू से ही थी, अत उन्होंने मेरे चारों तरफ धेरावन्दी प्रारभ की। इस धेरा वदी में मैं जकड़ा जाऊँ इससे पहले ही मैंने सासार छोड़ दिया, शादी मैंने की नहीं थी इसलिये घरबार की चिन्ता थी नहीं। निश्चय यही कर लिया था कि आगे का पूरा जीवन साधना में ही व्यतीत करना है, और अज्ञात रहस्यों की खोज में जीवन विता देना है।

प्रारम्भ से ही मैं कुतर्की रहा हूँ, सहज ही मैं किसी से प्रभावित होता नहीं, बातचीत में मेरी पत्रकरिता तुरन्त सामने आ जाती है और जिस व्यक्ति से बातचीत करता ह, अपने पैने प्रश्नों से उसके व्यक्तित्व की चीरफाड़ इस प्रकार से कर लेता है।

सामने आ जाता है, और इस प्रकार मैं उसके व्यक्तित्व से प्रभावित होने की अपेक्षा वह मेरे व्यक्तित्व से प्रभावित हो जाता है।

साधु जीवन धारण करने के बाद मैंने इस आदत के कारण कई शत्रु बना लिये। जो भी विशिष्ट साधु या तात्रिक होता उससे मिलता और दो चार घटों से ही मैं उसकी कलई खोल देता। उसके भीतर जो कमज़ोरी होती वह मैं उसके सामने ही उजागर कर देता और इस प्रकार मेरी पत्रकारिता मुझे सहज ही किसी पर विश्वास नहीं करने देती।

आज भी मैं इस आदत को छोड़ नहीं पाया हूँ। कानून का विद्यार्थी और अधिकारी होने के नाते बहुत अच्छी तरह से जिरह कर लेता हूँ और सामने वाले के अस्त्रों से ही उसको धायल कर लेता हूँ, साथ ही-साथ मेरी पत्रकारिता सामने वाले को पूरी तरह से नगा करके रख देती है, इसलिये मैं अपने जीवन में बहुत ही कम लोगों से प्रभावित रहा हूँ और किसी के प्रति मेरे मुह से 'गुरु' शब्द तो निकल ही नहीं पाया है, क्योंकि जब तक अत्युच्च साधना से सम्पन्न व्यक्तित्व नहीं मिलता, तब तक मैं उसके सामने नतमस्तक हो ही नहीं सकता। पिछले बीस वर्षों में मैं सैकड़ों साधुओं, मात्रिकों और तात्रिकों के सम्पर्क में आया और उनसे सीखने को मिला, परन्तु प्रभावित किसी से भी नहीं हो पाया। एक प्रकार से मुझे ये सभी खण्ड-खण्ड रूप में अवश्य मिले, उनका खण्डित व्यक्तित्व अवश्य देखने को मिला परन्तु पूर्ण व्यतित्व मेरे सामने कोई आया ही नहीं और इसीलिये मेरा सिर किसी के चरणों में पूरी तरह से झुक ही नहीं पाया। जब तक मेरा व्यक्तित्व प्रभावित नहीं होता तब तक मेरे होठ 'गुरु' कह ही नहीं पाते। एक प्रकार से देखा जाय तो मैं पिछले बीस वर्षों में 'गुरुहीन' ही रहा हूँ। यद्यपि इस अवधि में मैंने तत्र की कुछ कियाए अवश्य सीखी, कुछ लोगों के कार्यों से प्रभावित भी हुआ, कुछ विशिष्ट साधकों के सम्पर्क में भी आया, भूत बाबा से मैंने विशिष्ट तात्रिक साधना-तारा साधना-भी सीखी और उनके प्रति अपने मन में अनुकूल धारणाएँ भी बनाईं, परन्तु हर बार मेरी पत्रकारिता बीच में आ जाती, और इस वजह से उनके खण्ड व्यक्तित्व से तो प्रभावित हो जाता, परन्तु अभी तक कोई ऐसा पूर्ण व्यक्तित्व नहीं मिला जो वास्तव में ही उच्च कोटि की कियाओं से सम्पन्न हो और मेरे लिये गुरु पद का अधिकारी हो।

कुछ तात्रिक अवश्य मिले, वे वाम मार्गी थे पर उन्हे 'दक्षिण मार्ग' साधना का क्षेत्र भी ज्ञात नहीं था, कुछ ऐसे साधक भी मिले जो तत्र की दक्षिण मार्गी साधना में निष्णात थे, पर वाम मार्ग साधना में शून्य थे।

कुछ हठ योगी भी मिले जिनके पास कुछ सिद्धिया थीं पर वे सामान्य सिद्धिया थीं। साधारण नागरिक उससे प्रभावित हो सकते हैं पर मेरे प्रभावित होने का तो प्रश्न ही नहीं था। कुछ मत्र शास्त्री मिले जो मत्रों के माध्यम से अलौकिक कार्य करने में सक्षम थे, परन्तु इसके अलावा उनके पास कुछ भी नहीं था।

मेरे कहने का तात्पर्य यह है कि यह मेरे जीवन का दुर्भाग्य ही है कि उतना भटकने के बाद भी कोई पूर्ण साधक नहीं मिला, जिसे धक्षिण मार्ग और वाम मार्ग के तश्च का पूर्ण ज्ञान हो और जो इस क्षेत्र का अधिकारी भाना जाता हो, साथ ही जिसे मन्त्र का भी उच्च कोटि का ज्ञान हो और अधोरी साधना या गोरक्ष साधना के बारे में विशेष जानकारी हो। एक ही व्यक्तित्व में जब तक इन सारे गुणों का समावेश नहीं होता तब तक वह पूर्ण सक्षम कहलाने में समर्थ नहीं हो सकता और जब तक ऐसा व्यक्तित्व मेरे सामने नहीं आता तब तक मेरा सिर किसी के चरणों में नहीं झुक सकता था।

ऐसी स्थिति में जब मैंने इस तात्रिक सम्मेलन की चर्चा सुनी और यह ज्ञात हुआ कि इसमें विशिष्ट साधक भाग लेंगे तो मन में आशा का सचार हुआ कि शायद इनमें कोई ऐसा पूर्ण सक्षम व्यक्तित्व मिल सके, जिसके सामने मेरा सिर नमन हो या जो वास्तव में ही इन सारी क्रियाओं का जानकार हो।

मैं चाहता यह था कि ऐसे व्यक्तित्व को केवल 'ध्योरिटिकल' ज्ञान ही नहीं हो अपितु 'प्रेक्षिकल' ज्ञान भी हो, जिससे कि वह अपने ज्ञान का योगदान दूसरों को दे सके, समाज कल्याण में सहायक हो सके।

इन बीस वर्षों में मैंने यह भी अनुभव किया कि जिनके पास भी ऐसा ज्ञान होता है उनकी मनोवृत्तिया दूषित हो जाती है, या उनका स्वभाव पूरी तरह से अक्खड़ किस्म का हो जाता है, बात करने में उन्हें कुछ भी होश नहीं रहता, या तो वे नशे में चूर रहते हैं, जिससे अपने अलावा उनको दीन-दुखिया की भी खबर नहीं रहती या वे इतने एकान्तवासी हो जाते हैं कि दूसरों से बात करना भी हेठी समझते हैं। इसके अलावा ऐसे व्यक्ति क्रोधी और मनमर्जी के मालिक होते हैं। ऐसे लोग किस समय क्या कर वैठेंगे इसको कल्पना ही नहीं की जा सकती। सीधे-सीधे बात करते-करते वे गालिया देने लग जाते हैं और कई लोगों को तो मैंने मारपीट करते हुए भी देखा है।

मेरी धारणा यह है कि ज्ञान ज्ञान होता है, चाहे वह किसी भी क्षेत्र का हो, ज्ञान के साथ नम्रता और व्यावहारिकता आवश्यक है, पर जो तात्रिक अधोरी या मात्रिक है उनका नम्रता से दूर का भी वास्ता नहीं रहता, वे अपने ही ख्यालों में मस्त, क्रोधी, अहकारी, और अपने आपको सर्वोच्च समझते हैं, विना नम्रता के पूर्ण व्यक्तित्व सभव नहीं है, नम्रता के साथ यदि साधना होती है, तो वह व्यक्तित्व अपने आप में ही विशिष्ट बन जाता है।

मुझे कहीं पढ़ी हुई घटना स्मरण आ रही है। एक बार सारे ऋषि-मुनियों की सभा हुई, और उसमें यह बाद-विवाद हुआ कि देवताओं में सर्वश्रेष्ठ देवता कौन है?

इसका भार भृगु ऋषि पर डाला और यह विचार हुआ कि ऋषियों में भृगु ऋषि श्रेष्ठ हैं अत वे किसी भी प्रकार से किसी भी युक्ति से यह ज्ञात करे कि ब्राह्म, विष्णु, महेश इन श्रेष्ठतम् देवताओं में से, सर्वं श्रीष्ठ देवता कौन हैं, जिसमें कि उनको सर्वोच्चता प्रदान की जा सके।

भृगु ऋषि सबसे पहले ब्रह्मा लोक में गए। वहाँ ब्रह्मा जी सृष्टि रचना में सलग्न थे। वे वहा जाकर दो क्षण तो उनके कार्य को देखते रहे और जब ब्रह्मा ने ऋषि को प्रणाम किया तो किसी भी प्रकार का आशीर्वाद या उत्तर नहीं दिया, इसके विपरीत उन्होंने लातों के प्रहार से जो कुछ उन्होंने निर्माण किया था उसको तोड़फोड़ दिया। यही नहीं अपितु इतना अधिक नुकसान कर दिया कि कई वर्षों की मेहनत बरवाद कर दी। ऐसा देखकर ब्रह्मा को क्रोध चढ़ आया और ऋषि को पीटने के लिए उद्यत हो गए।

ऋषि ने जब ब्रह्मा के क्रोध से तमतमाते हुए चेहरे को देखा और अनुभव किया कि किसी भी समय हाथापाई हो सकती है तो वे वहा से खिसक गए।

ब्रह्मा से निकल कर भृगु सीधे कैलाश पर्वत की ओर गए, जहा महादेव का निवास स्थान था। वहा पर महादेव तथा पार्वती दोनों बातचीत में सलग्न थे।

ऋषि ने आव देखा न ताव और सीधे पार्वती के कघे पर चढ़ गए। पार्वती हड्डवडाकर उठ खड़ी हुईं तो ऋषि फिर उचक कर उनके कघों पर बैठने की कोशिश करने लगे।

प्रलयकारी महादेव ने जब अपनी आखो के सामने अपनी पत्नी के साथ इस प्रकार का अभद्र व्यवहार होते देखा तो उनके क्रोध का पारावार न रहा और तुरन्त त्रिशूल उठा कर भृगु को मारने के लिए उनकी तरफ झपटे।

क्रोध से उनकी आखें लाल हो रही थीं और जितने वेग से उन्होंने त्रिशूल उठाया या वह आश्चर्यजनक था, भृगु की मृत्यु निश्चित थी, पर वे इससे पूर्व ही वहा से भाग खड़े हुए। कुछ दूरी तक तो महादेव ने पीछा किया, पर जितनी तेजी से भृगु भागे थे वह आश्चर्यजनक था।

वहा से भृगु सीधे क्षीरसागर पहुंचे, जहा शेषनाग की शैया पर भगवान् विष्णु लेटे हुए थे और लक्ष्मी उनके चरण दबा रही थी।

भृगु ने जब ऐसा देखा तो तुरन्त जोरों की एक लात विष्णु के सीने में दे मारी। यह देखकर शेषनाग क्रोध से फुकार उठा और उसके फनों से ज्वालाएँ-सी निकलने लगी, लक्ष्मी एक बार तो हतप्रभ हो गई, पर दूसरे ही क्षण उनका चेहरा क्रोध से लाल अगरे की तरह दहक उठा।

पर इधर ज्यो ही भृगु की लात विष्णु के सीने पर लगी, त्योहाँ विष्णु शात चित्त से उठ बैठे और भृगु के चरणों को पकड़ कर दबाने लगे, बोले—आपके चरण अत्यन्त कोमल हैं, और मेरा सीना अत्यन्त कठोर, लात मारने से आपके चरणों को अवश्य ही चोट पहुंची होगी, इसका मुझे दुख है और इसके लिए क्षमा प्रार्थी हूँ, कहते-कहते उनकी आखो में आसू छलछला आए।

भृगु उनकी नम्रता के सामने परास्त हो गए। उन्होंने कहा—“प्रभु मैं आपकी परीक्षा ले रहा था, वास्तव में ही देवताओं में आप सर्वोपरि हैं।”

— अस्मिन्द गर्भेण चर्ने ने ग्रन्ता ज्ञे क्रितान या ज्याटा प्रानवान् द्वोः।

अपितु वह व्यक्तित्व महान है जिसमें विद्वत्ता के साथ-साथ नम्रता भी हो।

मैंने इस प्रकार के व्यक्तित्व नहीं देखे, जिनमें विशिष्ट ज्ञान के साथ-साथ नम्रता भी हो। तात्रिक और मात्रिक क्षेत्र में मैंने विशिष्ट योगी और साधक तो अवश्य देखे, परन्तु अनमें नम्रता का सर्वथा अभाव था। उनमें अहं की प्रवृत्ति जरूरत से ज्यादा थी, वे प्रशंसाप्रिय थे। उनको इससे आत्मतुष्टि मिलती थी। नम्रता और विद्वत्ता इन दोनों का सगम मुझे देखने को ही नहीं मिला, बास तीर से इस तात्रिक क्षेत्र में।

अत जब मैंने इस प्रकार के विशिष्ट तात्रिक सम्मेलन की चर्चा सुनी और यह भी सुना कि इसमें सुदूर हिमालय स्थित साधक भी भाग लेंगे और इसमें केवल वे ही तात्रिक या मात्रिक भाग ले सकेंगे जिनमें विशिष्ट ज्ञान ही या विशिष्ट तात्रिक क्षमता ही तो मन में आशा का सचार हुआ कि शायद इस बार मेरी इच्छा पूर्ण हो जाय। ही सकता है इस बार मुझे खण्ड-खण्ड व्यक्तित्व के स्थान पर पूर्ण व्यक्तित्व से मिलना ही जाय, यह भी ही सकता है कि कोई ऐसा व्यक्ति या व्यक्तित्व मिल जाय जिसके सामने मेरा सर्वांग नतमस्तक हो सके और जिसे मैं गुरु शब्द से सम्बोधित कर सकूँ।

यह तो मेरी धारणा थी ही कि मेरा गुरु वही हो सकेगा जिसमें सभी प्रकार की तात्रिक और मात्रिक क्रियाओं का समावेश हो या इस क्षेत्र में उच्चतम ज्ञान से सम्पन्न हो, साथ ही वह ऐसा व्यक्तित्व हो जिसमें ज्ञान के साथ-साथ नम्रता का समावेश हो, वह केवल अधोरी योगी, या तात्रिक ही नहीं हो अपितु सही शब्दों में मानव भी हो। मैं ऐसे ही मानव की खोज में था जो कि पूर्ण हो, क्योंकि गुरु 'पूर्णता' का ही पर्याय होता है।

इन सब बातों से मैं रोमांचित था और इसीलिए मैंने इस सम्मेलन में भाग लेने का निश्चय किया था, परन्तु जब यह ज्ञात हुआ कि इसमें वही भाग ले सकता है जो उच्च साधना से सम्पन्न हो, अर्थात् तात्रिक क्षेत्र में दस महाविद्याओं में से किसी एक विद्या को सिद्ध किया हो या वास मार्गी साधना में 'श्यामा साधना' सफलतापूर्वक सम्पन्न की हो, या गोरक्ष साधना में अधोर तत्रों के साथ पीताम्बरी साधना सम्पन्न हो, या तात्रिक क्षेत्र में सजीवनी विद्या में निष्णात हो, इस प्रकार के उन्होंने कुछ माप दण्ड, रख दिए थे और जो व्यक्ति इनमें से किसी एक माप दण्ड पर खरा उत्तरता उसी को इस सम्मेलन में भाग लेने का अधिकार दिया जाता।

मैंने भूत बाबा से तारा साधना सफलतापूर्वक सम्पन्न की थी और उसमें दक्षता भी थी, अत मैंने क्रिया रूप में तारा साधना सम्पन्न करके दिखा दी तो आयो-जको ने मुझे प्रवेश पत्र दे दिया। यह प्रवेश पत्र पाना ही मेरे लिए सौभाग्य का सूचक रहा, क्योंकि इसकी वजह से मैं इस सम्मेलन में भाग ले सका, विशिष्ट तात्रिकों के सम्पर्क में आ सका और जो मेरा लक्ष्य था, जीवन की जो इच्छा थी वह पूरी हो सकी, अर्थात् मझे ऐसा गुरु प्राप्त हो सका जो मेरे मानस में अकिल था।

तात्रिक सम्मेलन के प्रारम्भ होने के एक दिन पहले मैं सयोजक स्वामी अभ्यानन्द जी से मिला। वे अत्यन्त व्यस्त थे और व्यस्तता से भी ज्यादा परेशान थे। उनकी परेशानी का मूल कारण यह था कि इतने बड़े आयोजन में किसी प्रकार की न्यूनता न रह जाय और उससे भी बड़ी चिन्ता की बात यह थी कि इसमें भाग लेने वाले सभी विशिष्ट साधक थे और उन सभी का स्वभाव अपने आप में अलग था। कुछ तात्रिकों के बारे में तो यह भी सुना था कि वे साक्षात् दुर्वासा के अवतार हैं, क्रोध तो उनकी नाक पर रहता है और थोड़ा-सा भी अनुचित या उनके मनोनुकूल न होने पर वे कुछ भी कर बैठते हैं, इस दृष्टि से सयोजक यदि परेशान थे तो इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं।

इस सम्मेलन के मूल में भूर्भुआ वावा थे, जो कि मूलत आध्यात्मिक सन्त हैं परन्तु इसके साथ-ही-साथ विशिष्ट तात्रिक भी हैं, उनकी ल्याति भारत में ही नहीं, पूरे विश्व में है। तत्र के क्षेत्र में और अध्यात्म के क्षेत्र में उनका नाम अत्यन्त श्रद्धा के साथ लिया जाता है। विशिष्ट व्यक्तियों को एक स्थान पर एकत्र करने में उनका सबसे बड़ा योगदान रहा है और इस सम्मेलन को सम्पन्न करने के मूल में उनकी ही प्रेरणा और परिश्रम रहा है।

मैं सम्मेलन के एक दिन पहले प्रयत्न करके भूर्भुआ वावा से मिला तो वे शान्त चित्त थे, फिर भी उनका मस्तिष्क अत्यन्त क्रियाशील था। मैंने इस सम्मेलन के बारे में जब कुछ जानना चाहा तो उन्होंने कहा कि यह मेरे जीवन की कसौटी है। यदि यह दस दिन का सम्मेलन भली प्रकार से सम्पन्न हो गया तो मैं इसे अपने जीवन की श्रेष्ठ उपलब्धि ही मानूगा।

भूर्भुआ वावा के बारे में काफी कुछ सुन रखा था और उनके बारे में जो कुछ सुना था प्रत्यक्ष में देख कर सुखद अनुभूति ही हुई थी। मूलत वे तात्रिक हैं परन्तु पिछले कई वर्षों से उन्होंने अपना जीवन अध्यात्म के क्षेत्र में विकसित किया है। इनकी आयु के बारे में काफी मतभेद है। कुछ तात्रिक इनकी आयु ६०० वर्षों से भी ज्यादा बताते हैं और उनके पास इसका प्रमाण भी है, परन्तु देखने पर वे ६०-७० वर्ष से ज्यादा आयु के नहीं लगते, शान्त और गम्भीर मुखमण्डल, पैंती दृष्टि, और तेजस्वी व्यक्तित्व। उनसे बातचीत करते समय सुखद अनुभूति ही होती है। वे जो भी बात करते हैं उसके पीछे उनका ठोस ज्ञान और दीर्घ अनुभव रहता है। वास्तव में ही वे अपने क्षेत्र के अत्यन्त तेजस्वी व्यक्तित्व हैं।

दूसरे दिन प्रातः १० वजे के लगभग सम्मेलन प्रारम्भ हुआ। सम्मेलन के चारों तरफ भूर्भुआ वावा के शिष्य मुस्तैदी से चौकस थे, और उनको सख्त हिदायत थी कि केवल वे ही व्यक्ति इस सम्मेलन में प्रवेश करें जिनके पास अनुमति पत्र हो, जिस व्यक्तित्व के बारे में सन्देह हो उसे वही पर रोक लिया जाय, और नव तक अन्दर जाने की अनुमति न दी जाय, जब तक कि वावा स्वयं जाच पड़ताल न कर लें। इस सबै में सामने वाला व्यक्ति चाहे कितने ही उच्च कोटि का हो, चाहे कितना ही गरिमा-

पूर्ण हो, प्रयत्न यही किया गया था कि सभी के पास परिचय पत्र हो जो इसमें भाग लेने वाले थे। कई तात्रिक तो प्रात ही आये थे, फिर भी व्यवस्था में किसी प्रकार की न्यूनता नहीं थी, और सभी को परिचय पत्र जाच पड़ताल करके दे दिए गए थे।

सम्मेलन में लगभग ४०० तात्रिक और माध्यिक इकट्ठे थे और वास्तव में ही वे सभी एक दूसरे से बढ़-चढ़कर थे, कोई किसी से अपने आपको न्यून नहीं समझ रहा था। सभी विशिष्ट साधनाओं से सम्पन्न थे और अपने क्षेत्र में दक्ष तथा लब्ध-प्रतिष्ठ व्यक्तित्व से सम्पन्न थे।

मैंने धार्मिक ग्रन्थों में ही शिवजी की वारात के बारे में पढ़ा था, परन्तु इस सम्मेलन को देख कर मैंने अनुमान लगा लिया कि शिवजी की वारात में किस प्रकार के व्यक्ति सम्मिलित हुए होंगे। सम्मेलन में ४०० से कुछ ज्यादा ही साधु, योगी, अधोरी, तात्रिक आदि थे और सभी की वेषभूषा अपने आप में विचित्र थी।

अधिकाश लगोटी लगाए हुए थे और पूरे शरीर पर भूत मली हुई थी। कुछ की जटाए इतनी लम्बी थी कि चलने पर पीछे जमीन पर घिसटती थी, कुछ ने तो लोहे की लगोट ही लगा रखी थी। सम्मेलन में सौ से ऊपर साधु ऐसे भी थे जो सर्वथा निर्वस्त्र थे। कुछ तात्रिकों ने हड्डियों की माला पहन रखी थी। एक तात्रिक ने तो गले में ११ नरमुण्डों की माला ही पहनी हुई थी। किसी-किसी तात्रिक के गले में विचित्र मणियों की माला थी तो कुछ साधु इतने अधिक कपड़े पहने हुए थे कि उनका सारा शरीर उन कपड़ों में छिप गया था। एक साधु ने कमर पर नरमुण्डों की कर-घनी वाघ रखी थी।

इसमें कुछ भैरविया भी थी, सभवत उनकी सख्ता १५ से २० के बीच में थी। इसमें कुछ तो पूर्णत वृद्ध दिखाई दे रही थी पर एक दो भैरविया ऐसी भी थी जो अत्यन्त सुन्दर और तेजस्वी थी और उनकी आयु २० से २५ वर्ष के बीच होगी, भुजे आश्चर्य था कि इस छोटी आयु में उन्होंने किस प्रकार से इतनी कठिन क्रियाओं को सम्पन्न कर लिया होगा, परन्तु तात्रिकों की गति विचित्र है, हो सकता है उन्होंने कुछ क्रियाओं के भाष्यम से अपनी आयु को वाघ रखा हो और अपने यौवन को अक्षुण्ण बनाए रखा हो।

कुछ हठ योगी भी थे। एक हठ योगी का पाव इतना अधिक फूला हुआ था कि उसका धेरा छ फुट से ज्यादा ही होगा। कुछ हठ योगी विशालकाय थे, एक दो हठ योगी के हाथ लकड़ी की तरह ढूँढ हो गए थे। इस सम्मेलन में काफी अधोरी भी थे जो कि पूर्णत निर्वस्त्र थे और देखने में भीमकाय रक्षस की तरह अनुभव हो रहे थे, उनके शरीर पर जरूरत से ज्यादा मैल जमा हुआ था और जब वे पास से गुजरते तो दुर्गन्ध का एक भम्भका सा अनुभव होता, परन्तु वे इन सबसे देखबर थे और अपनी ही धून में मस्त थे।

इनमें कुछ विशिष्ट वाम मार्गी तात्रिक भी थे जिनको यदि सामान्य जन देखते, तो वेहोश हो जाय। उनका शरीर अपने आप में भयकर था, साल आँचें, डरावना

चेहरा, और भीमकाय शरीर, ऐसा लग रहा था जैसे वे राक्षस हो। उनको देखकर मन में भय का सा सचार होता था और रोगटे खड़े हो जाते थे।

रवामी अभ्यानन्द जरूरत से ज्यादा व्यस्त थे और प्रत्येक को यथोचित स्वगत दे रहे थे, भूर्भुआ बाबा वराबर इस बात पर नजर रखे हुए थे कि किसी भी साधक के मन को ठेस न पहुंचे और वे उपयुक्त स्थान ग्रहण कर लें।

इसमें आशा से अधिक तात्रिकों और मात्रिकों ने भाग लिया और जिनके बारे में हम आश्चर्य के साथ सुनते रहते थे। उनको प्रत्यक्ष देखकर एक भयमिश्रित आश्चर्य हो रहा था। वास्तव में यह भूर्भुआ बाबा का ही कमाल था कि वे इस प्रकार के विशिष्ट साधकों को एक स्थान पर एकत्र कर पाए।

सम्मेलन में मा कृपाली भैरवी, आनन्दा भैरवी, पिशाच सिद्धियों की स्वामिनी देवुल भैरवी आदि के भाग लेने से सम्मेलन में विशेष प्रसन्नता अनुभव हो रही थी। इसके साथ-ही-साथ पगला बाबा, स्वामी देवहुर बाबा, कृपालुस्वामी, बाबा भैरवनाथ, खर्परानन्द भारती, स्वामी गिरजानन्द, अघोरी, विरघा स्वामी, त्रिजटा अघोरी, आदि ऐसी विभूतियां थीं, जो कि अपने आप में अन्यतम थीं, जिनका नाम विश्वविष्णात है और तात्रिक लोगों के लिए ये व्यक्तित्व स्मरणीय हैं। उन्होंने इस क्षेत्र में अद्भुत सिद्धिया प्राप्त की हैं, हमारी पीढ़ी का यह सौभाग्य है कि हम लोगों के बीच इस प्रकार के विशिष्ट व्यक्तित्व हैं, जिन्होंने अपने ज्ञान से इस पीढ़ी को ऊची उठाने में सहायता दी है, विशेष रूप से मैं रोमाचित था कि अपने जीवन में मैं इन सारी विभूतियों को एक स्थान पर देख सका अन्यथा यदि मेरा पूरा जीवन भी बीत जाता तब भी मैं इन सारी विभूतियों के दर्शन नहीं कर सकता था। मैं ही नहीं मेरे जैसे अधिकाश तात्रिक रोमाचित थे, आलादित थे, आश्चर्यचकित थे।

सम्मेलन के प्रारम्भ में भूर्भुआ बाबा ने विशिष्ट वाणी में इस सम्मेलन के बारे में बताया और अत्यधिक प्रसन्नता अनुभव की कि उनके कहने से सभी साधक एक स्थान पर एकत्र हुए। उन्होंने बताया कि पिछले पांच हजार वर्षों में यह पहला अवसर है जबकि इस प्रकार का सम्मेलन हो सका है। कुछ साधक सिद्धाश्रम से भी आये हैं यह मेरे लिए अत्यन्त गीरवपूर्ण उपलब्धि है।

उन्होंने आगन्तुक तात्रिकों, मात्रिकों, योशियों, साधकों, हठयोगियों और अघोरियों से विनब्रतापूर्वक निवेदन किया कि वे शान्त चित्त से इस सम्मेलन को सफल बनाने में योगदान दें। सभी साधक अपने आप में अन्यतम हैं इसलिए परस्पर वादविवाद हो जाना स्वाभाविक है, पर इस प्रकार वादविवाद से व्यर्थ में समस्याएं पैदा होगी, एक दूसरे पर तात्रिक-प्रहार होगे और व्यर्थ में ही शक्ति का अपव्यय होगा, अतः जहां तक हो सके वे अपने क्रोध को सीमित रखें और एक दूसरे को ज्ञान देने में उदारता बरतें।

उन्होंने देश की परिस्थिति पर भी सक्षिप्त प्रकाश डाला, साथ ही उन्होंने दुष्क

प्रकट किया कि पिछले ३०० वर्षों का समय तत्र के क्षेत्र में अन्धकार-नुग ही कहा जाएगा, जबकि इस विद्या पर भीषण प्रहार हुए हैं और इस साधना को केवल मान्मारक-विद्या मान ली गई है। तत्र का नाम लेते ही जन साधारण भयभीत हो जाता है, उनके मानस में यह धारणा बन गई है कि तात्त्विक केवल किसी को मार सकता है या दुख पहुंचा सकता है। उनकी धारणा के अनुसार मोहन वशीकरण, उच्चाटन आदि क्रियाएँ ही तत्र हैं, जबकि तत्र इससे कहो ऊचे स्थान पर स्थित है और इससे पूरे विश्व का कल्याण हो सकता है।

यह विद्या हमारे पूर्वजों की धारी है तथा इस क्षेत्र में पूरा विश्व भारत की तरफ ताक रहा है। उनको इस क्षेत्र में जब भी ज्ञान मिलेगा तो वह भारत की तरफ से ही मिल सकता है, पर धीरे-धीरे नकली तात्त्विक समाज में घुस गए हैं जिन्होंने चमत्कार दिखाने को ही तत्र मान लिया है और इस प्रकार वे जहां तत्र का अहित कर रहे हैं वहीं दूसरी ओर जन साधारण को गुमराह भी कर रहे हैं।

ऐसी स्थिति में तात्त्विक यदि अन्तर्मुखी बन कर रह जाता है तो यह बहुत बड़ी भूल है। वे देश के निर्माण में रचनात्मक योगदान दे सकते हैं, इस क्षेत्र की जो विशिष्ट क्रियाएँ हैं वे धीरे-धीरे लुप्त होती जा रही हैं, जल-भग्नन, वायु भग्नन, परकाय प्रवेश, आदि क्रियाएँ कुछ साधकों के पास ही रह गई हैं और वे साधक जनमानस से इतने दूर हो गए हैं कि उनसे ये विद्याएँ प्राप्त करना संभव ही नहीं रहा है, उनकी काया के साथ-ही-साथ इस प्रकार की विद्याएँ भी समाप्त हो जाएँगी और हमारा देश एक बहुत बड़ी निधि से बचित हो जाएगा।

देश की सेवा केवल राजनीति के माध्यम से ही संभव नहीं है, अपितु कहीं ऐसे क्षेत्र भी हैं जिनके भाष्यम से देश सेवा और जन सेवा हो सकती है, इस प्रकार के क्षेत्रों में तथ और मन्त्र सर्वोपरि है, जब तक इन विद्याओं के प्रति जो भ्रामक धारणाएँ जनमानस में फैली हुई हैं वे दूर नहीं होगी तथ तक इन साधनाओं के प्रति आस्था जनमानस में नहीं हो सकेगी।

उन्होंने तात्त्विकों, भारिकों और साधकों को आह्वान किया कि वे जनसाधारण से अपने आपको सम्पर्कित करें और अपने ज्ञान को इस प्रकार से समाज में वितरित करें जिससे कि सामान्य साधक भी लाभ उठा सकें।

भूरुआ बाबा के बारे में सभी लोग श्रद्धानन्द हैं क्योंकि उनका व्यक्तित्व अपने आप में विशिष्ट रहा है और उन्होंने अपने जीवन में इस क्षेत्र में अद्वितीय कार्य किया है। बाबा के भाषण को सभी लोग शान्त चित्त से सुन रहे थे। एक-दो अधोरियों ने इसका प्रतिवाद भी किया और वीच में कुछ कहने के लिए व्यग्र भी दिखाई दिए, पर पास के साधकों द्वारा उनको जवदेस्ती विठा दिया गया जिससे वे और ज्यादा बिफर गये और भाषण में ऋषि प्रदर्शन हेतु खड़े रहे।

भाषण की समाप्ति के साथ बाबा ने कहा कि सम्मेलन के लिए सभापति चुना जाय और ऐसे व्यक्ति को सभापति बनाया जाय जो कि किसी एक ही क्षेत्र में

निष्णात न हो अपितु उसकी गति सभी प्रकार की विद्याओं में समान रूप से हो। तांत्रिक और मार्गिक समाज में वह बृद्ध नहीं कहलाता जो कि आयु से बृद्ध होता है अपितु वह बृद्ध कहलाता है जो कि शान बृद्ध होता है।

एक साधक ने भूर्भुआ वावा से ही निवेदन किया कि आप अध्यक्ष पद को सम्माल लें पर वह तक जो दो अधोरी सम्मेलन में यहे थे उन्होंने इसका रटकर विरोध किया। उन्होंने कहा कि भूर्भुआ केवल तात्रिक हैं मार्गिक नहीं हैं, अतः मार्गिकों की जिज्ञासाओं का समाधान वह नहीं कर सकते।

भूर्भुआ वावा ने स्वयं इस बात का अनुमोदन किया और वे एक तरफ वैठ गए। स्वामी कृपाचार्य ने मा कृपालु भैरवी का नाम अध्यक्ष पद के लिए रखा पर त्रिजटा अधोरी ने इसका विरोध किया, क्योंकि वह केवल भैरवी है और अन्य कसौ-टियों पर धरी नहीं उत्तर सकती, उन्होंने चैलेज भी दिया कि यदि भैरवी भेरी साधना का सामना कर लें तो मैं उन्हे अध्यक्ष मान सकता हूँ, पर मा भैरवी ने इस चैलेज को स्वीकार नहीं किया।

कुछ साधकों ने पगला वावा से निवेदन किया, पर उन्होंने स्वयं इस तथ्य को स्वीकार किया कि मैं तात्रिक अवश्य हूँ पर वाममार्गी साधना का अभ्यास मैंने नहीं किया है बत, मैं अध्यक्ष पद के लिए उपयुक्त नहीं हो सकता। इसके बाद कुछ अन्य नामों पर भी चर्चा हुई, पर अन्य लोगों ने उनका भी विरोध किया और सभा में एक घटे भर की इस बहस में कोई निर्णय नहीं हो सका कि कौन व्यक्ति इस सभा का सचालन करे।

कुछ अधोरियों ने हठ योगी स्वामी प्रेत वावा का नाम सुझाया तो एक तात्रिक ने यहे होकर प्रेत वावा को चुनीती दे दी कि यदि वह मेरी कृत्या का सामना कर लें तो मैं उनकी सभापति स्वीकार कर सकता हूँ, साथ-ही-साथ उन्होंने यह भी चता दिया कि मैंने सहारिणी कृत्या सिद्ध कर रखी है।

कृत्या अपने आप में पूर्णत मारक प्रयोग है और कहते हैं कि जब शकर ने दक्ष का यज्ञ विघ्वस किया था तो उन्होंने कृत्या का ही सहारा लिया था। ऊचे-से-ऊचा तात्रिक भी कृत्या के प्रयोग से घबराता है और उसका सामना नहीं करता, क्योंकि कृत्या प्रयोग के बाद सामने वाला साधक एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकता। कृत्या स्वयं उस साधक को समाप्त कर देती है, दक्ष अपने आप में विशिष्ट शृष्टि एवं अन्यतम तात्रिक थे, परन्तु वे भी कृत्या का सामना नहीं कर पाये थे, यद्यपि उन्होंने यज्ञ को बचाने में अपनी सारी सिद्धियों का प्रयोग कर लिया था पर वे सिद्धिया कृत्या के सामने निरुपाय हो गई थी।

मैंने सुन रखा था कि सासार में कुछ तात्रिक ही ऐसे जीवित हैं जो कृत्या सिद्ध करना जानते हैं या सिद्ध करके उसका प्रयोग कर सकते हैं। जब उन तात्रिक ने कृत्या का नाम लिया तो मैं चौकन्ना हो गया। वास्तव में ही उस समय उनका बेहरा लाल भूषका हो रहा था और वे किसी भी समय प्रयोग करने में आमादा थे,

उनके चेहरे पर कठोरता और दृढ़ता स्पष्ट दिखाई दे रही थी ।

यदि कृत्या का प्रयोग होता तो सामने वाला व्यक्ति ही नहीं आसपास के लोग भी हताहत होते, फिर भले ही वे कितने ही बड़े तात्त्विक या साधक हों । शूर्मुआ बाबा ने इस खतरे को एक क्षण में भाष लिया और उन्होंने उस साधक से शान्त रहने की प्रार्थना की और कृत्या का प्रयोग न करने की याचना की ।

कृत्या प्रयोग में भी सहारिणी कृत्या सर्वाधिक उग्र और विनाशकारी होती है । इसके बारे में काफी कुछ पढ़ रखा था, परन्तु ऐसा व्यक्तित्व नहीं मिला था जो कि इस साधना को जानता हो । आज जब उन्हें देखा तो मन में सुखद आश्चर्य भी हुआ कि अभी तक विश्व में कृत्या प्रयोग करने वाले साधक जीवित हैं ।

कृत्या का समाधान कृत्या से ही सम्भव है । साधक यदि सहारिणी कृत्या का प्रयोग करे तो सामने वाले का बचाव तभी सम्भव है जबकि वह सहारिणी कृत्या का प्रयोग जानता हो और इस प्रयोग को खेचरी कृत्या के माध्यम से नष्ट कर सकता हो । जैसा कि मैंने सुन रखा था इस प्रकार के साधक बहुत कम रहे हैं ।

पगला बाबा ने क्षमा याचना की और उन्होंने अध्यक्ष प्रद स्वीकार करने में असमर्थता प्रकट की, साथ ही उन्होंने निवेदन भी किया कि कृत्या का प्रयोग इस सम्मेलन में न करें, अन्यथा काफी विघ्नस और सहार हो जाएगा । पगला बाबा ने कृत्या प्रयोग के बारे में अनभिज्ञता भी स्वीकार की ।

बाद में मुझे मालूम हुआ कि पगला बाबा को चैलेंज देने वाले धूर्जटा अधोरी थे । धूर्जटा अधोरी के बारे में बहुत कुछ सुन रखा था । यह भी सुन रखा था कि वे नई सृष्टि रचना विधि भी जानते हैं । पुराणों में पढ़ा था कि विश्वामित्र ने ब्रह्मा के कार्य से असन्तुष्ट होकर नई सृष्टि-रचना आरम्भ कर दी थी, इससे पूरे देव समाज में खलबली भव गई थी और जब देवताओं और ऋषियों ने विश्वामित्र से प्रार्थना की, तभी उन्होंने नवीन सृष्टि रचना कार्य बन्द किया था ।

मैंने धूर्जटा अधोरी के बारे में बहुत पहले सुन रखा था । तब मन में यह साध थी कि शायद कभी इस विराटकाय व्यक्तित्व के दर्शन होंगे, पर आज जब मैंने उन को देखा तो आश्चर्यचकित रह गया । यद्यपि कृत्या के प्रयोग को जानने वाले उस सम्मेलन में और भी साधक थे जिनमें त्रिजटा अधोरी, देवहर बाबा, आदि के नाम उल्लेखनीय हैं, पर वे शान्त रूप में बैठे रहे ।

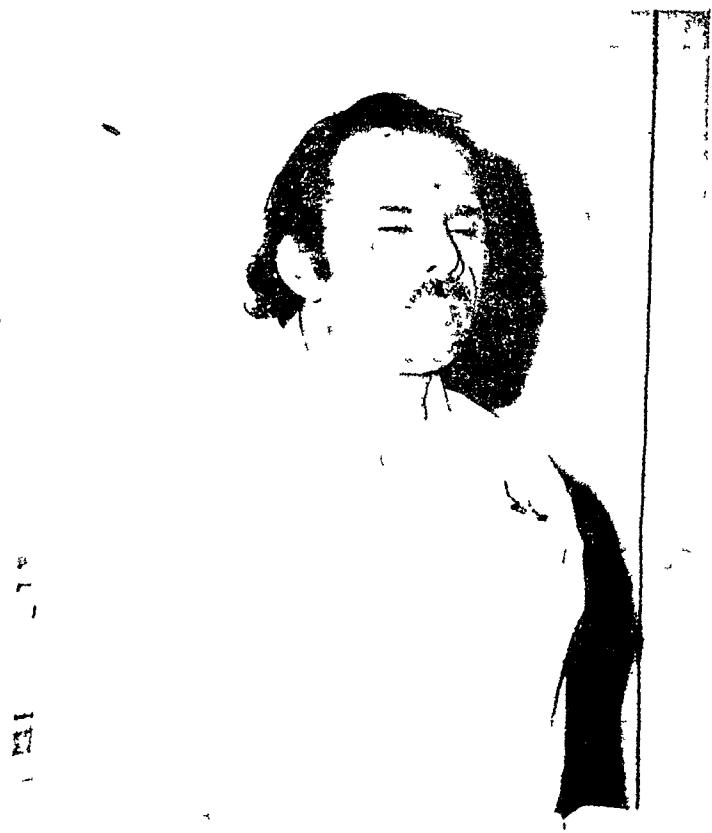
कुछ-कुछ ऐसा अनुभव होने लगा था कि यह सम्मेलन शायद ही पार पड़े, जबकि इसके श्रीगणेश में ही बाधाए आ रही हैं । यह तो भेड़की को एक तराजू पर रखकर तोलना था । वास्तव में ही इन साधकों को और उनके अह को सन्तुष्ट करना अत्यन्त कठिन था । क्योंकि सभी साधक अपने आप में विशिष्ट व्यक्तित्व साधनाओं से सपन्न थे और प्रत्येक का अह अपने आप में प्रबल था । कोई भी किसी से दबने वाला नहीं था, कोई भी किसी को अपने से उच्च मानने के लिए तैयार नहीं था ।

इस हो-हूल्ले में दो-तीन नाम और सुझाये गए, परन्तु कुछ लोगों ने उनका

प्रबल विरोध किया और चैलेज भी दिया, फलस्वरूप उनके नामों पर पूरी तरह से विचार नहीं हो सका।

एक राय यह भी बनी कि इस सम्मेलन में कोई भी सभापति न बने और सभी अपने आपको सभापति ही मानकर कार्य आगे बढ़ावें। परन्तु कुछ साधकों ने इसका प्रबल प्रतिरोध किया। उनका आग्रह था कि बिना सभापति के सचालन सही रूप में नहीं हो सकेगा और सभी अपने तरीके से बोलेंगे जिससे एक बात दूसरा नहीं सुन सकेगा और इस प्रकार उन पर सही प्रकार से नियन्त्रण नहीं हो सकेगा।

व्यवस्था और मर्यादा बनाये रखने के लिए यह आवश्यक है कि सभापति का



डॉ. भीमाशंकर सांभाल के समय

चुनाव हो। उनका तर्क यह भी था कि यदि हम सभापति के नाम पर एकमत नहीं हो सकते तो अन्य विषयों पर एकमत कैसे हो सकेंगे?

इस सारे वाद-विवाद में दोपहर का एक बज गया तब मध्याह्न-साधना का समय अनुभव कर भूर्भुआ वावा ने सुझाव रखा कि कुछ साधक नियमित रूप से मध्याह्न-साधना करते हैं, अत यह बैठक इस समय स्थगित की जाती है और चार बजे जब हम सब एकत्र हो तब इस विषय पर पुन विचार कर लें और सभापति का चयन हो जाय।

उन्होंने यह भी सुझाव दिया कि यदि सभापति के नाम पर सभी एकमत न हो सकें तो प्रतियोगिता हो जाय और जो अपने आपको सर्वश्रेष्ठ सिद्ध करे वह सामने आवे और अन्य साधकों के चैलेंज को स्वीकार कर अपनी श्रेष्ठता सिद्ध करे जिससे कि उसे सभापति पद दिया जाएँ।

भूर्भुआ वावा के इस सुझाव के साथ ही प्रात कालीन बैठक हो-हल्ले के साथ स्थगित हो गई। मैं आश्चर्यचकित भी था और दु खी भी था। आश्चर्यचकित इसलिए था कि इस सम्मेलन में विभिन्न साधनाओं से सम्पन्न साधक हैं, किसी एक ही विषय का सम्मेलन हो तो श्रेष्ठता ज्ञात की जा सकती है पर जब विभिन्न साधनाओं से सम्पन्न साधक हो तो सर्वोपरि व्यक्ति का चयन कठिन हो जाता है। क्योंकि जो तात्रिक क्षेत्र में सर्वोपरि हो वह मन्त्र के क्षेत्र में भी श्रेष्ठ हो यह आवश्यक नहीं है, ग्रा यदि कोई व्यक्ति तत्र और मन्त्र के क्षेत्र में सर्वोपरि हो तो वह गोरक्ष साधना या अधोर साधना में भी निष्णात हो यह सम्भव नहीं है। ये सभी साधनाएं एक-दूसरे से सर्वथा विपरीत हैं और अपने आप में कष्टकर हैं, अत इन सभी क्षेत्रों में एक ही व्यक्ति निष्णात हो ऐसा कम देखने में आया है। यद्यपि इस पृथ्वी पर असम्भव नाम की कोई वस्तु नहीं है, फिर भी प्रात कालीन बैठक में जिस प्रकार से चैलेंज दिये जा रहे थे और चैलेंज आते ही सामने वाला व्यक्ति जिस प्रकार से निस्तेज हो जाता था उसको देखते हुए सभी क्षेत्रों में निष्णात या विशिष्ट व्यक्तित्व सामने आ जाय ऐसा असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य लग रहा था।

गोष्ठी के बाद भी सभी साधक उपर थे और कुछ तात्रिक और वाममार्गी साधक तो अत्यन्त ही क्रोध की मुद्रा में थे कि उनके रहते हुए अन्य साधना में निष्णात व्यक्ति सभापति बन जाय ऐसा कैसे सम्भव है? उन्होंने यह भी भत स्पष्ट कर दिया कि यदि हम पर किसी व्यक्ति को सभापति के रूप में घोषा गया तो हम किसी भी प्रकार का प्रयोग उसके विरुद्ध करने में हिचकिचाएँगे नहीं, या तो वह उस प्रयोग से अपने आपको बचाए या समाप्त हो, दो में से एक ही रास्ता हो सकता है, इस प्रश्न पर क्राफी गरमागरमी थी और लोग काफी क्रोध की मुद्रा में थे।

इस मध्याह्न-विश्राम में मेरी पत्रकारिता प्रवृत्ति जाग गई थी और मैंने कुछ विशिष्ट साधकों से जिज्ञासा भी की थी कि क्या कोई ऐसा व्यक्तित्व सामने आ जाएगा जो कि निर्विवाद रूप से श्रेष्ठ हो तो मैंने पाया कि कोई भी अपने आप में स्पष्ट नहीं

था, परन्तु सभी इस भावना में अवश्य थे कि जो भी समाप्ति बनेगा उसे कठिन परीक्षा में से अवश्य ही गुजरना पड़ेगा। यह भी स्पष्ट था कि समाप्ति वही हो सकेगा जो सभी विषयों में श्रेष्ठ होगा और जिसकी सभी क्षेत्रों में गति होगी, इस वाद-विवाद में किसी की मृत्यु हो जाए ऐसा अनुभव नहीं था।

मैंने भूर्भुआ बाबा से भी यह जिज्ञासा रखी तो वे शान्तचित्त थे। उन्होंने कहा कि इस प्रकार के सम्मेलन में ऐसा सब कुछ होना स्वाभाविक है। सभी अपने-अपने क्षेत्रों में अद्वितीय हैं और वे किसी अन्य को अपने ऊपर सहन हीं हावी नहीं होने देंगे, किर भी मुझे विश्वास है कि सायकालीन बैठक में अवश्य ही समाप्ति की समस्या का समाधान हो सकेगा।

मैं इस अवसर को हाथ से नहीं जाने देना चाहता था, बत अधिक-से-अधिक हठयोगियों और तात्रिकों से मिलना चाहता था और उनसे जानना चाहता था। मैंने यह अनुभव किया कि वास्तव में सभी व्यक्तित्व अपने-अपने क्षेत्र में अद्वितीय थे और उनके पास साधनाओं का, क्रियाओं का और विशिष्ट ज्ञान का भण्डार था। उन्होंने अपना पूरा जीवन इस कार्य में लगा दिया था। जो भी व्यक्तित्व मेरे सामने आता वह अपने आपमें अप्रतिम अनुभव होता, कोई भी किसी से किसी प्रकार से न्यून नहीं था।

चार बजे सायकालीन बैठक प्रारम्भ हुई। सभी के चेहरे तनावपूर्ण थे, सभी के चेहरे पर उत्सुकता थी और सभी अपनी-अपनी कलाओं को, विद्याओं को, साधनाओं को व्यक्त करने के लिए उत्ताप्त थे।

सम्मेलन के प्रारम्भ में भूर्भुआ बाबा ने दुख प्रकट किया कि हम प्रातः-कालीन बैठक में किसी एक नाम पर सहमत नहीं हो सके यह स्वाभाविक था, क्योंकि यह सम्मेलन केवल तात्रिक सम्मेलन ही नहीं है, अपितु इसमें अन्य विद्याओं के भी श्रेष्ठतम जानकार हैं, अत इस प्रकार के मतभेद स्वाभाविक हैं, किर भी मैं आप सब लोगों से निवेदन करता हूँ कि वे किसी एक व्यक्ति के नाम पर सहमत हो और ऐसी प्रक्रिया अपनाई जाय जिससे कि समाप्ति का चयन सही रूप में हो सके।

उन्होंने एक प्रक्रिया का सुझाव भी दिया कि सम्मेलन में कोई विशिष्ट व्यक्ति कोई ऐसा नाम सुझावे जो सभी क्षेत्रों में निष्णात हो। यदि उनके ध्यान में ऐसा व्यक्तित्व हो तो उनका नाम सभा के सामने रखे और सभा उस पर विचार करे। इसके लिए सभी स्वतन्त्र हैं और वे अपने तरीके से चुनौती दे सकते हैं, परन्तु यदि सामने वाला व्यक्ति चुनौती स्वीकार न करे तो व्यर्थ में उस पर प्रयोग न करें, अन्यथा कुछ भी अघटित घटना घटित हो सकती है।

भूर्भुआ बाबा के बैठते ही कई लोग एक साथ उठ खड़े हुए और कई नामों को छवनि कानों में आई, परन्तु हो-हल्ला कुछ इतना अधिक हो रहा था कि कुछ भी सुनाई नहीं दे रहा था। इसी बीच त्रिजटा अधोरी अपने स्थान से उठ खड़े हुए और उन्होंने जोरों से सभी को शान्त रहने की हुकार दी।

उनकी आवाज अपने आप में भीषण थी और कुछ ऐसा अनुभव हुआ कि

जैसे बम फट गया हो । उस ध्वनि में वाकी पारी ध्वनिया दब गई और सभा में एक प्रकार से सल्लाहा-सा छा गया ।

त्रिजटा अधोरी का व्यक्तित्व अपने आप में विशालकाय और अद्भुत था । लम्बा-चौड़ा डीलडौल, भयकर और लाल सुखं आँखें और सारे शरीर पर काले बाल इस प्रकार से आच्छादित थे कि उसको देखकर ही मन में भय का सचार होता था ।

यो भी त्रिजटा अधोरी के बारे में काफी कुछ सुन रखा था कि तात्रिक क्षेत्र में वे सर्वोपरि हैं । उनके पास कुछ ऐसी विशिष्ट सिद्धियाँ हैं जो कि दूसरे तात्रिकों के लिए दुर्लभ हैं, 'मृत सजीवनी तत्र' के वे एकमात्र साधक हैं और इसीलिए उनका नाम तत्र के क्षेत्र में आदर के साथ लिया जाता है ।

उनका व्यक्तित्व अपने आप में विशाल और भयानक था । ऐसा लग रहा था जैसे कोई भीमकाय व्यक्तित्व उठ खड़ा हुआ हो । डडा सिर, उद्धीष्ट उन्नत ललाट, चडी-चडी विशाल रक्तिम आँखें, सिर पर लम्बे बाल और उन बालों की तीन श्रेणियाँ चोटी की तरह गुण्ठी हुई थीं, सम्भवत् इसीलिए उनका नाम त्रिजटा पड़ गया हो । ललाट पर सिन्दूर का बड़ा-सा गोल तिलक और शरीर पर वे व्याघ्रचर्म लपेटे हुए थे ।

त्रिजटा को देखने का यह पहला ही अवसर था, परन्तु कई तात्रिकों के द्वारा इनके बारे में सुन रखा था कि ये पूरे बकरे को एक ही क्षटके में तोड़कर उसका सारा खून पी लेते हैं, यह भी सुना था कि विशालकाय भैसे को ये एक मुष्टिका प्रहा में ही समाप्त कर देते हैं, यह भी सुना था कि ये अत्यन्त क्रोधी हैं और क्रोध में कुएँ भी कर गुजरते हैं, एकान्त प्रिय हैं और किसी दुर्गम पहाड़ी पर भर्वया एकान्तवास करते हैं । यह भी सुना था कि भैरव के ये श्रेष्ठ साधक हैं और तत्र के क्षेत्र में इनका मुकाबला कोई अन्य नहीं कर सकता ।

इसलिये जब उस सभा में खड़े होकर त्रिजटा ने हुकार भरी तो वह हुकार कुछ ऐसी थी जैसे शेर ने तृप्त हुकार ली हो । उनकी आवाज से सारे लोग चुप हो गए और केवल उनकी ही आवाज सभा में गूजती रही ।

उन्होंने कहा कि इस प्रकार समय व्यर्थ में जा रहा है और यदि समय का इसी प्रकार अपव्यय करना है तो फिर मैं पुन अपने स्थान पर जाता हूँ, क्योंकि केवल वादविवाद से कुछ भी हल होना सभव नहीं है । भूर्भुआ वावा के इस कथन से मैं सहमत हूँ कि पृथ्वी में असम्भव नाम का कोई शब्द नहीं है इसलिए सभापति का चयन एक मत से ही जाय तो ज्यादा उचित रहेगा, और यह भी बात सही है कि इस सम्मेलन में सभी विद्यालों के साधक एकत्र हैं, अत उसी व्यक्ति का चयन किया जाए जो इन सभी विद्यालों में निष्णात हो । जहा तक मैं समझता हूँ कि इस प्रकार के वादविवाद से समस्या का समाधान सहज ही सभव नहीं है, पर मेरे दिमाग में एक नाम है और उसके पीछे ठोस कारण है, मैं सभापति पद के लिए श्रीमाली का नाम प्रस्तुत करता हूँ, परन्तु मेरा प्रस्ताव थोपा हुआ नहीं है, इसके पीछे ठोस कारण है, मैंने इस व्यक्तित्व को परखा दीँ, इससे तत्र के क्षेत्र में मत सजीवनी विद्या गम से भीक्षी है । तत्त्वे मैंने भी ज्ञाने

--

कई साधनाए प्राप्त की हैं, जो सामान्य रूप से अगम्य हैं, मेरी राय में इस सम्मेलन के सभापति के रूप में उनका चयन सर्वसम्मत होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं।

त्रिजटा की आवाज समाप्त होते ही चारों तरफ से इतना अधिक कोलाहल मचा कि कुछ भी सुनाई देना सभव नहीं रहा। मैं स्वयं तत्र के क्षेत्र में २० साल से काम कर रहा था और नगर, गाव आदि के अलावा हिमालय के सुदूर स्थानों पर भी भटका था, पर श्रीमाली का नाम सुना ही नहीं था। त्रिजटा के मुह से जब उनका नाम प्रस्तावित हुआ तो मैं स्वयं आश्चर्यचकित रह गया कि यह कौनसा व्यक्तित्व है जिसकी चर्चा अभी तक मेरे कानों में नहीं आई थी। यदि त्रिजटा ने किसी का नाम प्रस्तावित किया है तो वह व्यक्तित्व जरूर अपने आप में अन्यतम होगा।

मेरी तरह सभवत और भी कई साधक आश्चर्यचकित थे और वे श्रीमाली को देखने के लिये उत्सुक थे कि यह कौसा नाम है जिसके पीछे न तो कोई स्वामी है और न कोई बाबा आदि का विशेषण।

भूर्भुआ बाबा ने भी इस प्रस्ताव का अनुमोदन किया। उन्होंने कहा मैं व्यक्तिगत रूप से श्रीमाली जी से परिचित हूँ, यद्यपि मेरा उनका साथ ज्यादा नहीं रहा है, किर भी कुभ पर्व के अवसर पर मैंने जो कुछ देखा है उससे मेरी धारणा बलवती बनी है कि श्रीमाली जी इस पद के लिए सर्वथा योग्य हो सकते हैं।

भूर्भुआ बाबा के बैठते ही त्रिजटा अधोरी ने अपने पास बैठे हुए एक व्यक्ति को उसका हाथ पकड़कर सभा में खड़ा कर दिया। कई आखें उनकी तरफ केन्द्रित हो गईं। मैं सहज ही विश्वास नहीं कर सका कि जो व्यक्ति खड़ा है वह इतना बड़ा साधक, तात्रिक या मात्रिक हो सकता है। मुझे किसी भी कोने से यह व्यक्तित्व असाधारण नहीं लगा। न तो उसकी विचित्र वेशभूषा थी, न विशालकाय डील-डौल, और न कुछ ऐसा ही लग रहा था जिससे कि मेरी आत्मा इस तथ्य को सभव मान ले कि यह व्यक्तित्व असाधारण है।

लम्बा और ऊचा कद, उन्नत ललाट, छोटी पर पैनी आँखें, और चेहरे पर पूर्ण बात्मविश्वास की झलक। शरीर पर धोती और कुर्ता तथा करीने से बाल सवारे हुए यह व्यक्तित्व जो त्रिजटा के पास खड़ा था वह तात्रिक की अपेक्षा गृहस्थ ज्यादा लग था। पहली बार मैंने जब उन्हे देखा तो मैं आश्चर्यचकित था कि इस सम्मेलन में इस गृहस्थ को कैसे प्रवेश की स्वीकृति दे दी है, परन्तु जब इस व्यक्तित्व को भूर्भुआ बाबा के द्वारा अनुमोदित सुना तो कुछ विश्वास करना पड़ा कि यह व्यक्तित्व अपने आप में असाधारण हो सकता है।

परन्तु इस बीच तीन-चार अधोरी एक साथ उठ खड़े हुए और उन्होंने प्रबल प्रतिवाद किया। उनमें से एक अधोरी अत्यन्त ही विशालकाय और डरावनी मुख मुद्रा से युक्त था और उसके हाथ में खप्पर था जिसमें कुछ बोटिया भरी हुई थी। वह बीच-बीच में उनको चबाता भी जाता था। बोलते समय उसके मुह से थूक उछलता था और आखें इतनी डरावनी भी कि सहज ही उन आखों से आखें मिलाने की हिम्मत नहीं

हो रही थी । बाद मे मुझे ज्ञात हुआ कि उसका नाम भैरुआ अधोरी था ।

भैरुआ अधोरी ने जोरो से एक बात का प्रतिवाद किया और कहा कि मैंने श्रीमाली का नाम आज तक नहीं सुना । मुझे यह व्यक्ति कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा है । सबसे पहले अधोर पन्थ की तरफ से मैं चैलेन्ज दे रहा हूँ और यदि यह मेरा चैलेन्ज स्वीकार कर आधात सहन कर लेगा तभी मैं इसको अपना सभापति स्वीकार करूँगा ।

अभी भैरुआ अधोरी अपनी बात समाप्त कर ही नहीं पाया था कि सभा के पीछे की पक्कित से एक साधु उठ खड़ा हुआ जिसके पूरे शरीर पर भूषित मली हुई थी और सिर की जटाएँ इतनी लम्बी थीं कि चलने पर जमीन पर घिसटती थीं, आखें भयकर और चेहरे पर कूरता स्पष्ट रूप से झलक रही थीं, उसने छूटते ही गालियों की बौछार शुरू कर दी और कहा कि मेरे जीते जी अन्य कोई सभापति बनने का अधिकारी नहीं हो सकता, मैंने कृत्या सिद्ध की है और मेरी कृत्या का जो समापन कर देगा वहीं सभापति बन सकेगा, अन्यथा मैं उसको खड़े-खड़े ही राख की ढेरी बना दूगा । श्रीमाली क्या है ? किस खेत की मूली है ? यह अपने आपको समझता क्या है और इसके साथ-ही-साथ उसके मुह से गालियों की बौछार इस भीषण वेग से हो रही थी कि सारी सभा मे सन्नाटा छा गया ।

मेरी आखें एक बार उस बाबा को देख रही थीं और दूसरी बार श्रीमाली को परख रही थीं, पर मैंने देखा कि उनके चेहरे पर किसी प्रकार की कोई शिक्कन या भय की रेखा तक नहीं थीं, अपितु वहां पर एक आत्मविश्वास की झलक दिखाई दे रही थीं । मैंने यह भी अनुभव किया कि इन दोनों व्यक्तियों के सामने किसी अन्य तात्रिक को बोलने की हिम्मत नहीं हो रही थीं, क्योंकि अभी-अभी जो बाबा उठ खड़े हुए थे वे कपाली बाबा थे और यह सुना था कि इन्होंने चौंसठ कृत्याएँ सिद्ध कर रखी हैं और उनका प्रयोग किसी भी क्षण करने मे समर्थ हैं, अत दूसरे तात्रिक स्वभावत ही कपाली बाबा से घबराते थे और यदि कुछ अन्य तात्रिकों ने कृत्या प्रयोग सीखी भी होगी तो उन्होंने एक या दो कृत्या से ज्यादा सिद्ध नहीं की होगी ।

त्रिजटा उठ खड़ा हुआ । क्रोध से उसका चेहरा तमतमाया हुआ था । उसने कपाली बाबा तथा भैरुआ अधोरी के चैलेन्ज को स्वीकार करते हुए कहा कि कपाली बाबा का चैलेन्ज मैं तो स्वीकार करने मे समर्थ नहीं हूँ परन्तु श्रीमाली अवश्य ही चैलेन्ज को स्वीकार करेंगे और समुचित उत्तर देंगे । मुझे उन पर और उनके ज्ञान पर पूरा भरोसा है । मुझे यह भी ध्यान है कि उन्होंने मन्त्र के क्षेत्र मे सर्वोच्चता प्राप्त की है और वे विश्वविद्यात योगीराज सच्चिदानन्द के प्रिय शिष्य हैं, साथ-ही-साथ निखिल-श्वरानन्द के रूप मे उन्होंने सभी प्रकार की कृत्याएँ सिद्ध की हैं और इस नाम से सभी तात्रिक समुदाय परिचित हैं, इन्होंने अपना नाम गृहस्थ मे जाने पर बदला है ।

भूर्भुआ बाबा ने भी इस समस्या का निराकरण जल्दी-से-जल्दी हल करने के लिए प्रार्थना की, और उन्होंने उपाय सुझाया कि मन्त्र पर श्रीमाली जी खड़े हो जाते हैं और आप मे से तीन या पाच साधक उनको चैलेन्ज देकर उनकी परीक्षा ले सकते

हैं। ऐसा कहते-कहते भूमुआ बाबा ने श्रीमाली जी का हाथ पकड़कर उन्हे मच पर लाकर खड़ा कर दिया।

इस बीच अधोरियों और तात्रिकों के बीच काफी गहमा-गहमी चल रही थी, परन्तु जब उन्हें यह ज्ञात हुआ कि श्रीमाली जी का पूर्व नाम निखिलेश्वरानन्द ही था तो कई साधक शान्त हो गये, क्योंकि इस नाम से वे पूर्णत परिचित थे और उनकी सिद्धियों के बारे में भी उन्होंने काफी कुछ सुन रखा था। मा कृपाली भैरवी यह कहते हुए सुनी गई कि इस सभा में अब इनसे बढ़कर और कोई साधक नहीं है, इनका सामना जो भी करेगा वह व्यर्थ में अपना अपमान ही कराएगा।

अधोरियों ने तथा तात्रिकों ने खडे होकर एक स्वर से कहा कि हमारी तरफ से कपाली बाबा नियत हैं और सभापति का चयन अब इन दोनों में से ही होना है। वे दोनों परस्पर अपनी सिद्धियों के माध्यम से निर्णय कर लें कि कौन सर्वश्रेष्ठ है? क्योंकि हमारी राय में कपाली बाबा के समान ऊचा और श्रेष्ठ तात्रिक और कोई नहीं है।

भैरुआ अधोरी ने भी इसी तथ्य की पुष्टि की कि कपाली बाबा और श्रीमाली जी में परस्पर संघर्ष हो जाय और इन दोनों में जो जीत जाएगा वही इस सभा का सभापति बन सकेगा।

तब तक कपाली बाबा उठ खडे हुए थे और वही खडे-खडे उन्होंने चैलेन्ज दिया कि यह बच्चा है, और मेरे पहले ही प्रहार से समाप्त हो जाएगा, इसलिये इसी को अधिकार देता हूँ कि यह पहले अपना प्रयोग मुक्त पर करे, क्योंकि मेरे प्रयोग करने के बाद तो श्रीमाली नाम का अस्तित्व ही सासार से मिट जाएगा। ऐसा कहते-कहते वे जोरों से हस पड़े। ऐसा लग रहा था जैसे कई फटे हुए बास एक साथ खड़खडा उठे हो।

पहली बार श्रीमाली जी के मुह से घ्वनि निकली। मैंने देखा कि इतने उम्र वातावरण में भी उनका चेहरा शान्त और सरल था। चेहरे पर किसी प्रकार की उग्रता या क्रोध की मात्रा दिखाई नहीं दे रही थी। उन्होंने वही खडे-खडे कपाली बाबा की चुनौती स्वीकार करते हुए कहा कि कपाली बाबा मेरे लिए आदरणीय हैं, परन्तु उनमें जो व्यर्थ का घमण्ड है उसे यदि वे त्याग दें तो ज्यादा उचित रहेगा, क्योंकि उनको मात्र अपनी कृत्याओं पर भरोसा है, पर उनको यह भी ध्यान रखना चाहिए कि दूसरे भी चौसठ कृत्याओं से सम्पन्न हो सकते हैं।

श्रीमाली जी ने साथ-ही-साथ मुस्कराते हुए यह भी कहा कि कपाली बाबा ध्रम में न रहे। उनके प्रहार से या प्रयोग से मेरा कुछ भी नहीं विगड़ेगा। अस्तित्व मिटने की बात तो अलग है, कपाली बाबा के अलावा भी मैं अन्य सभी अधोरियों और तात्रिकों की चुनौती स्वीकार करने के लिए तैयार हूँ। मुझे सभापति पद की इच्छा नहीं है या इस इच्छा के वशीभूत होकर यह सब कुछ नहीं कह रहा हूँ पर व्यर्थ का जो 'अह' कपाली बाबा तथा अन्य तात्रिकों और अधोरियों में है, उस अह की चुनौती स्वीकार करने के लिए मैं इस मच पर उपस्थित हूँ।

इस बीच कई अधोरी उठ खडे हुए और उन्होंने कहा कि हम में कपाली बाबा

सर्वश्रेष्ठ हैं और उनको परास्त करना हमे परास्त करना है। तात्रिको ने भी इसी मत को दोहराया और उन्होंने भी यही कहा कि हमारी तरफ से प्रतिस्पर्धी के रूप में कपाली बाबा हैं।

श्रीमाली जी ने मच पर भूर्भुआ बाबा को एक स्थान पर बिठा दिया और मच के बीच में खड़े हो गए। इधर सभा के मध्य में कपाली बाबा के रूप में विशाल और डरावना व्यक्तित्व खड़ा था। दोनों की आपस में कोई तुलना ही नहीं थी। मच पर एक सीधा सरल सामान्य साधक दिखाई दे रहा था, जबकि सभा के मध्य में कपाली बाबा के रूप में विराटकाय डरावना अह का मूर्तमत रूप।

मैं अभी तक यह निश्चय नहीं कर पा रहा था कि मच पर जो व्यक्ति खड़ा है क्या वह कपाली बाबा का सामना कर सकेगा? यह सुना था कि सहारिणी कृत्या का प्रयोग यदि हिमालय पर भी कर दिया जाय तो वह भी रुई की तरह उड़ जाता है, तो किर यदि कपाली बाबा ने इस प्रकार की कृत्या का प्रयोग इस व्यक्ति पर किया तो यह किस प्रकार से उसका सामना कर सकेगा। यह तो एक क्षण में ही समाप्त हो जाएगा और बास्तव में ही इसका अस्तित्व दिखाई नहीं देगा।

कई तात्रिक मन-ही-मन प्रसन्न थे कि आज त्रिजटा अचोरी को नीचा देखना पड़ेगा, क्योंकि श्रीमाली का नाम उन्होंने ही प्रस्तावित किया था, अत श्रीमाली की पराजय परोक्ष रूप से त्रिजटा की ही पराजय थी, उसके साथ-ही-साथ त्रिजटा ने यह भी स्वीकार कर लिया था कि वह सहारिणी कृत्या का प्रयोग नहीं जानता है अत त्रिजटा की विद्या भी श्रीमाली के लिए सहायक नहीं हो सकेगी।

पूरी सभा का माहोल एक अजीब-सा हो गया था और सभी लोग आत्कित थे कि आज कुछ-न-कुछ होकर रहेगा। अधिकाश लोगों की राय यही थी कि त्रिजटा ने श्रीमाली को बलि का बकरा बना दिया है और कपाली बाबा इसे पहले ही प्रयोग में समाप्त कर देंगे, क्योंकि अधिकाश साधक कपाली बाबा, उनकी सिद्धिया और उनके क्रोध से परिचित थे। उनका सामना करने की हिम्मत किसी में नहीं थी।

तभी श्रीमाली जी ने कपाली बाबा को चैलेन्ज दिया कि आपको जो अह है कि आपके पहले ही प्रयोग से मैं समाप्त हो जाऊंगा, यह आपका भ्रम है, आप वृद्ध हैं अत पहला प्रयोग आप ही मुझ पर करें और यह भी मैं आपको स्पष्ट रूप से कह दूँ कि आपके पास ऊचै-से-ऊचा जो सहारक बस्त्र हो उसका प्रयोग कर दें जिससे कि आपके मन में मलाल न रहे।

इतना सुनना था कि कपाली बाबा क्रोध से लाल बगारे की तरह दहक उठे, और गालियों की बीछार के बीच कहा कि तेरी यह हिम्मत कि मुझे ही चैलेन्ज दे, अगर ऐसी ही बात है तो किर तू सभल।

श्रीमाली जी मच पर खड़े थे। सारी सभा में सन्नाटा-सा छाया हुआ था। उस सभय यदि सभा में सुई भी गिरती तो उसकी आवाज भी स्पष्ट सुनाई देती।

कपाली बाबा ने अपना दाहिना हाथ हवा में लहराया। कल मरम्भों के ताजे

हवा मे से ही प्राप्त किये और मुट्ठी बदकर मत्र पढ़ना शुरू किया । मैंने अपने पास बैठे एक अघोरी से पूछा कि कपाली वावा कौन-सा प्रयोग कर रहे हैं तो उसने कापते हुए कहा कि कपाली वावा 'सहारिणी कृत्या' का प्रयोग कर रहे हैं, और कुछ ही क्षणों के बाद यह कृत्या श्रीमाली को और उसके मच को निश्चय ही जला देगी । इसका सामना करना ऊचे-से-ऊचे तात्रिक और साधक के लिये भी सभव नहीं है ।

तभी जोरो से हुकार की ध्वनि सुनाई दी और ऐसा लगा जैसे भयकर गर्जना हुई हो । वह गर्जना इतनी भीषण थी कि कानों के पद्मं फटने के लिये आतुर थे । मैंने दोनों कानों मे उगलिया डाल दी और देखा कि कपाली वावा क्रोध से लाल हो रहे थे, उनके मुह से मत्र ध्वनि आ रही थी और उनका सारा शरीर लाल सुर्ख हो गया था, तभी उन्होंने अपनी मुट्ठी मे बद सरसो के दाने श्रीमाली की तरफ फेंके और कहा ले, अपनी करनी का फल भुगत ।

सैकड़ो आखें एक वारगी ही मच पर एकत्र हो गईं । मैंने देखा कि श्रीमाली जी कुछ डगमगाये, वे जिस स्थान पर खडे थे उससे तीन-चार कदम लड़खड़ाकर पीछे हटे, परन्तु दूसरे ही क्षण वे सहज हो गये और वापस चार कदम भरकर उसी स्थान पर आकर खडे हो गये जहा पहले खडे थे ।

मैंने कपाली वावा के चेहरे पर देखा तो उनका चेहरा आश्चर्य के साथ कुछ बुझ-सा गया था । उनको यह उम्मीद नहीं थी कि यह साधारण-सा व्यक्ति सहारिणी कृत्या का सामना कर लेगा । शायद श्रीमाली जी के पास कृत्या को नष्ट करने की विधि है और उसी की वजह से इसने कृत्या को समाप्त कर दिया है, उनकी आवो मे किञ्चित भय उत्तर आया था ।

श्रीमाली जी शान्त बने रहे । उन्होंने फिर कपाली वावा को चैलेन्ज दिया और कहा कि मैं आपकी उम्र को देखते हुए आपका सम्मान करता हू, परन्तु रिद्धि और साधना के क्षेत्र मे अभी आप काफी कमजोर हैं, यद्यपि आपने जिस भीषण वेग से कृत्या का प्रयोग किया था, वह अपने आप मे असाधारण था और सहज ही इसके प्रहार को झेलना सभव नहीं था, फिर भी मैं आपके सामने उपस्थित हू, अत आपको फिर अवसर देता हू कि आप अपने मन मे किसी प्रकार की इच्छा न रखें, और यदि इससे भी बड़ी कोई शक्ति आपके पास हो तो आप उसका भी प्रयोग कर दें ।

मा कपाली भैरवी वीच मे उठ खडी हुई, उन्होंने कहा कि न्याय तो हो गया है अब दूसरी बार कपाली वावा को अवसर देने की क्या आवश्यकता है । उन्होंने जो कुछ प्रयोग किया है वह मानवता से हटकर है । इस कृत्या का प्रयोग पाच हजार मील के वेग से एक हजार मन के पत्थर का जो आधात होता है उससे भी कई गुना ज्यादा गहरा आधात इस कृत्या के प्रयोग से सामने वाले पर होता है फिर भी श्रीमाली जी की सौजन्यता है कि वे एक अवसर और दे रहे हैं ।

मैं इसमे इतना और जोड रही हू कि यदि कपाली वावा हार जायेगे तो उन्हे श्रीमाली जी का शिष्य होना पडेगा और यदि श्रीमाली जी हार गये तो उन्हे कपाली

वावा का शिष्य होना पड़ेगा। इसके बाद गुरु जो भी आज्ञा देगा वह उस शिष्य को मानने के लिये बाध्य होना पड़ेगा, क्योंकि इस साधना-परम्परा का निर्णय इसी प्रकार से ही होता है।

अधिकाश तात्रिकों ने मा कपाली भैरवी के कथन का अनुमोदन किया और उन्होंने कहा कि जो हारेगा उसे शिष्य बनना ही होगा।

इससे कपाली वावा कुछ विचलित होते हुए नजर आये, परन्तु फिर भी उनके पास सभवत कई सिद्धियां थीं और उनके भरोसे वे कुछ निश्चिन्त भी लग रहे थे।

श्रीमाली जी ने कहा कि सभा ने आपको मेरे विरोधी के रूप में उपस्थित किया है। न्याय तो यही है कि आपके प्रयोग के बाद मैं अपने प्रयोग को अपनाऊ, परन्तु मैं एक बार फिर आपको अवसर देता हूँ जिससे कि आप भीषणतम शक्ति या साधना का प्रयोग मुझ पर कर सकें। इसके बाद आपको अवसर नहीं मिलेगा, फिर तो मैं केवल एक बार आप पर प्रयोग करूँगा और उसी से हार जीत का निर्णय हो जायगा।

कपाली वावा ने अपने पास बैठे एक तात्रिक से कुछ कहा, परन्तु सुनाई नहीं दिया। कपाली वावा तन कर खड़े हो गये और अपनी जाघ के पास से मास उधेड़ कर उसमें से छोटी-सी गोली निकाली और उसे दाहिने हाथ की हथेली पर रख कर कहा श्रीमाली। यह तुम्हारे लिये अन्तिम अवसर है, तुमने मुझे क्रोध दिलाकर उचित नहीं किया है। इस बार तेरी मृत्यु निश्चित है।

श्रीमाली जी अविचलित भाव से मच पर खड़े थे और उनके दोनों हाथों की मुट्ठियां बघी हुईं थीं। सभवत वे होठों में ही कुछ मत्र बुदबुदा रहे थे।

कपाली वावा ने अपने दाहिने हाथ की हथेली मुह के सामने रखी। हथेली पर एक सफेद गोली रखी हुई थी और उस गोली को लक्ष्य कर कपाली वावा मत्र पढ़ रहे थे। ऐसा लग रहा था जैसे उन्होंने इस बार अपनी सारी शक्ति लगा दी हो। उनका सारा शरीर तन कर ढूँढ़ की तरह हो गया था और रक्त का प्रवाह हथेली की तरफ तेजी से होने लगा था। थोड़े ही समय बाद हथेली के नीचे से रक्त की दूर्दें टपकने लगी, फिर भी कपाली वावा का मत्र जप चालू था और अचानक उन्होंने जोरों से मुट्ठी को कसी और वह गोली श्रीमाली जी की तस्फ फेंक दी।

मैंने अपने पास बैठे तात्रिक से प्रश्न किया कि इस बार कपाली वावा ने कौनसा प्रयोग किया है तो भय से उसका चेहरा पीला पड़ गया। उसने कहा कि यह 'विष्वस' प्रयोग है और इसके पीछे वावन भैरव शक्ति प्रयोग कार्य करता है, इसके साथ-ही-साथ इस प्रयोग में चौसठ योगिनियों का भी प्रभाव कार्य करता है, यह प्रयोग सर्वाधिक सहारक और विष्वसक होता है।

मेरी हस्ति स्वभावत ही श्रीमाली जी के चेहरे पर जम गई। ऐसा लगा कि जैसे वे लडखडा गये हो। अचानक उन्हे एक सेकण्ड के लिये मच पर बैठते हुए भी देखा, पर दूसरे ही क्षण वे उठकर खड़े हो गये और उन्होंने अपनी आंखें खोल दी।

पनी मध्य में दर्ढ़ की लद्दर दौड़ गई और त्रिजटा तब्दीली ने दौड़ कर श्रीमाली

जी को अपने कष्टे पर उठा लिया। हर्ष में उन्होंने किलकारी की और पुन मच पर उन्हे खड़ा कर अपने स्थान पर जा खड़ा हुआ।

सारी सभा हतप्रभ थी कि यह साधारण-सा दिखने वाला व्यक्तित्व क्या इतना असाधारण हो सकता है? निश्चय ही श्रीमाली जी उच्च कोटि के ज्ञाता हैं जो कपाली वावा से सामना ले सकता है उसकी सिद्धियों की याह सभव नहीं है।

इधर कपाली वावा थक से गये थे। उनका चेहरा सफेद पड़ गया था और आखो मे क्रोध की जगह याचना झलकने लगी थी। उनके सहयोगी जो अधोरी थे वे अपने आप मे कमजोरी अनुभव करने लगे थे, और एक प्रकार से परास्त से प्रतीत हो रहे थे।

श्रीमाली जी ने कहा, कपाली वावा क्या आपके मन मे कुछ और है, इस विष्वसक प्रयोग को झेलने से श्रीमाली जी के चेहरे पर क्रोध की मात्रा जरूरत से ज्यादा आ गई थी, आखो मे ललाई-सी दिखाई दे रही थी और पूरा शरीर अगारे की तरह लाल अनुभव हो रहा था।

श्रीमाली जी ने कहा कपाली वावा! प्रत्येक साधना के कुछ नियम होते हैं, कोई भी साधक अपने नियमो से आगे नहीं जाता। भीषण-से-भीषण शत्रु भी इस प्रकार का योग सामने वाले पर नहीं करता, क्योंकि इस प्रकार का प्रयोग तात्रिक मान्यताओ के विपरीत है, साथ-ही-साथ मानवता के भी विरुद्ध है, आपने मानवता को भी स्पर्श नहीं किया और जिस प्रकार का प्रयोग मुझ पर किया है, यदि ऐसा ही प्रयोग किसी पहाड़ पर भी करते तो उसका अस्तित्व भी समाप्त हो जाता, यह ज्ञात ही नहीं रहता कि वहा किसी समय पहाड़ था भी।

कपाली वावा! अब मैं तुमको छोड़ूगा भी नहीं, पर मानवता के साथ। तुमने दो प्रयोग मुझ पर किए हैं अब मैं एक प्रयोग तुम पर करता हू, यदि इस प्रयोग से तुम बच गए या इस प्रयोग को झेल लिया तो मैं अपने आपको परास्त मान लूगा, चाहता तो मैं यह था तुम्हे समाप्त कर दू परन्तु अभी तक मैंने मानवता छोड़ी नहीं है।

मैं सावधान कर रहा हू कि तीन मिनट के भीतर-भीतर प्रयोग कर्त्ता और तुम्हे सभलना है तो सभल जाना—और कहते-कहते श्रीमाली जी की मुख मुद्रा कठोर हो गई, उनका चेहरा लाल सुर्च हो गया, आखो से ज्वाला-सी निकलने लगी और उनका हाथ हवा मे लहराया। दूसरे ही क्षण नीचे आया और फिर तन कर सामने की तरफ भुट्ठी खुली, जैसी कि कोई वस्तु सामने की तरफ उछाली हो।

एक ही क्षण मे घडाम से कपाली वावा नीचे गिर गए, और उनके मुह से धून निकलने लगा, आखो मे भय छा गया और उन्हें एक ही क्षण मे ऐसा लगने लगा था जैसे मृत्यु बहुत दूर नहीं रह गई हो।

कई तात्रिक एक साथ उठ खडे हुए और कपाली वावा के चारो तरफ धेरा डाल दिया, उनकी आखें बुझने लगी, उनका चेहरा सफेद पड़ रहा था, उनके मुह से धून निकल रहा था और ऐसा लग रहा था कि यदि तीन-चार मिनट कोई उपाय नहीं किया

गया या खून निकलना बद नहीं हुआ तो कपाली वावा जीवित नहीं बच सकेंगे ।

तभी श्रीमाली जी की आवाज गूजी कि सभी दीन में से हट जाय, अन्यथा उनको भी इसी प्रकार के प्रयोग का सामना करना पड़ेगा । यदि कपाली वावा क्षमा मांग लेते हैं तो मैं उन्हे दया करके जीवन दान दे सकता हूँ ।

आवाज के साथ ही सभी तात्रिक और अधोरी अपने-अपने स्थान पर बैठ गए, कपाली वावा के मुह से अभी तक खून निकल रहा था और वह वह कर पास की जमीन को लाल कर रहा था, फिर भी उनमें चेतना वाकी थी, उनके दोनों हाथ परस्पर जुड़े—यह इस बात की साक्षी थे कि वे अपने आपको परास्त अनुभव करते हैं ।

श्रीमाली जी और भूर्भुआ वावा मच से उनके निकट आये और श्रीमाली जी ने हवा में से लहरा कर कोई वस्तु अपने हाथ में ली और उस वारीक-सी वस्तु को कपाली वावा पर डाल दिया । दूसरे ही क्षण उनके मुह से खून निकलना बन्द हो गया ।

श्रीमाली जी ने वावा के हाथ को पकड़ कर उठाया और उन्हे उसी स्थान पर विठाया जाहां पर वे बैठे हुए थे, दो क्षणों के बाद वे चेतन्य हुए और उन्होंने उठ कर अपना सिर श्रीमाली जी के चरणों में रख दिया ।

मा कृपाली भैरवी ने कहा कि मेरी बात रखी जाए । इसका निर्णय हो ही चुका है, अत कृपाली वावा शिव्यत्व स्वीकार करें ।

भूर्भुआ वावा कपाली वावा को अपने साथ लेकर मच पर आए, पास में ही श्री-माली जी खड़े हुए थे । सारी सभा हतप्रभ और स्तब्ध थी । उनकी आखों में आश्चर्य-मिश्रित भय विद्यमान था ।

क्षीण स्वर में कपाली वावा ने अपनी पराजय स्वीकार की और कहा मैं हार गया हूँ । मेरी सारी सिद्धिया और कृत्याएं आपके प्रयोग के सामने निष्फल सिद्ध हुई हैं अत मैं शिव्यत्व स्वीकार करता हूँ ।

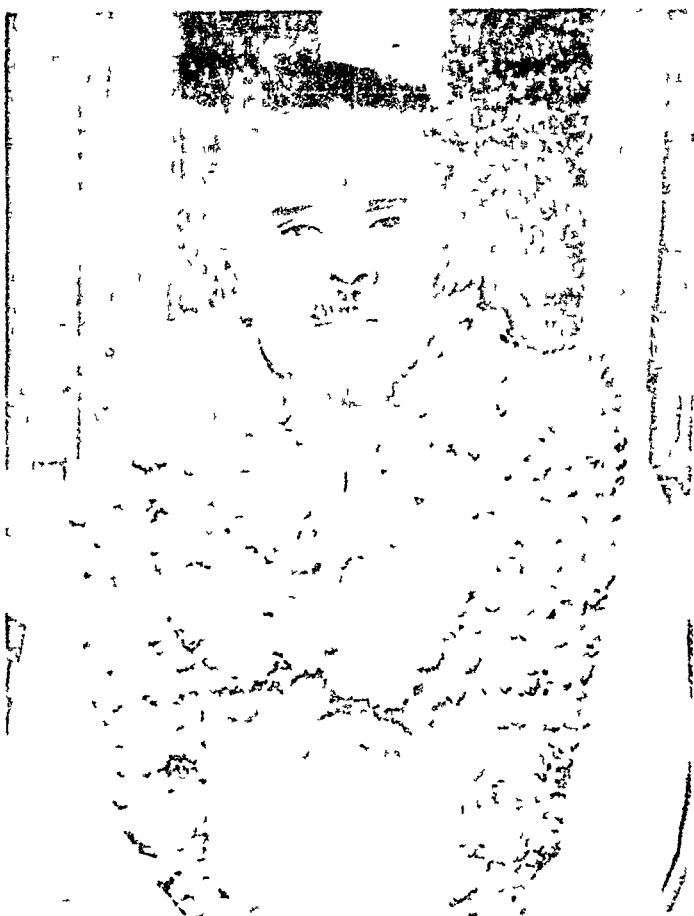
श्रीमाली जी ने कहा, कपाली वावा आयु में मुझसे बड़े हैं और वयोवृद्ध होने के कारण मैं उनका सम्मान करता हूँ । फिर भी वे पराजित हैं और उन्होंने शिव्यत्व स्वीकार करने की प्रार्थना की है, मैं इस प्रकार के कार्यों में विश्वास नहीं रखता, फिर भी मैं मा कृपाली भैरवी की आज्ञा का उल्लंघन भी करना नहीं चाहूँगा, अत मैं कपाली वावा को शिव्य के रूप में स्वीकार करता हूँ । और कहते-कहते प्रतीक रूप में श्रीमाली जी ने कपाली वावा के सिर के सामने वाले कुछ वाल उखाड़ लिए ।

सारी सभा प्रसन्नता और हर्ष से गूज उठी, सभी अपने-अपने स्थान से उठ खड़े हुए, उनकी आखों में एक आश्चर्यमिश्रित प्रसन्नता लहरा रही थी और उन्होंने श्रीमाली जी के चारों तरफ घेरा मा डाल दिया । भूर्भुआ वावा ने दृढ़ होते हुए भी श्रीमाली जी को अपनी बाहों में भर लिया, उनकी बाँहों में प्रसन्नता के कण छलछला आये थे । सारी सभा एक स्वर से प्रसन्नता व्यक्त कर रही थी ।

पन्द्रह मिनट तक लगभग इसी प्रकार की प्रसन्नता मिश्रित अवनिया गूजती रही । सभी ने एक स्वर से यह स्वीकार किया कि नि सन्देह सिद्धियों के क्षेत्र में श्रीनाली

जी सर्वोपरि हैं और उनके पास जो अक्षय भण्डार है वह अपने आप में अद्वितीय है।

भूर्भुला बाबा के बार-बार के अनुरोध से सभा शान्त हुई, और सभी अपने-अपने स्थान पर बैठे, सभा के बयोवृद्ध देवदूर बाबा अपने स्थान से उठे और अपने दाहिने हाथ के अगूठे को चीर कर रक्त से श्रीमाली जी का सभापति के रूप में अभिनन्दन किया।



#### तांत्रिक सम्मेलन के अध्यक्ष डॉ० श्रीमाली

भूर्भुला बाबा ने सभा को सम्बोधित करते हुए कहा कि मैं आज जल्दात प्रसन्न हूँ, क्योंकि हमने एक जटिल समस्या का समाधान दूँड़ निकाला है। मैं श्रीमाली जी से और जनकी साधनाओं से परिचित रहा हूँ, तन्त्र-मन्त्र और अन्य सभी प्रकार की

साधनाओं में वे निष्णात हैं, निष्णात ही नहीं उन्होंने सर्वोपरि सिद्धियों को हस्तगत किया है, इसका प्रमाण अभी आप देख सकते हैं।

मेरी ही नहीं पूरी सभा की आवें श्रीमाली जी के चेहरे टिकी हुई थी। कुछ क्षणों पूर्व उनके चेहरे पर क्रोध की जो लालिमा थी वह समाप्त हो गई थी और उनका चेहरा पुनः सामान्य-सा दिखाई देने लग गया था, पूरी सभा के हृष्य और प्रसन्नता का उन पर कोई प्रभाव दिखाई नहीं दे रहा था। इस अद्भुत और श्रेष्ठतम् तात्त्विक सम्मेलन के सभापति पद को प्राप्त करके भी उनके चेहरे पर किसी भी प्रकार की अह की रेखा दिखाई नहीं दे रही थी, इसके स्थान पर मुझे उनकी आखों में स्नेह और करुणा का मिला-जुला रूप दिखाई दे रहा था।

श्रीमाली जी ने प्रारम्भिक भाषण में अपने गुरु श्री स्वामी सच्चिदानन्द जी का स्मरण करते हुए आगन्तुक सभी साधकों और तात्त्विकों की अस्थर्घना की और बताया कि युग परिवर्तन के साथ-साथ व्यक्ति को भी परिवर्तन के लिए तैयार रहना चाहिए। हम पूरे विश्व में तत्र-मत्र के क्षेत्र में सर्वोपरि हैं और विश्व की आदिम सम्यता से अब तक इस भारत को विश्व के अन्य देश चैलेन्ज नहीं दे सके हैं, इस क्षेत्र में हम अब भी अग्रगण्य और सर्वोपरि हैं, परन्तु धीरे-धीरे हम में सकुचितता आ रही है। हम अपने ज्ञान को अपनी ही वपौती समझ बैठे हैं और दूसरों को देने में कृपणता वरत रहे हैं, यह हमारी स्वार्थ प्रवृत्ति है जो हमारे स्वयं के लिए और इस विद्या के विकास के लिए पूर्णत धातक है।

समाज में हमारे अपना सम्मान उस रूप में कायम नहीं रख सके हैं, जिस रूप में रहना चाहिए, क्योंकि हमने तत्त्व का प्रयोग केवल मारक कार्यों के लिए ही किया है, तत्र का तो सबसे बड़ा उपयोग रचनात्मक कार्यों में है। यदि हम इस तत्र का रचनात्मक कार्यों में उपयोग ले तो निश्चय ही सीमित समय में इस देश का काया पलट कर सकते हैं। हम इस क्षेत्र में सर्वोपरि होते हुए भी नगण्य हैं, क्योंकि हमने इस विद्या का प्रयोग या तो चमत्कार प्रदर्शन के लिए या व्यक्तिगत स्वार्थ के लिए ही किया। समाज के रचनात्मक उपयोग के लिए भी इस विद्या का उपयोग हो सकता है, ऐसा हमने मोचना ही छोड़ दिया।

हमने तत्र को एक अजीव रूप दे दिया है, विचित्र वेषभूषा को इसका प्रतीक बना दिया है, यह एक धातक प्रवृत्ति है। हमें चाहिए कि हम इस सकुचितता से बाहर आए और अपने ज्ञान को पुस्तकों के माध्यम से, प्रयोगों के माध्यम से तथा समाज के रचनात्मक कार्यों के माध्यम से व्यक्त करें, जिससे कि यह विद्या जीवित रह सके, अन्यथा एक समय ऐसा भी आ सकता है जब यह विद्या हमेशा-हमेशा के लिए समाप्त हो जाएगी।

आज 'परदेह प्रवेश' या 'परकाया प्रवेश' विद्या को जानने वाले कितने बचे हैं? 'आकाश गमन' और 'मनोनुकूल गमन' साधना इन्हें-गिने लोगों के पास रह गई है, यदि हम इस विद्या को भावी पीढ़ियों के लिए सुरक्षित नहीं रख सके तो यह विद्या

इस विश्व से हमेशा-हमेशा के लिए लोप हो जाएगी ।

यह सम्मेलन एक आश्चर्यजनक और ऐतिहासिक सम्मेलन है । जिसकी गरिमा और महत्ता को हमें अनुभव करना चाहिए । इस सम्मेलन में आपसी वाद-विवाद या अपनी अहमत्यता को ही बदावा नहीं देना है अपितु मिल-जुल कर एक-दूसरे की भावनाओं से, एक-दूसरे की कलाओं से और एक-दूसरे की साधनाओं से परिचित होना है, जिससे कि हम आने वाली पीढ़ियों के लिए निश्चित रूपरेखा बना सकें और धरो-हर के रूप में उनको कुछ दे सकें ।

श्रीमाली जी का भाषण नपा-नुता सयत और स्पष्ट था । उनके भाषण में लुप्त हो रही विद्या को जीवित रखने की ओर सकेत था, इसके साथ-ही-साथ उनकी यह चेतावनी भी थी कि यह विद्या केवल एक ही स्थान पर केन्द्रित होकर समाप्त न हो जाए, बल्कि इसे समाज के आधुनिक परिवेश में स्थान देना होगा और समाज के मन-मस्तिष्क से जो इसके प्रति आनंद धारणाएं हैं उसे दूर करना होगा ।

मैं श्रीमाली जी के भाषण से भी ज्यादा उनकी सादगी और विनम्रता से प्रभावित हो रहा था । मैं देख रहा था कि उन्होंने प्रायोगिक रूप से अपनी सर्वश्रेष्ठता सिद्ध की है किर भी उनके मन में किसी भी प्रकार का अह नहीं है, दूसरों के प्रति आदर, सम्मान और स्नेह में किसी प्रकार की न्यूनता नहीं है, जितना ही मैं उनको देख रहा था उतना ही ज्यादा उनके प्रति एक अजीव-सा अपनत्व महसूस कर रहा था । अपने आपको उनके व्यक्तित्व के प्रति सम्मोहित-सा अनुभव कर रहा था । मैंने यह निश्चय कर लिया कि इस अज्ञात व्यक्तित्व के बारे में ज्यादा-से-ज्यादा जानकारी प्राप्त करनी है जिससे कि मैं इनसे लाभ उठा सकूँ ।

मैं उठ कर त्रिजटा अधोरी के पास जाकर बैठ गया और अपना परिचय देते हुए श्रीमाली जी के बारे में चर्चा छेड़ी तो मैंने देखा कि उनके चेहरे पर एक अप्रूच्छी चमक आ गई थी । उन्होंने बताया कि तत्व के क्षेत्र में यह व्यक्ति सागर के समान है, जिसकी थाह पाना सम्भव नहीं है । मैं अपने आपको तत्व के क्षेत्र में बहुत कुछ मानता था और श्रीमाली जी मेरे साथ कुछ समय तक पहाड़ी पर रहे भी थे और मुझसे दो-चार विद्याएं सीखी थीं परन्तु हकीकत यह है कि मैंने जितनी विद्याएं उन्हे सिखाई हैं उससे ज्यादा उनसे सीखी हैं । मैंने यह देखा कि यह व्यक्ति जितना दक्षिण मार्गी साधना में निष्णात है उससे भी ज्यादा वाम मार्गी साधना में सम्पन्न है । हमारे लिए यह गौरव की बात है कि यह व्यक्तित्व सिद्धाश्रम के सर्वोपरि योगीराज श्री सच्चिदानन्द जी का परम प्रिय शिष्य है, जो कि अपने आप में एक विशिष्ट गौरव है । योगी-राज जी से बहुत कुछ प्राप्त किया है, मत्र साधना के क्षेत्र में योगीराज विश्ववन्द्य हैं और उनका शिष्य होना ही अपने आप में विशिष्ट गौरव माना जाता है, अलभ्य दुर्लभ और आश्चर्यजनक साधनाएं उनके द्वारा श्रीमाली जी ने प्राप्त की हैं, इसके अलावा यह व्यक्ति कई वर्षों तक अधोरियों के साथ रहा है, गौरक्ष साधना में आज के युग में यह सर्वोपरि है, ऐसा कहने में मुझे कोई सकोच नहीं ।

त्रिजटा अपने आप में एक प्रामाणिक व्यक्तित्व है। सभा में उपस्थित कई श्रेष्ठ तात्रिक किसी-न-किसी रूप में त्रिजटा के शिष्य रहे हैं, अत त्रिजटा के शब्द अपने आप में प्रामाणिक हैं, इसमें सन्देह करने की कोई गुजाइश ही नहीं थी, जहा त्रिजटा ने श्रीमाली जी के बारे में इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग किया है तो निश्चय ही श्रीमाली जी तत्र के और मन्त्र के क्षेत्र में सर्वोपरि होगे।

मेरे कान त्रिजटा के शब्द सुन रहे थे और मेरी आँखें श्रीमाली जी के व्यक्तित्व पर अटकी हुई थीं। मैं आश्चर्यचकित था कि इतना श्रेष्ठ साधक किस प्रकार से बिना हो हल्ले के, बिना प्रचार प्रसार के, अपने कार्य में रत है, इससे भी बड़ी बात मैंने यह देखी कि यह व्यक्ति बहुत अधिक उदाहर और नम्र है, यदि इसके स्थान पर कोई दूसरा होता और इस प्रकार मृत्यु के सघर्ष में विजयी होकर सभापति बनता तो उसका अहकार इस समय आसमान को छू रहा होता, इसकी अपेक्षा यह अपने आप में सकोच शील है और मृत्यु का फाग खेलने पर भी अपने प्रबल शत्रु कपाली बाबा को आदर-पूर्वक अपने पास बिठा रखा है।

मैंने निश्चय किया कि आज की सभा समाप्त होने पर मैं श्रीमाली जी से अलग से मिलूगा और उनके विचारों को जानने का प्रयत्न करूँगा।

अगले दिन की, और आगे के सम्मेलन समाप्त तक की रूप रेखा और कार्य-प्रणाली स्पष्ट करने के बाद आज सायकालीन सभा समाप्त हो गई, क्योंकि कई साधक सूर्यास्त के समय की जाने वाली साधना में भाग लेने के इच्छुक थे, अत सूर्यास्त से कुछ पूर्व ही सभा समाप्त कर दी गई।

सभा समाप्त होते ही अधिकाश तात्रिकों और मात्रिकों ने श्रीमाली जी को चारों तरफ से घेर लिया। सभी अपना-अपना परिचय देने की उतावली कर रहे थे, सभी तात्रिक उनकी नजरों में आना चाहते थे और सभी साधक इस बात के लिए प्रयत्नशील थे कि उनकी कृपा का प्रसाद प्राप्त हो सके जिससे कि वे अपनी अपूर्णता को पूर्णता में परिवर्तित कर सकें।

सभी अपने-अपने स्थान पर चले गये, जहा पर कि सभी को ठहराने की व्यवस्था की गई थी और जाते ही अधिकाश साधक अपनी साधनाओं से व्यस्त हो गए। मेरा मन अन्य किसी कार्य में नहीं लग रहा था। एक ही इच्छा हो रही थी कि किसी प्रकार श्रीमाली जी से समय प्राप्त कर सकूँ जिससे कि मैं अपनी बात को उनके सामने रख सकूँ और उनके विचारों को जान सकूँ।

पर उनके एक पुराने तात्रिक शिष्य से ज्ञात हुआ कि रात्रि में उनसे मिलना सभव नहीं हो सकेगा, क्योंकि एक बार अपनी साधना में जाने के बाद सुर्योदय से कुछ पूर्व ही वे साधना पूर्ण कर बाहर आते हैं, अत इस समय मिलना सभव नहीं हो सकेगा, यह शिष्य किसी समय श्रीमाली जी के साथ रहा था और उनसे काफी कुछ प्राप्त किया था। आज भी जब वह अपने होठों से श्रीमाली जी का नाम उच्चारित करता तो उसके चेहरे पर एक अपूर्व चमक आ जाती थी और प्रसन्नता से सीना फूल जाता

था । वह इस बात में गौरव अनुभव कर रहा, कि वह किसी समय श्रीमाली जी का शिष्य रहा है और आज भी उस पर उनकी पूर्ण कृपा है ।

उससे मुझे श्रीमाली जी के बारे में काफी कुछ सुनने को मिला । मुझे ज्ञात हुआ कि लगभग २० वर्षों तक श्रीमाली जी घर गृहस्थी छोड़कर केवल तत्र और मन्त्र की पूर्णता को जानने के लिए जगलो में भटकते फिरे थे, और इस अवधि में उन्होंने जो कुछ कष्ट उठाया उसकी अपने आप में एक अलग कहानी है ।

भारत के ऊचे-से-ऊचे साधकों के सम्पर्क में रहने का उन्हें अवसर मिला है और स्वामी सच्चिदानन्द जी के वे परमप्रिय शिष्य हैं और योगीराज ने इनको ही अपना उत्तराधिकारी माना है, इसके अलावा अत्यन्त दुर्लभ सिद्धान्तम् के वे सदस्य हैं और 'आकाश गमन' साधना के माध्यम से वे यदा-कदा सिद्धान्तम् आते जाते रहते हैं ।

उन्होंने अपने जीवन में जहा तत्र की सर्वोच्चता प्राप्त की है, वही दूसरी ओर मन्त्र के क्षेत्र में भी सर्वोपरिता प्राप्त करने में सफल हो सके हैं, वास मार्गी साधना के वे सर्वश्रेष्ठ साधक हैं, चौसठ कृत्याओं को उन्होंने पूर्णत सिद्ध किया है, और उन्होंने ऐसी कई साधनाएं सिद्ध की हैं जो दूसरों के लिए इर्ष्या की वस्तु हो सकती है, अधोर साधना के क्षेत्र में उनकी अग्रगण्यता आज भी सभी लोग मानते हैं ।

परन्तु इतना होते हुए भी वे जरूरत से ज्यादा नहीं हैं और कभी भी चमत्कार प्रदर्शन या अपने अह का प्रदर्शन करने में विश्वास नहीं रखते, उनका पूरा जीवन सरल, सात्त्विक और गौरवपूर्ण रहा है ।

इससे भी आश्चर्यजनक बात मुझे यह सुनने को मिली कि श्रीमाली जी इन विद्याओं में सर्वश्रेष्ठ होने के साथ-साथ एक सफल गृहस्थी भी हैं, पूर्णत भारतीय वाता-वरण में ढली हुई उनकी पत्ती है, पुत्र है, पुत्रिया हैं और अपने गृहस्थ को ठीक उसी प्रकार से निभाते हैं जिस प्रकार से साधारण गृहस्थ अपने गृहस्थ जीवन को निभाता है ।

इतना होने पर भी उनकी साधना पर कभी भी गृहस्थ हावी नहीं हो सका है और न गृहस्थ पर उनकी साधना हावी रहती है । दोनों में उचित समन्वय उनके जीवन की विशेषता है और दोनों ही क्षेत्रों में उन्होंने पूर्णता प्राप्त की है ।

जिस समय वे अपनी साधना में रत होते हैं तो उनका रूप ही बदल जाता है, उस समय वे पूर्णत साधक दिखाई देते हैं, गृहस्थ का किसी भी प्रकार से कोई प्रभाव उस समय उन पर नहीं रहता । इसके विपरीत जब हम उनको गृहस्थ रूप में देखते हैं तो यह विश्वास ही नहीं होता कि यह व्यक्ति साधक है या इस व्यक्ति ने साधना के क्षेत्र में सर्वोच्चता प्राप्त की है ।

जितना ही मैं श्रीमाली जी के बारे में सुनता जा रहा था उतनी ही ज्यादा मेरी उत्सुकता उनसे मिलने की हो रही थी । ऐसा अवसर मुझे सम्मेलन प्रारम्भ होने के पाचवे दिन मिला जबकि वे दोपहर में विश्राम कर रहे थे । उस शिष्य के माध्यम से मैंने श्रीमाली जी से निवेदन किया था कि मैं एक साधारण साधक हूँ और इस क्षेत्र

मेरे पिछले १५ वर्षों से भटक रहा हूँ, यद्यपि मुझे कुछ प्राप्त हुआ है परन्तु वह समुद्र में दूद के समान है। मैं पिछले चार दिनों से आपसे मिलने के लिये प्रयत्न कर रहा हूँ परन्तु चौबीसों घटे आप इस प्रकार से व्यस्त हैं कि मैं एक क्षण भी आपका ले नहीं पाया हूँ। मैं कुछ क्षण आपसे लेना चाहता हूँ, जिससे कि मैं आपसे कुछ मार्ग दर्शन पा सकूँ और अपने जीवन की साधा को सफल बना सकूँ।

तब दोपहर के विश्राम के समय श्रीमाली जी ने कुछ समय मुझे एकान्त बैंट के लिए दिया। यह बैंट मेरे लिए आज भी स्मरणीय है जबकि मैं पहली बार इस महापुरुष के सामने बैठकर अपनी बात को उनके सामने रख सका था और मार्गदर्शन पा सका था।

मैंने वह पाया कि निश्चय ही श्रीमाली जी अपने क्षेत्र में सार्वोपार हैं और उनके पास जो सिद्धियाँ हैं वे अपने आप में अन्यतम हैं, उनको चुनौती देने वाला या उनसे स्पर्धा करने वाला आज कोई भी अन्य नहीं है, किर भी यह व्यक्ति अत्यधिक नम्र है और अपनी प्रशंसा सुन कर इसको जरूरत से ज्यादा सकोच अनुभव होता है, ज्योही प्रशंसा की चर्चा छिड़ती है, तो वे विषय को बदल देते हैं, उनके मन से सभी तात्त्विक, मात्रिक, भौतिकीय, अधोरियो आदि के बारे में स्नेह है, और सभी को वे मार्गदर्शन देने में सफल हैं।

मैंने उनसे बातचीत में निवेदन किया कि मैं जीवन में कानून का सफल विद्यार्थी और न्यायपालिका का श्रेष्ठ सदस्य रहा हूँ, इसके बाद मैंने पत्रकारिता के क्षेत्र में पूर्णता प्रोप्त की थी, परन्तु इस क्षेत्र में मेरी सूचि नहीं रही और मैंने अपने शेष जीवन को तात्त्विक साधना सीखने में ही व्यतीत करने का निश्चय किया है।

मैं पिछले पन्द्रह वर्षों से इस क्षेत्र में सीखने का प्रयत्न कर रहा हूँ, पर इस सम्मेलन में आने के बाद मुझे ज्ञात हुआ है कि मेरा अस्तित्व तो नहीं के बराबर है। यदि मैं सी वर्ष भी जीवित रह जाऊँ किर भी मैं कुछ भी प्राप्त नहीं कर पाऊँगा जितना कि चारों तरफ ज्ञान फैला हुआ है।

मैंने उनसे तत्र के बारे में मत्र और वाम मार्गी साधना के बारे में कई प्रश्न किये और उन्होंने जितने स्नेह और प्रामाणिकता के साथ मुझे समझाया वह आज भी स्मरणीय है, जितना मैं सुन रहा था उतना ही ज्यादा मुझे उनकी गहराई का एहसास हो रहा था। मैं देख रहा था कि यह व्यक्ति अपने आप में कितना भ्रहन है, परन्तु साथ ही साथ कितना नम्र भी। ऐसा ही व्यक्ति आने वाली पीढ़ियों के लिए मार्गदर्शक बन सकता है।

मेरी आत्मा मुझे कह रही थी कि तू जिस मजिल को पाना चाहता है जो गुरु की धारणा तेरे मन मस्तिष्क में है, वह सामने है, तेरी जिज्ञासाओं का समाधान इसी व्यक्ति से हो सकता है, क्योंकि इस व्यक्ति में देने की क्षमता जरूरत से ज्यादा है।

डरते-डरते मैंने इच्छा प्रकट की कि मैं कुछ समय आपके साथ रहना चाहता हूँ और यदि मुझ में पात्रता हो और आप उचित समझें तो मैं शिष्य रूप में आपके चरणों

मेरी जीवन विताना चाहता हूँ।

श्रीमाली जी ने उत्तर दिया कि इतनी जल्दी शिष्य बनना सभव नहीं है क्योंकि केवल होठों से ही गुरु या शिष्य शब्द उच्चारित करना ही सब कुछ नहीं है, जब तक पूर्ण मानसिक और हार्दिक रूप से समर्पण की भावना उजागर नहीं होती तब तक शिष्यत्व की पूर्ण भावना जागृत नहीं हो पाती, और जब तक ऐसी भावना जागृत नहीं होती तब तक शिष्य बनना व्यर्थ है, क्योंकि 'गुरु' शब्द एक सामान्य शब्द नहीं है इसके पीछे बहुत बड़ी जिम्मेदारी है, बहुत बड़ा उत्तरदायित्व है, और जब तक वह गुरु उस शिष्य के प्रति पूर्ण क्षमता के साथ उत्तरदायित्व का निर्वाह नहीं कर सके तब तक उसका गुरु बनना या गुरु बनने की प्रक्रिया अपनाना व्यर्थ है।

मैं गुरुवाद में विश्वास नहीं करता। मैं नहीं चाहता कि मेरे पीछे शिष्यों की लम्बी कतार या उनकी फौज हो। मैं तो जीवन में सकृचितता इस रूप में चाहता हूँ कि चाहे कम ही शिष्य हो परन्तु वे अपने आप में पूर्ण हो। मुझे शिष्य रूप में तुम्हे स्वीकार करने में कोई आपत्ति नहीं है, पर तुम्हारे होठों की अपेक्षा जब तुम्हारा हृदय इस बात की याचना करेगा तो मैं तुम्हे अवश्य शिष्य बना लूँगा।

होठों के शब्दों की अपेक्षा हृदय से जो शब्द उच्चारित होते हैं वे ज्यादा सही, प्रामाणिक और पवित्र होते हैं। मैं होठों से निकले हुए शब्दों की अपेक्षा हृदय से निकलने वाले शब्दों पर ज्यादा विश्वास करता हूँ। जब भी तुम्हारी ऐसी स्थिति हो जाय तब मेरा द्वारा तुम्हे खुला मिलेगा और तुम मेरे पास आ सकोगे।

उनकी बात अपने स्थान पर सही थी, अभी तक मैं अपने आप को पूर्ण क्षमता के साथ शिष्य का रूप नहीं दे सका था, शिष्य का मूल समर्पण होता है और जब तक व्यक्ति में समर्पण की पूर्ण भावना स्पष्ट नहीं होती, तब तक 'शिष्य' शब्द सार्थक नहीं हो पाता। मैं अपने आपको पूर्णता के साथ शिष्य स्पष्ट करना चाहता था, और मैंने उसी क्षण निश्चय कर लिया था कि मैं एक दिन अवश्य ही श्रीमाली जी का शिष्य बनने का गौरव प्राप्त कर सकूँगा।

मैंने उनसे याचना की कि निश्चय ही मैं अभी आपका शिष्य बनने के योग्य नहीं हूँ। अभी मुझे मेरे अपने आपका शिष्य बनने के लिये आवश्यक है, परन्तु फिर भी इस सम्मेलन के बाद कुछ समय आपके साथ रहना चाहता हूँ, और मुझे विश्वास है, आप मेरे इस अनुरोध को ठुकरायेंगे नहीं, अपितु स्वीकृति देंगे जिससे कि मैं अपने आपको धन्य समझूँगा।

श्रीमाली जी ने तीक्ष्ण दृष्टि से मेरी आखों में ज्ञाका और एक ही क्षण में उन्होंने मुझे अपनी कसीटी पर तोल लिया। मुझे कुछ ऐसा लगा जैसे कि वे मेरे पूर्ण अन्तर को देख चुके हैं और मेरे अन्तर में गहराई के साथ प्रवेश कर वह सब-कुछ जान चुके हैं, जिनको मैं गोपनीय रख रहा था। एक क्षण के लिये मैं पीपल के पत्ते की तरह काप गया। वह क्षण आशका और प्रतिशका के बीच इसलिये झूल रहा था कि श्रीमाली जी स्वीकृति देंगे या नहीं। यदि उन्होंने मना कर दिया तो आगे के सारे

रास्ते मेरे लिये अवश्य हो जायेंगे। यदि उनकी स्वीकृति मिल गई तो मैं कुछ दिन उनके साथ रह सकूगा और उसके जीवन की सुवास से अपने आपको सुवासित कर सकूगा, और अपने कार्यों से यह स्थापित करने का सफल-असफल प्रयास कर सकूगा कि मैं शिष्य बनने की योग्यता रखता हूँ, और आने वाले समय में मैं इस कस्टी पर खरा उत्तर सकूगा।

श्रीमाली जी मेरे चेहरे पर नजर डालते हुए मुस्कराये और कुछ दिन साथ रहने की स्वीकृति दे दी। यह स्वीकृति मेरे लिये किसी श्रेष्ठ साधना की सफलता से कम नहीं थी। मुझे कुछ ऐसा लगा जैसे मैं कुछ-कुछ पा गया हूँ, मुझे अपनी मजिल मिल गई है, मुझे कुछ ऐसा अनुभव हुआ कि जिस कार्य के लिये मैं भटक रहा था उस की पूर्णता अब निकट भविष्य में हो सकेगी, हो सकता है मैं अपने जीवन में पूर्णता पा सकूँ। मैंने अपने मन में जो लक्ष्य निश्चित किया था वह लक्ष्य अब मुझे निकट आता अनुभव हो रहा था।

सम्मेलन में जाने का समय हो गया था। मैं उनसे विदा लेकर बाहर आया। उस समय मैं अपने आपको सासार का सबसे अधिक सौभाग्यशाली अनुभव कर रहा था, मेरा हृदय प्रसन्नता के कारण जीरो से घडक रहा था। खुशी के मारे मेरे पाव जमीन पर नहीं पड़ रहे थे, पूरा शरीर रोमांचित हो गया था, और मेरी आँखों में प्रसन्नता के आसू छलछला रहे थे।

आज पहली बार मैंने अनुभव किया था कि सिद्धि पुरुष के समीप बैठने से ही कितना कुछ लाभ हो जाता है। उनके शरीर से निसृत गध से जो मादक वातावरण बनता है वह कितना अनुपम होता है।

सम्मेलन के दस दिन हगामापूर्ण ही रहे, परन्तु ये दस दिन अपने आप में अन्यथा थे, क्योंकि इन दस दिनों में श्रेष्ठतम् साधकों ने श्रेष्ठतम् प्रक्रिया से अपनी साधनाओं को स्पष्ट किया और उन साधनाओं में नवीनतम् रहस्यों की ओज को भी सबके सामने स्पष्ट किया।

अभी तक 'श्यामा-साधना' अपने आप में अत्यन्त जटिल और कठोर समझी जाती थी, परन्तु वैचाकी बाबा ने इस प्रक्रिया को एक नवीन पद्धति से सिद्ध किया और उन्होंने उसके परिणाम भी सबके सामने रखके। इसी प्रकार ऊर्ध्वगमन प्रक्रिया की सरलतम् विधि भी जिज्ञासुओं के सामने स्पष्ट हुई, त्रिजटा अधोरी ने व्यावहारिक रूप में 'सजीवनी-विद्या' को सबके सामने स्पष्ट किया। रामायण में मैंने पढ़ा था कि जब राम-रावण का युद्ध समाप्त हुआ तो राम ने इन्द्र से प्रार्थना की कि आप मेरी सेना के जितने भी मृत बानर हैं या इस युद्ध में मारे गए हैं उन्हें आप सजीवनी विद्या से जीवित कर दें। इन्द्र ने प्रसन्न होकर उन सभी बानरों को पुन जीवित कर दिया था, साथ ही वे रोग मुक्त भी हो गये थे।

इन्द्र ने यह विद्या वृहस्पति से सीखी थी और मैंने यह पढ़ा था कि वृहस्पति और शुक्र दोनों ही इस विद्या के पारगत ऋषि थे। मैंने इसको पढ़कर केवल अनुमान

लगाया था कि किसी समय हमारे देश मे यह विद्या जीवित रही होगी, परन्तु काल-व्यवधान के कारण यह विद्या इस देश मे लुप्त हो गई होगी, परन्तु त्रिजटा ने सबके सामने इस प्रक्रिया को सिद्ध करके दिखाया। उन्होंने भूत व्यक्ति को जोकि पास के गाव मे एक दिन पहले ही भरा था उसे प्राप्त कर सम्मेलन मे सबके सामने उसे जीवित कर दिखाया, यह मेरे लिए और अन्य साधकों के लिये आश्चर्यजनक था, परन्तु जो कुछ था हमारे सामने था और प्रत्यक्ष था। वास्तव मे अभी तक भारत इस प्रकार की विद्याओं से सम्पन्न है। त्रिजटा ने बाम मार्गी साधना से 'सजीवनी प्रक्रिया' सम्पन्न की थी, बाद मे मुझे ज्ञात हुआ कि इसकी एक और विधि मात्रिक भी है और उसके माध्यम से भी यह निया सम्पन्न की जाती है। त्रिजटा से ही मुझे ज्ञात हुआ कि श्रीमाली जी को दोनों ही प्रकार की विधिया ज्ञात हैं और उन्होंने इसका प्रयोग कई बार किया भी है।

'आकाश-गमन-प्रक्रिया' भी मैंने पहली बार इस सम्मेलन मे देखी, जबकि माधक इस प्रक्रिया के माध्यम से हवा से भी हल्का होकर आकाश मे विचरण कर सकता है और एक स्थान से दूसरे स्थान पर सहज मे ही आ जा सकता है। भूर्भुआ बाबा ने इस प्रक्रिया को सबके सामने करके बताया और उन्होंने उन प्रश्नों के उत्तर भी दिये जो कि इस प्रक्रिया के पेचीदा अग हैं। इस साधना के माध्यम से साधक हवा मे पक्षी की तरह उड़ सकता है और उसका वेग वायुयान से भी कई गुना तेज होता है। एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के लिये और अगम्य पर्वतों को पार करने के लिये यह विधि सर्वाधिक उपयुक्त है।

पुराणो मे नारद के बारे मे विच्छयात है, कि वे निरन्तर धूमते रहते थे और कुछ ही क्षणों से एक स्थान से दूसरे स्थान पर गमन कर सकते थे। उन्हे यही विधि ज्ञात थी, जिसके माध्यम से वे ब्रह्माण्ड के किसी भी स्थान पर सशरीर कुछ ही क्षणों मे पहुच जाते थे। यह मात्रिक प्रक्रिया है और इसकी एक बाम मार्गी तात्रिक प्रक्रिया भी है जिसे मच्छिन्द्रनाथ ने विकसित किया था, वे सशरीर एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने मे सक्षम थे, भूर्भुआ बाबा ने मात्रिक प्रक्रिया को सबके सामने स्पष्ट किया और प्राणायाम प्रक्रिया से अपने शरीर को वायु से भी हल्का कर पृथ्वी से १० फीट तक ऊपर उठ कर सब को बताया, साथ ही उन्होंने आकाश मे विचरण करके भी इस प्रक्रिया को स्पष्ट किया। मा कृपाली भैरवी इस प्रक्रिया के बाम मार्गी साधना की निष्णात साधिका हैं, उन्होंने भी कृपा कर इसकी तात्रिक प्रक्रिया को सबके सामने स्पष्ट किया और सशरीर उन्होंने भूर्भुआ बाबा के समक्ष वायु और आकाश मे विचरण कर सबको आश्चर्यचकित कर दिया। उन्होंने इस प्रक्रिया को प्रत्यक्ष रूप से समझा करके भी स्पष्ट किया। मूलत श्मशान साधना है और इसके माध्यम से यह तुरन्त/सिद्ध होती है। मा कृपाली भैरवी को मनोनुकूल विचरण प्रक्रिया भी ज्ञात है और उन्होंने इस प्रकार की प्रक्रिया को सबके सामने स्पष्ट करके भी दिखाया था।

शाम को मैं भा कृपाली भैरवी के साथ काफी समय तक रहा और उन्हे इन

रहस्यों को जानने के लिये साधुवाद दिया। वातचीत में उन्होंने बताया कि वे वचपन से ही सन्यासी हो गई थी और तात्रिक क्षेत्र में उन्होंने अपने जीवन को व्यतीत करने की भावना भन में धारण कर ली थी। कुछ समय तक वे हिमालय के 'सिद्धाश्रम' में भी रही थीं जो कि अपने आप में श्रेष्ठतम उपलब्धि मानी जाती है।

वातचीत में मुझे यह भी ज्ञात हुआ कि जब श्रीमाली जी निखलेश्वरानन्द जी के रूप में हिमालय स्थित थे तब मा कृपाली भैरवी उनके साथ काफी समय तक रही थीं और इस प्रकार की साधनाएं उनसे ही प्राप्त की थीं। आज भी जब वे गुरु का नाम लेती हैं तो उनकी आँखें छलछला आती हैं। मा कृपाली भैरवी से ही मैंने अनुभव किया कि शिष्य का मुख्य गुण समर्पण होता है और उसके रोम-रोम से गुरु की ही छवि निकलती है।

इस सम्मेलन की एक और उपलब्धि 'परकाय-प्रवेश' का दिग्दर्शन था। मैंने इस सबध में कई स्थानों पर पढ़ा था कि साधक अपने शरीर को छोड़कर दूसरे मृत शरीर में प्रवेश कर लेता है और उस दूसरे शरीर से भी जीवन के क्रिया-कलाप सम्पन्न कर लेता है, यह साधना भारत की सर्वश्रेष्ठ साधनाओं में से एक रही है, कुछ समय पूर्वं शकराचार्य इस विद्या के निष्णात साधक थे।

जब मण्डन मिश्र और शकराचार्य का शास्त्रार्थ हुआ तो निश्चय यह हुआ कि इन दोनों में से जो होरेगा वह जीते हुए व्यक्ति का शिष्य बन जायेगा। मण्डन मिश्र भारत के विख्यात विद्वान् और गृहस्थ थे। उनकी विदुषी पत्नी सरस्वती भी साक्षात् सरस्वती का अवतार थी और दोनों पति-पत्नी भारत के श्रेष्ठतम विद्वान् थे।

शकराचार्य मूलत सन्यासी थे और उन्होंने शास्त्रार्थ के माध्यम से भारत विजय करने के उद्देश्य से यात्राएं की थीं। मगर वे सर्वश्रेष्ठ तभी माने जा सकते थे जबकि वे मण्डन मिश्र को शास्त्रार्थ में पराजित कर सकते।

इन दोनों के शास्त्रार्थ का निर्णय कौन करे यह एक पेचीदा प्रश्न था, क्योंकि कोई सामान्य विद्वान् तो निर्णय करने में सक्षम था नहीं, अतः शकराचार्य जी के अनुरोध से इस शास्त्रार्थ के निर्णायक के रूप में मण्डन मिश्र की पत्नी का चयन किया गया। शास्त्रार्थ इक्कीस दिन चला और आखिर में मण्डन मिश्र शकराचार्य से हार गये। यह देखकर मण्डन मिश्र की पत्नी ने निर्णय दिया कि मण्डन मिश्र हार गये हैं, अतः वे शकराचार्य का शिष्यत्व स्वीकार करें और सन्यास दीक्षा लें।

यह कहकर वह विदुषी पत्नी निर्णायिक पद से नीचे उतरी, और शकराचार्य से कहा कि मैं मण्डन मिश्र की अद्वागिनी हूँ अतः अभी तक आधा अग ही पराजित हुआ हूँ, जब आप मुझे भी पराजित करेंगे तभी मण्डन मिश्र पराजित माने जायेंगे, युक्ति के अनुसार वात सही थी। मण्डन मिश्र निर्णायिक बने और सरस्वती तथा शकराचार्य में शास्त्रार्थ प्रारम्भ हुआ।

इक्कीस वें दिन जब मण्डन मिश्र की पत्नी ने यह भली भाति अनुभव कर लिया कि मेरा पराजित होना निश्चित है तब उसने शकराचार्य से कहा कि मैं एक

अन्तिम प्रश्न पूछती हूँ, और यदि इस प्रश्न का भी उत्तर आपने भली प्रकार से दे दिया तो हम दोनों अपने आपको पराजित अनुभव करेंगे और आपका शिष्यत्व स्वीकार कर लेंगे।

शकराचार्य की स्वीकृति प्राप्त होने पर सरस्वती ने प्रश्न किया कि सम्भोग क्या है? यह कैसे किया जाता है? और इससे सत्त्वान का निर्माण किस प्रकार से हो जाता है?

प्रश्न सुनते ही उसकी गहराई शकराचार्य समझ गये। यदि वे इसका उत्तर देते हैं तो उनका सन्यास धर्म खण्डित होता है, क्योंकि सन्यासी को सम्भोग का ज्ञान सभव ही नहीं है और जिसका ज्ञान व्यावहारिक रूप में ज्ञात नहीं है, उसका उत्तर देना कैसे सभव है? अत सन्यास धर्म की रक्षा के लिए उत्तर देना सभव नहीं था और यदि उत्तर नहीं देते हैं तो पराजित माने जाते हैं, दोनों ही दृष्टियों से वे पराजित होते हैं।

शकराचार्य ने प्रश्न किया कि क्या इस प्रश्न का उत्तर पढ़े हुए ज्ञान के आधार पर दे सकता हूँ या इसका उत्तर तभी आप प्रामाणिक मानेंगी जबकि उत्तर-कर्ता इस प्रक्रिया से गुजर चुका हो।

सरस्वती ने उत्तर दिया कि व्यावहारिक ज्ञान ही वास्तविक ज्ञान होता है, यदि आपने इसका व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त किया है तो आप उत्तर देने में स्वतंत्र हैं।

शकराचार्य जन्म से ही सन्यासी रहे थे अत उनके जीवन में सम्भोग का व्यावहारिक ज्ञान धर्म और सन्यास के सर्वथा विपरीत था, अत उन्होंने पराजय स्वीकार करते हुए कहा कि मैं इसका उत्तर छ महीने बाद दूगा।

इसके बाद शकराचार्य किसी अज्ञात स्थान पर चले गये। सयोगवश उस शहर के राजा की मृत्यु हो गई, तब शकराचार्य अपने शरीर को छोड़ राजा के शरीर में प्रवेश कर गये, फलस्वरूप राजा कुछ समय बाद ही पुन जीवित हो गया, सबधियों ने राजा को पुन जीवित देख हर्ष घ्वनि की। राजा के माध्यम से रानियों के साथ जो सम्भोग हुआ, उसका व्यावहारिक ज्ञान शकराचार्य 'लेकर पुन अपनी काया में प्रवेश कर गये, इस प्रकार व्यावहारिक ज्ञान भी प्राप्त कर लिया और जिस शरीर से सन्यास धर्म स्वीकार किया था उसको भी खण्डित नहीं होने दिया।

इसके बाद वे पुन मण्डन मिश्र की पत्नी को उसके प्रश्न का व्यावहारिक ज्ञान देकर विजय प्राप्त की और उन दोनों पति-पत्नी को शिष्यता प्रदान की, इस प्रकार उन्होंने अपने आपको भारत का शास्त्रार्थ विजेता सिद्ध किया।

मेरे कहने का तात्पर्य यह था कि यह विद्या हमारे भारत में शकराचार्य के समय तक रही है पर उसके बाद यह विद्या धीरे-धीरे लुप्त होती गई। मेरे जैसे अधिकाश साधकों को यह विश्वास था कि इस साधना पर भी सम्मेलन में चर्चा होगी और सभवत इस साधना को व्यावहारिक रूप में देख सकेंगे।

सम्मेलन के आठवें दिन श्रीमाली जी ने इस साधना को सबके सामने व्याव-

हारिक रूप मे करके दिखाया । मुझे यह भी ज्ञात हुआ कि इस समय भारत मे मात्र चार या छ साधको को ही इस विधि का ज्ञान है, और इनमे से भी अधिकांश सिद्धाश्रम के स्थायी साधक हैं जो कि वहा से नीचे आते ही नहीं, सैकड़ो साधको के प्रबल अनुरोध और आग्रह को रखने के उद्देश्य से बड़ी ही अनिच्छा से श्रीमाली जी ने इस साधना को सबके सामने व्यावहारिक रूप मे करके दिखाया । यह अनुभव मेरे लिये आश्चर्यजनक था, सुखदायक था और मन सतुष्टिदायक था ।

सम्मेलन मे इसके अलावा कई साधनाए सबके सामने स्पष्ट की गई । इन साधनाओ मे जो वाधाए आती है उनको भी सबके सामने रखा गया, साथ ही इन वाधाओ का निराकरण किस प्रकार से हो सकता है या क्या कोई अन्य सरल विधि है जिसके माध्यम से इस प्रकार की विधिया प्राप्त की जाए, इस पर भी विचार-विमर्श हुआ ।

सम्मेलन के अन्त मे भूर्भुआ बाबा के अनुरोध से श्रीमाली जी ने 'कात्यायनी-प्रयोग' करके बताया । यह प्रयोग अत्याधिक जटिल और कठिन माना जाता है । इसके द्वारा एक ही क्षण मे कई व्यक्तियो से अलग-अलग रूपो मे एक साथ मिलना हो सकता है, अर्थात् जो साधक इस साधना मे निष्णात होता है, वह किसी एक निश्चित समय मे दस अलग-अलग स्थानो मे दस अलग-अलग व्यक्तियो से सशरीर भेंट कर सकता है अर्थात् वह अपने शरीर के कई शरीर बना सकता है । मैंने सुना था कि म्बामी चिशुद्धानन्दजी और उडिया बाबा को यह साधना ज्ञात थी, जो भी व्यक्ति उनके सम्पर्क मे रहे हैं उन्होने इसका अनुभव भी किया है ।

यह विद्या पूर्णत 'लोप-विद्या' मानी जाती थी और सभी का लगभग ऐसा अनुमान था कि यह विद्या भारत से अब लुप्त हो चुकी है क्योंकि पिछले १०० वर्षो मे इस प्रकार की विद्या जानने वाले के बारे मे ज्ञात नहीं हो सका था, परन्तु जब इस सम्मेलन मे सभापति के द्वारा इस प्रकार की साधना को सफलतापूर्वक सम्पन्न करके दिखाया गया तो पूरी सभा मे आश्चर्यमिश्रित हर्ष घटनि की गई ।

दस दिन का यह सम्मेलन अपने आप मे अन्यतम था । जहा तक मेरी धारणा है पिछले पाँच हजार वर्षो मे भी इस प्रकार का सम्मेलन नहीं हो सका था ।

यह सभापति की प्रवन्धदक्षता का एक ज्वलन्त उदाहरण था कि उन्होने अपने ज्ञान से, अपनी प्रतिभा से, और अपने व्यक्तित्व से इन सभी साधको को बाधे रखा, अन्यथा विभिन्न साधनाओ से सम्पन्न साधक एक स्थान पर एकत्र हो और परस्पर मतभेद और समस्याए पैदा न हो यह आश्चर्यजनक बात थी, इसकी घटनि भूर्भुआ बाबा के समापन भाषण मे भी सुनाई दी, उन्होने कहा कि मैं अत्याधिक परेशान था कि यह सम्मेलन किस प्रकार से सम्पन्न हो सकेगा जब कि सभी साधक एक दूसरे से बढ़ चढ़ कर हैं और सभी साधक एक दूसरे पर हावी होने की प्रक्रिया मे रत हैं । इसलिये भी नित्तित था कि कही कोई किसी पर मारक प्रयोग न कर दे और भमस्या पैदा न हो जाय, पर इस सम्मेलन का पूर्ण श्रेय साधक श्रीमाली जी की प्रवन्धदक्षता

को है जिनके प्रबन्ध से यह सम्मेलन सफलतापूर्वक सम्पन्न हो सका ।

इस सम्मेलन की सबसे बड़ी उपलब्धि यह रही है कि हम एक दूसरे के सम्पर्क में आ सके हैं, एक दूसरे के बारे में भली प्रकार से जान सके हैं और एक-दूसरे के विचारों से, उनकी साधनाओं से उनके ज्ञान और उनकी भावनाओं से परिचित हो सके हैं, यह आदान-प्रदान इस सम्मेलन के द्वारा ही सम्भव हो सका, जो कि अपने आप में अन्यतम उपलब्धि है ।

इसके साथ-ही-साथ हन उन सर्वश्रेष्ठ साधनाओं के सम्पर्क में आ मिले हैं, जो लुप्त साधनाएं कहीं जाती हैं, उन साधनाओं का हमने व्याचाहारिक पक्ष इस मन्त्र पर देखा और आज हम यह कहने में समर्थ हैं कि हमारी प्राचीन धरोहर आज भी योग्य साधकों के हाथों में सुरक्षित है, आज भी हम उतने ही सम्पन्न हैं जितने कि प्राचीन समय में थे, हम कई वर्षों तक विश्व को ज्ञान देने में समर्थ हैं, हम इस क्षेत्र में अग्रणी हैं और हमारे पास जो कुछ भी पूर्वजों का ज्ञान है, वह आज भी सुरक्षित रूप में है ।

श्रीमाली जी ने समापन भाषण में सभी साधकों के प्रति आभार प्रकट किया, जिनकी वजह से यह सम्मेलन पूर्णत सफल हो सका, विशेष रूप से सिद्धाश्रम में आने वाले साधकों के प्रति उन्होंने विशेष आभार प्रकट किया ।

उन्होंने भाषण के अन्त में चेतावनी भी दी कि हम अपने ही घेरे में आवद्ध न रहें, हमारे पास जो ज्ञान है उस पर सभी का अधिकार है इस ज्ञान को ज्यादा-से-ज्यादा वितरित किया जाए तभी हमारे जीवन की सार्थकता है ।

उन्होंने साधकों का आह्वान किया कि उन्हें अपना जीवन साधना में समर्पित भाव से लगा देना चाहिए, उनको चाहिए कि वे योग्य शिष्यों की खोज करें और उन्हें अपना सम्पूर्ण ज्ञान साधना दें, जिससे कि यह विद्या आगे के जीवन में बनी रह सके और गतिशील बनी रहे ।

उन्होंने उच्चतम साधकों से भी प्रार्थना की कि समय गतिशील है और यदि इसी गति के साथ अपने आपको परिवर्तित नहीं कर सके तो हम सामाजिक धारा से कट जाएंगे और हमारी सारी साधना एक प्रकार में निष्कल हो जाएंगी ।

उन्होंने बताया कि प्राचीन काल में जगलों में जो गुरुकल होते थे उनके मचालक जगलों में रहते हुए भी समाज से पूरी तरह सवधित रहते थे, अत उनके ज्ञान की गगा समाज में प्रवाहशील रहती थी, परन्तु धीरे-धीरे साधकों ने अपने आपको समाज से परे कर दिया और जगलों में रहने को ही साधना की पूर्णता मान ली, जबकि यह अनुचित है, क्योंकि इससे हम समाज से कट गए हैं, समाज विश्वाम नहीं करता कि साधना अपने आप में इतनी उच्च होती है जो कि आज के इस वैज्ञानिक युग में भी अपनी श्रेष्ठता और उच्चता सिद्ध कर सकती है । जिन स्थानों पर विज्ञान निष्कल है निष्पाय है, परंपरा है वहां पर नाधना मुफ्तता दे मिलती है, हमीलिए विज्ञान में कई गुना ज्यादा बढ़ चढ़ कर यह साधना का महत्व है ।

हमको चाहिए कि हम इस प्रकार के साधक तैयार करें जो समाज से जुड़े हुए हों। उन साधकों को हम अपने ज्ञान की गगा से आप्लावित करें जिससे कि उसकी सुखद फुहार से जनमानस आनन्द प्राप्त कर सकें। यदि रामकृष्ण अपने शिष्य विवेकानन्द को तैयार नहीं करता तो ससार एक बहुत बड़े ज्ञान से वचित् रह जाता, अत आज इस प्रकार के कई विवेकानन्दों की जरूरत है, जो अपने आपको समाज से जोड़ सकें।

अन्त में उन्होंने कहा, मेरी वह धारणा है कि आपमें से अधिकाश मेरी भावनाओं को समझेंगे और आपके पास जो साधनाएं हैं जो सिद्धिया हैं, उन्हें जनमानस से जोड़ेंगे, जिससे कि समाज इससे लाभ उठा सके।

श्रीमाली जी ने कहा कि मेरा द्वार प्रत्येक साधक के लिए खुला है फिर वह चाहे सन्यासी हो, या गृहस्थी, मेरा प्रत्येक क्षण उनके लिए समर्पित है। वे जिस रूप में भी मुझसे साधना का ज्ञान जानना चाहें, मैं उनके लिए तैयार हूँ। मैं चाहता हूँ कि इस प्रकार जीवट वाले युवक आगे आये, जिनके हृदय में कुछ सीधिने की प्रवल चाह हो, जिनकी आखों में लपट हो, जिनके हृदय में कुछ कर गुजरने की क्षमता हो, जो विपरीत परिस्थितियों में भी अपने आपको सन्तुलित और समर्पित रख सके, उनका स्वागत है। उनके लिए मेरा प्रत्येक क्षण और यह जीवन समर्पित है।

समाप्त दिवस अपने आप में ऐतिहासिक था, जबकि प्रत्येक साधक एक-दूसरे से मिल रहा था, एक-दूसरे को ज्ञान का आदान-प्रदान कर रहा था। पहले दिन जो फूट या अह का दिग्दर्शन हुआ था वह समाप्त हो गया था और इन १० दिनों में सभी साधक एक-दूसरे के अत्यन्त निकट आ चुके थे। प्रत्येक की आखों में आसू छलछला रहे थे, प्रत्येक की आवें नम थी और प्रत्येक विछुड़ते समय ऐसा अनुभव कर रहा था जैसे उनके शरीर से प्राण बिछुड़ रहे हों।

इन दस दिनों में श्रीमाली जी ने जितना अथक श्रम किया, वह मेरे लिए आश्चर्यचकित था। मैंने उन्हें एक क्षण भी सोते हुए नहीं देखा, चौबीसों घण्टे निरन्तर कार्य में व्यस्त होते हुए भी उनके चेहरे पर थकावट की कोई रेखा नहीं देखी, उनका चैहरा प्रत्येक क्षण प्रफुल्लित था, उनकी आखों हर क्षण मार्ग दर्शन देती थी, उनके मन में ऐसा कोई अह नहीं था कि छोटे साधक से बातचीत न की जाए या व्यस्तता का लवादा ओढ़े रहे, जो भी उनसे मिलता वह अपने आपको धन्य समझता और अपने मन में पूर्णत तुष्टि अनुभव करता।

अन्तिम दिन सभी साधक, योगी, तात्रिक, हठ योगी, अधोरी, मात्रिक, और भैरवी—साधिकाएं श्रीमाली जी से मिलने के लिए व्यग्र थीं। सभी उनसे मिल रहे थे और सभी उनसे विदा लेते समय सिसक रहे थे, ऐसा लग रहा था जैसे वे अपने प्राणों को छोड़ रहे हों। सबसे ज्यादा आसू कपाली वावा की आखों में थे, पश्चात्ताप से उनका सारा शरीर धरथरा रहा था और जब श्रीमाली जी विदा हुए तो वह वृद्ध-साधक भीड़ को चीरता हुआ आकर श्रीमाली जी के चरणी में गिर पड़ा, उसकी आखों से

आसू की अजश्र धारा वह रही थी और सारा शरीर थरथरा रहा था । श्रीमाली जी ने उसे उठाकर अपने भीते से लगाया, उनकी आयो में भी आसू छलछला आये थे ।

यह सारा दृश्य अपने आप में अद्भुत था, इस प्रकार के दृश्य को शब्दों में कैद किया ही नहीं जा सकता । वास्तव में ही एक ऐसा वातावरण बन गया था कि कोई आख विना भीगे न रही थी । कोई भी चेहरा विना गमगीन हुए नहीं रहा था, सभी अश्रुपूरित थे, सभी मिसक रहे थे, सभी के चेहरे उदाम थे और सभी ऐसा अनुभव कर रहे थे जैसे वे अपने प्राणों को देह से जाते हुए देख रहे हो ।

यह मेरा सौभाग्य था कि श्रीमाली जी ने मुझे साथ चलने की स्वीकृति दे दी थी, हम उन विलयते हुए साधकों से आगे बढ़े परन्तु जितना ही हम आगे बढ़ते उतने ही साधक आ-आकर वापिस घेर लेते । आगे बढ़ना दुष्कर-सा ही गया था ।

मैं सोच रहा था साधकों के बारे में तो यह प्रचलित है कि वे बड़े निर्मम होते हैं, असामाजिक होते हैं, उनके हृदय पर कोई प्रभाव ही नहीं होता, उनका हृदय मास-पिण्ड न रह कर पत्थर हो जाता है, परन्तु आज मेरी धारणा खण्डित हो रही थी । मैं उन साधकों को सिसकते हुए, विलयते हुए, रोते हुए और सिसकारिया भरते हुए देख रहा था ।

राक्षस की तरह विशालकाय त्रिजटा अधोरी बच्चों की तरह फूट-फूटकर रो रहा था, भूर्भुआ बाबा की आखों में आसू छलछला रहे थे, देवहुर बाबा आसुओं के देग को रोक नहीं पा रहे थे और पूरा वातावरण ऐसा हो गया था कि सभी श्रीमाली जी से विछुड़ते हुए अपने आपको निरूपाय अनुभव कर रहे थे ।

मैंने पहली बार श्रीमाली जी की आखों में आसू देखे । वे स्वयं गमगीन थे, परन्तु फिर भी उनकी आखों से सान्त्वना थी, स्नेह था, अपनत्व और प्रेम था, और इसी भीगे हुए वातावरण से श्रीमाली जी आगे बढ़ गए ।

श्रीमाली जी के साथ दो शिष्य और थे जो सम्मेलन से ही उनके साथ हो गए थे । ये दोनों ही शिष्य उच्च कोटि की साधना से सम्पन्न थे और किसी समय श्रीमाली जी के चरणों में बैठकर उन्होंने उच्च मात्रिक और तात्रिक साधनाएं सम्पन्न की थीं, उनके साथ तीसरा मैं था जिन्हे कुछ दिन साथ रहने की स्वीकृति मिली थी । इस याना से मैंने अनुभव किया कि महापुरुष के साथ यात्रा करने से यात्रा का अर्थ ही बदल जाता है, जो यात्रा हमे नीरस और निष्फल लगती है वही यात्रा किसी साधक के सनिष्ठ में प्राणवन्त और जीवन्त हो जाती है, यह यात्रा मेरे लिए अन्यतम थी, अद्भुत थी ।

मार्ग में कई स्थानों पर श्रीमाली जी स्के थे और सभवत ग्यारहवें रोज वे जोधपुर पहुंचे थे ।

जोधपुर में उनके साथ मुझे लगभग तीन महीने रहने का सौभाग्य मिला । जोधपुर आकर मैंने उनके एक अलग रूप में ही दर्शन किए । यहा आकर वे पुन एक सामान्य गृहस्थ व्यक्ति बन गए थे और ऐसा प्रतीत ही नहीं हो रहा था कि यह

वही व्यक्तित्व है जिसने विश्व के सर्वश्रेष्ठ साधकों के सम्मेलन का सम्भापतित्व किया था।

जिन्होने श्रीमाली जी का वह रूप देखा है, उन्हे इस रूप में श्रीमालीजी को देख कर विश्वास ही नहीं होगा कि यह व्यक्ति साधना के क्षेत्र में सर्वोपरि है, विशिष्ट सिद्धियों का स्वामी है। जिसने श्रीमाली जी के गृहस्थ रूप को देखा है, वह उस रूप की कल्पना ही नहीं कर सकता, इन दोनों ही रूपों में जमीन आसमान का अन्तर है और दोनों ही रूप अपने आप में सर्वथा अलग हैं।

गृहस्थ रूप में श्रीमाली जी पूर्णतः सामान्य गृहस्थ के रूप में मुझे दिखाई दिए जों प्रसन्नता की बात सुनकर खिलखिला पड़ते हैं, किसी के कट्ट और दुख की बात सुनकर उदास हो जाते हैं, वे सामान्य आगन्तुक को भी उतना ही महत्व देते हैं जितना एक विशिष्ट व्यक्ति को दिया जाता है। उनके साथ विना किसी बौपचारिकता के बैठ जाते हैं, उनकी बात को ध्यानपूर्वक सुनते हैं, उनकी समस्याओं का समाधान करते हैं और वे इस प्रकार व्यवहार करते हैं जैसे पूर्णतः सामान्य गृहस्थ व्यक्ति हो।

मैं उनके इस रूप को देख कर आश्चर्यचकित रह गया था और आज भी आश्चर्यचकित हूँ कि अगर इतनी सिद्धियों की अपेक्षा एक आधि सिद्धि भी किसी के पास होती तो वह जमीन पर पाव तक नहीं रखता, घमण्ड से वह साधारण जन की ओर देखता तक नहीं और अपने अह में चौबीसों घण्टे डूबा रहता, जबकि इसके सर्वथा विपरीत श्रीमाली जी अत्यन्त साधारण रूप में सबके सामने प्रस्तुत होते हैं, उनसे बातचीत करते हैं और जहा तक हो सकता है, अपने विचारों से उन्हें सन्तुष्ट करते हैं। मेरा ऐसा अनुभव है कि उनके द्वारा से कभी कोई खाली नहीं लौटता, जो भी व्यक्ति जिस भावना से आता है, उसी भावना से सन्तुष्ट होकर लौटता है।

मैंने श्रीमाली जी के कई रूप देखे हैं, उनका ज्योतिष रूप अलग है, साठ से ज्यादा ग्रन्थों के वे रचयिता हैं और पूरे भारत में ज्योतिष को लोकप्रिय और जन-साधारण के लिए उपलब्ध बनाने में उनका सावधिक योगदान रहा है। आज भी वे निरन्तर ज्योतिष से सबधित शोध करते रहते हैं और अपने ज्ञान को पुस्तकों के माध्यम से समाज को भेंट करते रहते हैं।

मुझे लगभग तीन महीने श्रीमाली जी के साथ रहने का सौभाग्य प्राप्त हुआ, मैं तो अपना पूरा जीवन उनके चरणों में विता देना चाहता था। यह मेरे जीवन का सौभाग्य ही होता कि मेरा आगे का पूरा जीवन उनके चरणों में वीतता परन्तु कुछ विशेष कारणों से और उनकी आज्ञा से मुझे नए कार्य क्षेत्र को सम्भालना पड़ा। पर आज भी मैं मानसिक रूप से श्रीमाली जी से अपने आपको जुड़ा हुआ अनुभव करता हूँ।

मैं उन तीन महीनों का जब स्मरण करता हूँ तो कई घटनाएँ मेरी आखों के सामने धूम जाती हैं, एक प्रकार से देखा जाए तो उनके साथ रह कर जो व्यावहारिक ज्ञान प्राप्त होता है, वह अन्यत्र दुर्लभ है।

मैंने उन्हें निरन्तर श्रम करते हुए देखा है। यदि इस आयु का कोई दूसरा

व्यक्ति होता तो निश्चय ही वह थक कर चूर हो जाता । परन्तु मैंने उन्हे बीस-बीस घण्टे निरन्तर श्रम करते हुए देखा है, और जब तक मैं वहा रहा हू उनको इसी रूप में काम करते देखा है ।

प्रात चार बजे ही उनका शैया-स्थाग हो जाता है और लगभग पाच बजे वे पूजा कक्ष में चले जाते हैं, सात बजे से ग्यारह बजे तक वे आगन्तुकों से विरो रहते हैं, इन आगन्तुकों में साधारण जन से लेकर उच्च कोटि के नेता और अभिनेता होते हैं, वे न तो किसी से प्रभावित होते हैं और न किसी के प्रति उनके मन में दुर्भावना होती है, सभी को समान रूप से आतिथ्य देना और उनकी समस्याओं का समाधान करना उन्होंने अपना कर्त्तव्य समझ रखा है, जहा तक मैं समझता हू उनके द्वार से आज तक कोई खाली हाथ नहीं लौटा । लोग अपनी समस्याओं से ग्रस्त होकर उनके पास जाते हैं और प्रसन्नता के साथ हँसते हुए वापिस लौटते हैं, उस समय उनके चेहरे पर सन्तोष की पूर्ण छाप होती है, क्योंकि उनको जो समाधान मिलता है वह अपने आप में पूर्ण होता है ।

ग्यारह बजे से दो बजे तक वे भारतीय ज्योतिष अङ्गययन ऐनुसधान केन्द्र का कार्य देखते हैं, इस सबध में निर्देश देते हैं तथा व्यक्तिगत पत्रों के जवाब मिजवाते हैं, इसके बाद उनकी भव्यान्ह-सम्भावा होती है फिर भोजन होता है, इस समय उनके घर में जो मेहमान होते हैं उनसे वातचीत होती है और उनकी समस्या का समाधान इसी समय होता है ।

इसके बाद वे भव्यान्ह साधना के लिए भूगर्भ गृह में चले जाते हैं, शाम को पाच बजे से आठ बजे तक पुन आगन्तुकों से भेट करते हैं और उनकी इच्छाओं की पूर्ति इसी समय होती है, सध्या में अधिकतर बाहर से आने वाले उनके शिष्य, सन्यासी साधु और साधक होते हैं, जो उनसे प्रेरणा ग्रहण करने आते हैं या उनसे मार्गदर्शन प्राप्त करते हैं । इस प्रकार यह पूरा समय उनका प्रेरणा रूप ही रहता है, उनके द्वार प्रत्येक साधक, साधु और सन्यासी के लिए खुले हैं, विना हिचकिचाहट के साधक अपनी जिज्ञासा उनके सामने रखते हैं और विना हिचकिचाहट के उनको समाधान मिलता है, इस समय उनका गुरु का रूप न होकर एक मित्र का सा रूप बन जाता है ।

आठ बजे से ग्यारह बजे तक वे दिन भर की डाक देखते हैं जो कि उनकी व्यक्तिगत डाक होती है, यो तो केन्द्र में नित्य सैकड़ों पत्र आते हैं परन्तु नीति सबधी पत्र या उनके व्यक्तिगत पत्र इसी समय वे पढ़ते हैं और सचिव को निर्देश देते रहते हैं ।

साढे ग्यारह बजे के लगभग पुन भोजन होता है और इस समय घर के सारे सदस्य और आगन्तुक मेहमान एक स्थान पर बैठ कर भोजन करते हैं, इस समय किसी प्रकार का भेदभाव नहीं रहता है, वास्तव में ही इस समय का वातावरण और माहौल एक अलग-सा हो जाता है, क्योंकि इस समय घर के सदस्य होते हैं और भोजन में केवल वे आगन्तुक मेहमान होते हैं जो कि उनके परिवार से सवित होते हैं या उनके

अन्यतम है, यह सौभाग्य बहुत ही कम लोगों को प्राप्त होता है और जिसने भी इस वातावरण में इनके साथ भोजन किया होगा वह कभी भी उन क्षणों को भुला नहीं पायेगा।

भोजन के बाद वे सीधे साधना कक्ष में चले जाते हैं और अपनी साधना में रत हो जाते हैं, सुवह चार बजे उनके मुह से निसृत वेद ध्वनि पुन सुनाई देती है जब वे उठ जाते हैं, इस अवधि में अर्थात् साढ़े ग्यारह से चार बजे तक उन्हें साधना कक्ष में ही देखा जा सकता है, पना नहीं वे कव सोते हैं, कव नीद लेते हैं, कव बापस उठ जाते हैं इसके बारे में कुछ भी नहीं कहा जा सकता, वास्तव में ही योगियों की माया योगी ही जान सकते हैं।

परन्तु इन्हें श्रेष्ठ योगी होते हुए भी वे घर में अत्यन्त सामान्य गृहस्थ दिखाई देते हैं, घोती और कुरता उनका परिधान है, वे हर क्षण व्यस्त रहते हैं दिन भर सैकड़ों लोगों से मिलना, उनका आतिथ्य सल्कार करना, उनका भार्गदर्शन करना, ज्योतिष से सर्वधित कार्य करना, अपनी साधना में और पूजा में रत रहना, तथा शिष्यों को वरावर भार्गदर्शन देते रहना आदि कार्यों के साथ वे अपने गृहस्थ स्वरूप को भी वरावर बनाए रखते हैं। उनको गृहस्थ रूप में देखकर विश्वास ही नहीं किया जा सकता कि वह व्यक्ति तत्र और मन्त्र के क्षेत्र में अद्वितीय है इस व्यक्तित्व के पान जो सिद्धिया हैं वे अन्यतम हैं या यह भारत के श्रेष्ठतम मात्रिकों और तात्रिकों में से एक है।

उनकी वाणी में पूर्णत नम्रता रहती है। मैंने तीन महीने की अवधि में एक बार भी उन्हें उदास या चिन्तित नहीं देखा, हर समय उनका चेहरा प्रफुल्लित रहता है और सामने वाले व्यक्ति को भी अपने आनन्द में भागीदार बनाए रखता है, सामने वाला व्यक्ति अपनी परेशानियों को बढ़ा-चढ़ा कर कहता है पर श्रीमाली जी उन्हें नहीं, अपितु धैर्यपूर्वक उसकी बात सुनते हैं, सुनने के बाद वे अपनी मामल्ये को कुछ भी सहायता कर सकते हैं करते हैं, माय ही उसे भार्गदर्शन भी देते हैं उसकी समस्या का निराकरण हो सके और वह अपने जीवन में मण्डल बना सके।

इसके अतिरिक्त मैंने उन्हें इन तीन महीनों में एक क्षण के लिए करते हुए नहीं देखा। हर समय वे अपने रचनात्मक कार्यों में उन्हें जीवन के प्रत्येक क्षण का महत्व है और वे उस महत्व को अपने जीवन में ले जाते हैं।

मैंने सुना या कि उनके गुरु स्वामी सच्चिदानन्द जी के सामने वह अप्राप्य जीवन में भेजा तो उन्होंने आप्रह किया कि मैं पुन गृहस्थ बनूँ तो उन्हें नहीं हूँ, मेरा विवाह हो चुका है पर मैं अपनों शरण में उपनिषद् वेद और वह भी मेरी ही तरह साधना पथ अपना ले रहा है वह उन्हें वह नहीं देकोई लाभ नहीं है, मैं आपके ही चरणों में दैदूर रूप बनूँ तो उन्हें वह चाहता हूँ जो कि अगम्य और अप्रत्यक्ष है।

परन्तु सच्चिदानन्द जी के सामने वह बना दिया —

कि इस साधना को और ज्योतिप को पुन विश्व में स्थापित करना है और भारत की खोई हुई इस सम्पदा से पुन भारतीय जनजीवन को अवगत कराना है। अत इसी कार्य की पूर्णता के लिए उनका आग्रह वापिस उन्हे गृहस्थ जीवन में भेजना था।

परन्तु उन्होंने एक अवधि दे दी थी कि इस अवधि तक ही तुम्हे गृहस्थ जीवन में रहना है और तब तक जो कार्य तुम्हे सोंपा गया है, उसे पूर्णता प्रदान करना है, इसके बाद तुम्हे पुन गृहस्थ जीवन छोड़कर सन्यास जीवन धारण कर लेना है और शेष जीवन 'सिद्धाश्रम' में ही व्यतीत करना है।

सिद्धाश्रम एक अगम्य और दुर्गम स्थान है जो कि हिमालय में कही अत्यन्त कचे स्थान पर स्थित है जहा पर सामान्य मानव का पहुचना सभव नहीं है, सिद्धाश्रम के बारे में कई भारतीय योगियों ने विवरण दिया है और अग्रेज लेखकों ने भी इस बारे में काफी कुछ लिखा है, तिव्वत के लामा ग्रन्थों में भी इस बारे में काफी कुछ पढ़ने को मिलता है।

कहा जाता है कि साधना की उच्चतम स्थिति आने के बाद ही वह साधक सिद्धाश्रम में जाने के लिये योग्य माना जाता है जिसका सहस्रार कमल खुल चुका होता है और जो तत्र या मत्र वयथा अध्यात्म के क्षेत्र में सर्वोच्च स्थिति को पहुच चुका होता है, इसके साथ ही कुण्डलिनी जागरण का वह पूर्ण अघ्येता होता है, इसके बाद उसके सवध में ज्ञात किया जाता है और फिर उसे सिद्धाश्रम में प्रवेश की अनुमति मिलती है। वहुत ही कम साधक ऐसे होते हैं जो सिद्धाश्रम में जाने के बाद पून जनजीवन में आ पाते हैं।

सिद्धाश्रम में अत्यन्त उच्चकोटि के योगी और साधक अपनी साधना में रत हैं और यह सुना गया है कि कुछ योगी तो २००० वर्षों से निरन्तर साधना में रत हैं, कुछ योगियों की उम्र ५००० वर्ष से भी ज्यादा बताई जाती है।

उन योगियों के लिये भूत, भविष्य कुछ भी अगम्य नहीं, वे आकाश गमन प्रक्रिया के सिद्धहस्त साधक होते हैं और मन के वेग से वे किसी भी स्थान पर यान्त्रा सकते हैं, उच्च कोटि की साधना उनके जीवन का अभिष्ट होती है, परन्तु इस सिद्धाश्रम में प्रवेश की कसौटी अत्यन्त कठोर और कठिन होती है। वह साधक निश्चय ही ससार के सौभाग्यशाली साधकों में गिना जाता है, जिनको सिद्धाश्रम में प्रवेश की अनुमति मिल जाती है।

ऐसे तो विरले ही साधक होते हैं जिन्हे सिद्धाश्रम में जाकर पुन जनजीवन में आने की अनुमति मिलती है। त्रिजटा अधोरी और भूर्भुआ बाबा से मुझे ज्ञात हुआ था कि श्रीमाली कई बार वहां जा चुके हैं और अब भी रात्रिकालीन साधना में वे वहां जाते रहते हैं।

मैंने जब यह जिज्ञासा श्रीमाली जी के सामने रखी तो वे हसकर टाल गये। उनकी यह प्रवृत्ति है कि जिस प्रश्न का उत्तर नहीं देना चाहते उस प्रश्न को सुनकर सहज में ही टाल देते हैं और बातचीत को किसी और मोड पर बदल देते हैं, पर

जिन्होंने श्रीमाली जी के प्रात कालीन दर्शन किये हो तो वह उस समय उनके चेहरे की दिव्यता देखकर प्रभावित हो जाते हैं और मन यह मानने के लिये वाध्य होता है कि निश्चय ही श्रीमाली जी रात्रि साधना में किसी ऐसे स्थान पर सशारीर रूप से अवश्य जाते हैं जो कि दिव्य होता है और उसी दिव्यता की छाप उनके प्रात कालीन क्षणों में देखी जा सकती है।

एक बार मैंने उनसे यह प्रश्न किया था कि आप अद्वितीय साधनाओं के सफल साधक हैं फिर भी आप अत्यन्त सामान्य तरीके से रहते हैं, साधारण गृहस्थी के रूप में आचरण और व्यवहार प्रदर्शित करते हैं। आपके इस रूप को देखकर आभास ही नहीं होता कि आप इतनी सिद्धियों के स्वामी हैं, इससे कई बार साधारण आगन्तुक भ्रम में पड़ जाता है वह पुस्तकों के भाष्यम में आपके बारे में जब पढ़ता है तो उसके मानस में एक अलग ही विष्व उभरता है, वह विष्व एक असाधारण व्यक्ति का होता है—लम्बा चौड़ा शरीर, गौर वर्ण, लम्बी सफेद दाढ़ी, उम्र लगभग ८०-९० के आस-पास, और एक अद्वितीय व्यक्तित्व, इस विष्व को लेकर साधारण मानव आपसे मिलने के लिये इतनी दूर की यात्रा करके आता है तो वह मन-ही-मन आशक्ति रहता है कि श्रीमालीजी के दर्शन होंगे भी या नहीं? उनसे मिलना सभव हो सकेगा या नहीं? वे बातचीत करेंगे भी या नहीं? या कई दिनों तक प्रतीक्षा करनी पड़ेगी तब जाकर उनके दर्शन हो सकेंगे? आदि कई कल्पनाएं उनके मानस में इस प्रकार की रहती हैं।

परन्तु जब वह आपके द्वार पर आता है, तो उसे भीड़-भाड़ दिखाई नहीं देती, आडम्बर और छल अनुभव नहीं होता, कोई नीकर द्वार नहीं खोलता, दरवाजे पर कोई पहरेदार नहीं मिलता और सीधे आपसे ही भेट हो जाती है, द्वार आप स्वयं खोलते हैं और आपका व्यक्तित्व एक सामान्य गृहस्थ व्यक्ति के समान दिखाई देता है, तब वह आगन्तुक हतप्रभ हो जाता है, उसका विष्व खण्ड-खण्ड हो जाता है, वह सहज ही विश्वास नहीं कर पाता कि जो कल्पना श्रीमाली जी के बारे में उसके मानस में थी उसके स्थान पर जो साधारण व्यक्ति उसके सामने खड़ा है, वही आज के युग का सर्व-श्रेष्ठ साधक और ज्योतिविद श्रीमाली है।

प्रश्न सुनकर श्रीमाली जी जोरो से हस पड़े, उन्होंने कहा तो क्या मैं आडम्बर से रहना प्रारम्भ कर दूँ? अपने चारों ओर एक ऐसी दीवार खड़ी कर दूँ जो कि मेरे और जनमानस के बीच में हो। मैं ऐसा नहीं कर सकता, लोगों का विष्व यदि खण्डित होता है तो होने दिया जाय, मेरे स्वरूप या मेरी आकृति से व्यक्ति प्रभावित होता है या नहीं इसकी मुझे चिन्ता नहीं है, जो व्यक्ति मेरे कपड़ों और मेरे शरीर को देखने के लिये आयेगा उसको अवश्य ही निराशा मिल सकती है परन्तु जो मूल रूप से श्रीमाली जी से मिलने के लिये आयेगा वह मेरे कपड़ों की तरफ नहीं ज्ञानेगा अपितु वह मेरे मानस से साक्षात्कार करेगा। तब अवश्य ही उसको वह सब कुछ प्राप्त हो सकेगा जिसके लिये वह आया है।

एक अन्य चर्चा के दीरान उन्होंने बताया कि मैं व्रमत्कार में विश्वास नहीं

करता । चमत्कार वे बताते हैं जो अन्दर से खोयले होते हैं जो समाज में अपना उल्लू सीधा करना चाहते हैं जो इस प्रकार का चमत्कार दिखाकर धनवान बनना चाहते हैं या अपना सम्मान चाहते हैं क्योंकि उनके पास चमत्कार के अलावा ठोस रूप में और कुछ नहीं होता, जो घड़ा भरा हुआ होता है, वह छलकता नहीं, वही घड़ा छलकता है, जो पूरी तरह से भरा हुआ नहीं होता ।

मुझे न तो सम्मान की भूख है, और न मैं अपना सम्मान चाहता हूँ, मैं मानव हूँ और केवल मानव बना रहना चाहता हूँ । न मुझे धन सम्पदा की लालसा है, और न मैं धनवान कहताना चाहता हूँ, इसलिये न तो मैं चमत्कार दिखाता हूँ और न चमत्कार दिखाना पसन्द करता हूँ ।

यह अवश्य है कि लोग जब मेरे सामने आते हैं तो उनके दिमाग में कल्पना सृजित कुछ और विष्व रहता होगा और उसकी हार्दिक इच्छा यही रहती होगी कि श्रीमाली जी के सामने जाते ही कुछ अद्भुत अलौकिक चमत्कार देखने को मिलेगा, परन्तु वातचीत के दीरान जब उन्हे ऐसा कुछ भी चमत्कार देखने को नहीं मिलता तो वे अवश्य ही निराश हो जाते होंगे । इतना होने पर भी मैं अपने असूलों से हटना नहीं चाहता । मेरे जीवन का यह निश्चित ध्येय है कि मुझे न तो चमत्कार दिखाना है और न मैं इस प्रकार के कार्य को पसन्द करता हूँ फिर भले ही सामने वाला व्यक्ति मुझमे आस्था रखे या न रखे, मुझ पर विश्वास करे या न करे, मैं इस बात की कतई चिन्ता नहीं करता ।

उनका जीवन दर्शन अपने आप में विशिष्ट है, और मैं समझता हूँ कि इसी विशिष्टता के कारण वे आज उस स्तर तक पहुँच सके हैं जो कि अपने आप में अन्यतम है, यदि वे प्रारम्भ से ही चमत्कार दिखाने के फेर मे पड़ जाते तो उनका अधिकाश समय इसी प्रकार के कार्यों में व्यतीत हो जाता और जो कुछ वे ठोस रूप में कार्य कर सके हैं वे नहीं कर पाते, आज उन्होंने साधना के क्षेत्र में जो उपलब्धिया प्राप्त की है, वे तभी सभव हो सकी हैं जब उन्होंने सस्ती लोकप्रियता नहीं चाही और अपने जीवन के प्रत्येक क्षण को ठोस कार्य से परिणत करने में विश्वास रखा ।

यह अवश्य है कि यदि वे चमत्कार दिखाते तो आज बहुत अधिक सम्पन्न और धनी हो सकते थे, उनके पीछे हजारों शिष्यों की फौज हो सकती थी और अखबारों के माध्यम से विज्ञापित कर अपने आपको दूसरा भगवान सिद्ध कर सकते थे, परन्तु यह उनके जीवन की मान्यता नहीं है । वे इस प्रकार की धारणा के सर्वथा विपरीत है, उनका जीवन दर्शन मानव बने रहना है और मानवता को ही उन्होंने अपने जीवन में सबसे अधिक स्थान दिया है ।

सामान्यत, सहजता, सुगमता, सरलता आदि मानवता के गुण हैं और इन गुणों से श्रीमाली जी पूर्ण है, उनके द्वार पर कोई भी व्यक्ति किसी भी समय आ सकता है और अपनी जिज्ञासा को शान्त कर सकता है, उनके मन मे न तो किसी के प्रति प्रशंसा का भाव है, और न नफरत, वे विरोधी को भी उतने ही प्रेम के साथ अपने

साथ विठाकर बात करते हैं, जितनी अपने परम प्रिय शिष्य से करते हैं, यह उनकी महानता है, और मैं जितना ही गहराई में जाता हूँ उतना ही उनके प्रति मेरा सिर नमन हो जाता है।

उनके सानिध्य में कई शिष्य साधना रत हैं, सुना है कि जोधपुर के पास किसी पहाड़ी में कई गुफाएँ बनी हुई हैं जो कि श्रीमाली जी की व्यक्तिगत हैं और उन गुफाओं में साधक, साधना रत है, उन साधकों में कुछ साधक तो अत्यन्त उच्च साधना से भी सम्पन्न हो सकते हैं और आज उनका नाम श्रेष्ठ साधकों में गिना जाने लगा है, मैंने एक दो बार उन गुफाओं को खोजने का प्रयत्न भी किया था, परन्तु मैं उसमें सफल नहीं हो सका, साथ ही मैं यह काम चोरी से कर रहा था क्योंकि श्रीमाली जी से यदि मैं इस प्रकार की अनुमति लेता भी, तो वे सभवत अनुमति नहीं देते, उन गुफाओं में वही साधक प्रवेश करने का अधिकारी होता है जो श्रीमाली जी का शिष्य होता है और शिष्यता के मापदण्ड पर खरा उत्तरता है।

जहाँ तक शिष्यता का प्रश्न है, श्रीमाली जी इस मामले में अत्यन्त कठोर हैं, वे तो स्पष्ट कहते हैं कि मुझे शिष्यों की फौज खड़ी नहीं करनी है, मैं चुनकर शिष्य बनाता हूँ और शिष्य बनाने से पूर्व उनकी कड़ी परीक्षा लेता हूँ। हल्का-फुल्का व्यक्ति सहज में ही उड़ जाता है, आधे मन का व्यक्ति महीने दो महीने में भाग खड़ा होता है, कुछ ही ऐसे सौभाग्यशाली होते हैं जो उनकी कस्ती पर खरे उत्तरते हैं, और जो शिष्य उनकी कस्ती पर खरा उत्तर जाता है वह अपने दाय पर अद्वितीय हो जाता है क्योंकि उसके आगे के सारे रास्ते खुल जाते हैं और वह अपने पथ पर तीव्रता से बढ़ने में सक्षम हो जाता है।

मैंने इन तीन महीनों में देखा कि बाहर से जितने व्यक्ति मिलने के लिए आते हैं उनमें से कई व्यक्ति या नवयुवक उनके शिष्य बनाने के लिए आते हैं, उनके मन में एक ही भाव होता है कि उसे श्रीमाली जी तुरन्त शिष्य बना लेंगे और कुछ ही दिनों में वह सिद्धियों का स्वामी हो सकेगा। आते ही उनके मुह से यही भाव निकलता है कि मैं तो पिछले पाच या सात या दस वर्षों से मन-ही-मन आपका शिष्य रहा हूँ और एकलव्य की तरह आपको गुरु मानकर साधना के लिए प्रयत्न करता हूँ, परन्तु मुझे सफलता नहीं मिल पाई है इसीलिये आपके चरणों में उपस्थित हुआ हूँ।

श्रीमाली जी उसकी बात सुनकर हस पड़ते हैं और साधना के बारे में कुछ ऐसा डरावना माहौल उसके सामने उपस्थित करते हैं कि वह अज्ञात भय से घबरा जाता है, साधना का जो भूत उसके सिर पर होता है, वह उत्तर जाता है और अपने घर के लिए प्रस्थान कर लेता है। इस प्रकार के नवयुवकों को वे एक ही नजर में परख लेते हैं कि यह युवक ज्यादा समय तक सधर्ष नहीं कर पायेगा, यह केवल दिवा-स्वप्न लेकर आया है, अत उसे समझा-नुझाकर बापस घर भेज देते हैं और उसे यही सलाह दी जाती है कि तुम दो या तीन वर्ष बाद बापस आना। यदि उस समय श्री

तुम्हारे मन में साधना की आग सुलगती हुई देखी तो मैं अवश्य ही तुम्हें इन पथ पर बढ़ा दूगा ।

कुछ ही नवयुवक या साधक जीवट वाले होते हैं जो हर प्रकार की परीक्षा और कठिनाई झेलने के लिए तैयार होते हैं । उनकी आखो में एक विशेष प्रकार की चमक होती है, उनके हृदय में एक कठोर और दृढ़ निश्चय होता है और वे किसी भी प्रकार की वाधाओं का सामना करने के लिए तैयार दिखाई देते हैं । ऐसे साधकों को देखते ही श्रीमाली जी पहचान लेते हैं कि यह हीरा बन सकता है अभी उम पर काफी गर्द जमी हर्द है, यदि यह गर्द दूर की गई और पालिङ की गई तो आगे चल-कर यह अमूल्य हीरा बन सकता है ।

पर इतना होते ही उसको शिष्य नहीं बना लिया जाता, अपितु उसे घर के काम-काज के लिए रटा लिया जाता है, यदि वह युवक होता है, तो उसे यह आज्ञा होती है कि वह अपने माता-पिता की स्वीकृति लेकर आवे ।

इसके बाद उसे आज्ञा होती है कि तुम यहीं पर कहीं ठहरने का प्रबन्ध करो और कुछ ऐसा भी प्रबन्ध करो जिससे कि तुम्हारे भोजन का निर्वाह हो सके, इसके बाद जो समय बचे वह समय मेरे साथ व्यतीत कर सकते हो, यदि तुम विना किसी से याचना किए इस शहर में रहने और अपने भोजन की व्यवस्था कर लोगे तो जागे रास्ता तुम्हे मिल जाएगा ।

बहुत ही कम ऐसे सौभाग्यशाली होते हैं जिनको श्रामाली जी के घर में रहने का सौभाग्य मिलता है, पर उसे पहले ही दिन काफी बढ़ा-चढ़ा कर परेशानियों और कष्टों का जिक्र किया जाता है कि यदि तुम्हे मेरे घर में रहना है तो घर का बहुत सा काम करना होगा और कभी-कभी तो बीस-बीस घण्टे भी काम करना पड़ेगा, इस प्रकार के कामों में घर का फूस निकालने से लेकर बाथरूम साफ करने तक का काम भी हो सकता है, इस प्रकार के कामों में थकावट या निराशा में नहीं देखना चाहूँगा । सालभर तक न तो मैं तुम्हे किसी प्रकार की साधना सिखाऊगा और न किसी प्रकार की धनराशि काम के बदले में दे सकूँगा ।

पर, जो जीवट के धनी होते हैं, वे इस प्रकार की शर्तों से घदरात नहीं हैं अपितु सहर्ष इस प्रकार की चुनौती स्वीकार कर लेते हैं, जान-बूझकर पण्डितजी उनकी परीक्षा लेने के लिए प्रारम्भ में जरूरत से ज्यादा काम सौंप देते हैं या जान-बूझकर बातचीत नहीं करते या जान-बूझकर जरूरत से ज्यादा उसे फटकार देते हैं जिससे कि वह यदि कमजोर होता है, तो भाग खड़ा होता है । परन्तु मैंने देखा कि जो एक बार उनके घर में प्रवेश पा लेता है, वह न घबराता है, न परेशान होता है और न किसी प्रकार की तकलीफ उसके सामने आती है ।

क्योंकि उस घर में मात्र पण्डित जी ही नहीं हैं, अपितु एक वात्सल्यमयी मा भी है, जो कि पण्डितजी की पत्नी हैं, उनका स्वरूप पूर्ण गृहस्थ रूप है । सुबह चार बजे से रात बारह बजे तक वे निरन्तर घर के कार्यों में लगी रहती हैं, घर में मेह-

मानों या नाता नगा ही रहता है, उन भवका स्वागत-भक्तार करना, उनके लिए भोजन-शेय आटि की व्यवस्था करना आदि भारा कार्य उनके जिम्मे रहता है और इसी को भी आज तक किसी प्रकार की शिकायत करने का मौका नहीं मिल पाया है।

उनका न्येह-अमृत-वर्षण बगवर शिष्यों पर बना रहता है, उनकी शब्दाया में न तो किसी प्रकार या अपाव महसूम होता है और न किसी प्रकार की कठिनाई आती है, वे स्वप्र अधिक काम लेने पर शिष्य से आम न लेकर चुद कर लेती है, नमय पर उनके भोजन की व्यवस्था जगती है और टीक उसी प्रकार मे भोजन जगती है जिन प्रकार मे एक या अपने अबोध बच्चे जो करती है, जबकि उसी मे ग्रादा भोजन करना या उसे सौगत्य दिनांक ज्यादा ही याने के लिए प्रेरित रहना उनका स्वभाव है। उनको यह आशंका बराबर दती रहती है कि कहीं पह बच्चा नकोच के मारे भूखा न रह नाए या किसी प्रकार नी उसको नहीं फ़िकर न हो जाए।

थोटी-नी भी लापरवाही श्रीमानी जी को महन नहीं होनी थी यदि कभी लापरवाही बगड़ने पर किसी ओ ढाट मिल जानी है तो तुरल्त दूसरे ही क्षण उनकी मा या न्येह मिन जाता है, वह उसको पुच्छारती है और उसके लिए खुद श्रीमानी जी तो उपालम्ब दे देती है, कि उस बालक पर उनका कुछ अरना कहा तरु उचित है।

उनके घर में जो शिष्य रहते हैं वे उस वान्यत्यमयी मा या न्येह निर्मनर प्राप्त करते रहते हैं और उन्हें तुठ ऐसा अनुभव होता है जिसे वे स्वर्ग मे हो और जीवन के मधुरतम क्षण वही पर उनको प्राप्त होते हैं।

मैंने उस ममतामयी मा का न्येह देखा है, उनके प्रेम मे मैं आप्ताविन चहा हूँ और आज जप मे उनमे काफी दूर हूँ फिर भी जप उस मा या स्मरण होता है तो मेरी आदों मे आम छन्ठना आते हैं। जाण ! मुझे ग्रन्त वार फिर उनके घर मे रहते जा अवसर मिले और मैं उस मा या न्येह प्राप्त बर सक्। जाण ! मैं उस मा यी कोप मे पैदा हुआ होता ।

श्रीमानी जी का एक गृहस्थ दृष्टि भी है जिसे बहुत ही कम लोगों ने देखा होगा, वे अपने आप मे पूर्ण गृहस्थ हैं और शास्त्रों मे गद्गहन य की जो व्याख्या है उस कारीटी पर वे खरे उतरते हैं। लोगों ने उनके योगी न्यप या योतिषी का दृष्टि देखा होगा परन्तु जिस किसी ने भी उनके गृहस्थ न्यप वो देखा है वह आज्ञवंचकित रह जाता है क्योंकि उस न्यप मे वे उन सारी सुमन्याओं को और कठिनाइयों को ध्यान पूर्वक मुनाने हैं जिस प्रकार ने एक गृहस्थ अपनी पारिखारिक समन्याओं को मुनाना है।

थोटे बच्चों के माथ बान के ने ममय ऐसा नगता ही नहीं कि पह अक्षि प्रोह हे या उसने जिन्दगी के बहुत अधिक दनार बदाव देने हैं। उस ममय उनका स्वभाव तिकृत थोटे शिष्य की तरह हो जाता है, उनके माथ के नेलते हैं और नेल-गिर मे नव्य हार जाते हैं। ऐसा बातावरण बन जाता है कि बच्चे उनको ऐसा क्षण के लिए भी थोटना पसन्द नहीं करते, पर यूरे चौदीम घण्डों मे ऐसा समय आधा घटा

ही होता होगा जब वे उन बालकों के बीच खो जाते हैं, मैंने उन्हें इस रूप में देखा है और मैं सोचता हूँ कि यह कितना सरल और सात्त्विक हृदय है जो बच्चों के बीच ठीक उसी प्रकार से बच्चा बन जाता है जैसे कि कोई अन्य बालक हो। उस समय उनके पास पौत्र आकर अपनी मां की शिकायत करता है, वडे भाई की शिकायत की जाती है और वे उन सारी शिकायतों को ध्यानपूर्वक सुनते हैं और उसी समय सम्बन्धित व्यक्ति को बुलाकर फटकार भी दे दी जाती है और ऐसा होते समय उस बालक का मीना फूल जाता है कि मैंने बाबा से फटकार दिला दी है, बालकों की सुप्रीम अदालत यही है और यहां पर वे पूर्णत सन्तुष्ट होते हैं, दिनभर का जो कुछ गुवार होता है वह इस समय निकलता है और वे हमेशा बालकों का ही पक्ष लेते हैं।

ज्योतिष के क्षेत्र में इस अकेले व्यक्तित्व ने इतना अधिक कार्य किया है जितना एक पूरी संस्था भी नहीं कर पाती। जिस समय इन्होंने निश्चय किया था उस समय भारत में ज्योतिष मात्र पण्डितों की धरोहर बन गई थी और वे जो कुछ भी उलटा-सीधा कह देते थे वही आख मूढ़कर मान लिया जाता था, परन्तु उन पण्डितों की ज्योतिष में गहराई न होने के कारण फलादेश अप्रामाणिक होता था, फलस्वरूप लोगों की आस्था ज्योतिष से हटने लग गई थी, एक प्रकार से ज्योतिष जन-समाज से कट गई थी, ऐसी स्थिति में श्रीमाली जी ने ज्योतिष को जन-साधारण में सुलभ करने के लिए अल्पमोली पुस्तकें लिखी और समाज में वितरित की, कम मूल्य की होने के कारण आम आदमी इस प्रकार की पुस्तकों में रुचि ले सका, पुस्तकों की भाषा इतनी सरल है कि व ज्योतिष में कुछ ज्ञान प्राप्त कर सकें, इस बजह से देश में पुन ज्योतिष की धारणा और इसके प्रति चेतना बनी और आज भारत में जिस प्रकार से ज्योतिष पुन लोकप्रिय हो रही है, उसका बहुत बड़ा श्रेय इस व्यक्तित्व को जाता है।

छोटी-छोटी पुस्तकों के अलावा इन्होंने ग्रन्थों की भी रचना की है और उसमें ज्योतिष के मूल सिद्धान्तों को स्पष्ट किया है उन खोई हुई कडियों को पुन इन पुस्तकों के माध्यम से पडितों को सुलभ किया है जिससे कि ज्योतिष अपने आप में पूर्णत प्रामाणिक बन सके, आज पूरे भारत में ज्योतिष को पुन वही स्थान प्राप्त हो सका है जो कि प्राचीन समय में था।

ज्योतिषियों और विद्वानों ने श्रीमाली जी को आधुनिक 'वराह मिहिर' की सज्जा से विभूषित किया है, वास्तव में ही आधुनिक ज्योतिष—जो जिस प्रकार से इन्होंने लोकप्रिय बनाया है, और ज्योतिष के लुप्त रहस्यों को उजागर किया है, उस दृष्टि से वह इन्हे 'वराह मिहिर' कहा जाता है, तो वह उचित ही है।

पण्डितजी को मैंने कई रूपों में देखा है और प्रत्येक रूप अपने आप में बढ़-चटकर है। ज्योतिष के क्षेत्र में उन्होंने अद्वितीय कार्य किया है और जो कुछ थोस कार्य हुआ है, उससे आने वाली पीडिया मार्गदर्शन प्राप्त कर सकेंगी, इसके अलावा ज्योतिष के गणित और फलित विषयों में समन्वय स्थापित किया है, पचासों में जो विविधता और त्रुटिया थी उन्हें सशोधित कर सही ग्रह पथ को स्पष्ट किया है, तात्त्विक क्षेत्र में

यह व्यक्तित्व अद्वितीय है, मन्त्र शास्त्र के क्षेत्र में इन्होंने उसको मूल ध्वनि को स्पष्ट किया है क्योंकि मन्त्र का मुख्य आधार उसकी ध्वनि और सबधित आरोह-अवरोह है, जब तक मन्त्र के इस मूल रहस्य को प्राप्त नहीं किया जाता तब तक मन्त्र का प्रभाव नहीं हो पाता। इन्होंने मन्त्र की मूल आत्मा, उसका कीलन, उत्कीलन तथा उसकी मूल ध्वनि को स्पष्ट किया है, जिससे कि मन्त्र मूल रूप से पुनः साधकों को प्राप्त हो सके। मन्त्र के क्षेत्र में जो कुछ योगदान श्रीमाली जी का रहा है, वह अपने आप में अद्वितीय है और इसका मूल्याकान मन्त्र शास्त्री तथा तत्र मर्मज्ञ ही कर सकते हैं। आज भी मन्त्र अध्येता श्रीमालीजी को मन्त्र के सवध में पूर्णता मानते हैं और उनकी राय में श्रीमालीजी का कथन अन्तिम निर्णित होता है।

वाम मार्गी साधना अत्यन्त दुष्कर और कठिन होती है, क्योंकि इसमा अधिकाश भाग 'शमशान-साधना' से प्रभावित होता है, इस साधना में भी इन्होंने सर्वोच्चता प्राप्त की है जो कि बहुत ही कम साधक प्राप्त कर सकते हैं। 'अघोर-सिद्धान्त' में जो उन्होंने नवीनता दी है वह अपने आप में अन्यतम है क्योंकि इसके माध्यम से यह साधना सहज और सुगम हो सकी है।

पण्डितजी का एक और रूप मैंने आयुर्वेद विज्ञान में देखा है, बहुत ही कम लोगों को यह ज्ञात होगा कि आयुर्वेद के क्षेत्र में भी इन्होंने बहुत कुछ प्राप्त किया है जो कि अन्यतम है। किमी पुस्तक में मैंने पढ़ा था कि सीताराम स्वामी जो कि आयुर्वेद के क्षेत्र में पूरे विश्व में सम्मान के साथ स्मरण किये जाते हैं, उनसे इन्होंने आयुर्वेद का ज्ञान प्राप्त किया था और कुछ विशेष वीमारियों की चिकित्सा में तो ये सिद्धहस्त माने जाते हैं। दमा, क्षय, आदि रोग और उनकी चिकित्सा के बारे में इन्हे अन्यतम ज्ञान है, कई साधुओं, सन्यासियों, नागाओं और अधोरियों के साथ रहने और उनके साथ काफी समय व्यतीत करने के कारण उनसे इस सवध में जो कुछ भी ज्ञान प्राप्त हो सका वह अद्भुत और आश्चर्यचकित है, क्योंकि कई जड़ी बूटियाँ ऐसी हैं जिनका प्रभाव तुरन्त और निश्चित होता है, इन जड़ी बूटियों का श्रीमाली जी को पूर्ण ज्ञान है, और इनके माध्यम से इन्होंने कई दुष्कर रोगों का निदान किया है तथा उसमें उन्हे आश्चर्यजनक सफलता प्राप्त हुई है।

परन्तु इन्होंने अपने आयुर्वेद रूप को कभी भी ज्यादा प्रकट नहीं किया, जिन लोगों को ज्ञात हैं वे जानते हैं कि ऐसे कई रोगों निरन्तर आते रहते हैं जो सभी बैद्यों और डाक्टरों से यक जाते हैं। इस प्रकार के रोगियों को स्वस्थ करने में इन्हे विशेष आनन्द प्राप्त होता है, इतना होने पर भी उनसे किसी भी प्रकार का व्यय नहीं लिया जाता है, अपितु कई बार तो अपने पास से व्यय करके भी उन्हे स्वस्थ होता देख आनन्द अनुभव करते हैं।

मैंने श्रीमाली जी के बारे में जो कुछ लिखा है, वह किसी भावना के वणीभूत होकर नहीं लिखा है, अपितु जो कुछ मैंने देखा है, जो कुछ मैंने अनुभव किया है, उसे ही कागजों पर उतारा है, मैं मूलत पत्रकार हूँ और आलोचना मेरा प्रथम धर्म है,

धोडी-सी भी त्रुटि या कमजोरी को बढ़ा-चढ़ाकर उजागर करने का प्रवृत्ति पत्रकार में सबसे पहले होती है, मैंने श्रीमाली जी के व्यक्तित्व को आलोचक की दृष्टि से देखा है उसमे न्यूनता और कमजोरी दूढ़ने का प्रयत्न किया है, परन्तु मैंने जो कुछ देखा है वह अपने आप मे पूर्ण रूप मे अनुभव हुआ है, उसमे कहीं पर भी छिद्र या न्यूनता दिखाई नहीं दी।

इतना होने पर भी श्रीमाली जी मे आज के युग को देखते हुए कई कमिया है—वे भावुक प्रकृति के हैं और किसी के भी दुख को देख कर वे तुरत्त दयार्द्ध हो जाते हैं और प्रत्येक प्रकार से उनकी सहायता करने के लिये तैयार हो जाते हैं, इस भावुकता के कारण कई लोग अपना झूठा दुख व्यक्त करके माग कर धन आदि ले जाते हैं और वापस उनसे प्राप्त होने का तो प्रश्न ही नहीं है। आज के इस स्वार्थमय युग मे उनकी इस प्रवृत्ति से कुछ कुटिल लोग लाभ उठा लेते हैं, झूठी सहानुभूति प्राप्त कर अपना उल्लू सीधा कर लेते हैं और उनको दुखमय देखकर श्रीमाली जी प्रत्येक प्रकार से प्रत्येक समय सहायता करने के लिये तैयार हो जाते हैं।

माताजी ने एक दो बार सकेत भी किया कि इस प्रकार लोग झूठी बातें कह कर के या काल्पनिक दुख की कहानी सुनाकर आपसे लाभ उठा ले जाते हैं, यह तो आपके साथ एक प्रकार से धोखा ही है तो श्रीमाली जी सुनकर मुस्करा दिये और कहा, वह झूठ बोलता है तो मैं सब कुछ समझ जाता हूँ परन्तु फिर भी मैं सोचता हूँ कि यह जो कुछ कर रहा है, इसका फल यह भविष्य मे भुगतेगा ही, मैं अपनी मानवता क्यों छोड़ ? और इस प्रकार यदि वह मुझ से कुछ प्राप्त कर लेता है उसके मन को शान्ति मिलती है तो अच्छी बात है।

श्रीमाली जी मे दूसरी कमी यह है कि वे सहज ही दूसरो पर विश्वास कर लेते हैं। इसके कारण कई बार उनके साथ विश्वासघात भी होता है, वे ठगे भी जाते हैं परन्तु ठगे जाने पर भी वे प्रसन्न होते हैं, जब उनको यह बताया जाता है कि उसने आपके साथ विश्वासघात किया है तो वह कहते हैं कि यह उसकी धारणा है वह जिस प्रकृति का होगा वैसा ही तो वह आचरण करेगा, पर उसकी वजह से मैं अपने आचरण को क्यों बदल दूँ ? एक बार मेरे द्वारा इस प्रकार का प्रश्न करने पर उन्होंने एक लघु घटना सुनाई थी।

एक साधु नदी मे स्नान कर रहा था, उसने देखा कि एक विच्छू डूब रहा है। उस साधु ने उस विच्छू को हाथ मे ले लिया जिससे कि वह डूबने से बच जाये, परन्तु विच्छू ज्यो ही हथेली पर आया उसने डक मार दिया, जोरो से बेदना होते ही साधु के हाथ से विच्छू छिटक कर पुन पानी मे गिर गया, उसे पुन डूबते देखकर साधु को फिर दया आ गई और उसे फिर अपनी हथेली मे ले लिया, विच्छू ने दूसरी बार भी हथेली मे डक मार दिया, इस प्रकार पाच-छ बार साधु ने विच्छू को डूबने से बचाने का प्रयत्न किया और हर बार विच्छू डक मारता रहा।

पास खडे उनके शिष्य ने कहा स्वामीजी ! इससे तो आपके शरीर मे जहर

फैल जायेगा, आप यह क्या कर रहे हैं? साधु ने हसते हुए उत्तर दिया कि वह अपने धर्म का और मैं अपने धर्म का पालन कर रहा हूँ। उसका धर्म डक मारना है, और मेरा धर्म उसे डूबने से बचाना है, उसकी दुर्जनता से अपने धर्म को मैं क्यों छोड़ दूँ।

घटना का तात्पर्य यह, कि सामने वाला विश्वासधात करता है, झूठ बोलता है या धोखा देने का प्रयास करता है, तो यह उसका धर्म होगा, पर उसकी वजह से अपना धर्म या मानवता क्यों छोड़ दूँ?

श्रीमाली जी की तीसरी कमी उनकी उदारता है, उनके शरीर पर कीमती शाल होगी और यदि उन्होंने किसी साधु को ठिठुरते हुए देख लिया तो वह शाल उसे थोड़ा देंगे और स्वयं खाली हाथ घर लौट आयेंगे, इस प्रकार उनके द्वारा कई बार आवश्यक वस्तुएँ दे दी जाती हैं और ऐसा करके उन्हे प्रसन्नता ही अनुभव होती है।

आज के छल-प्रपञ्चमय युग में इतना सरल और सात्त्विक होना भी अपने आप में कठिन है और इतना सधर्ष होने के बावजूद भी इन्होंने अपने मानवीय मूल्यों को नहीं छोड़ा है, क्योंकि दुखी आदमी का दुख वहीं पहचान सकता है जिसने अपने जीवन में कष्ट उठाये हो।

उनका एक कठोर रूप गुरु रूप है, मैं समझता हूँ अन्य स्पौ में वे कितने ही उदार और नम्र हो, अपने शिष्यों के प्रति वे उतने ही निर्मम और कठोर भी हैं, थोड़ी-भी कमज़ोरी या असावधानी उन्हे सह्य नहीं होती। उनकी धारणा यह है कि सोना मूल्यवान तभी होता है जबकि उसे बार-बार आच में जलाया जाता है, एक बार चर्चा के दौरान उन्होंने बताया था कि ये शिष्य मेरे पुत्रवत् हैं एक प्रकार से ये मेरे हृदय के टुकड़े हैं, इन पर कठोरता करने से मुझे अन्दर-ही-अन्दर जरूरत से ज्यादा दुख होता है और बुरा भला कहने पर हृदय में वेदना भी, परन्तु मैं उस वेदना को दबा कर ऊपर से कठोर और निर्मम रहता हूँ जिससे कि वे जिस पथ पर खड़े हुए हैं उस पथ पर आगे बढ़ सकें और अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकें।

किसी और का शिष्य मात्र शिष्य कहलाएगा, परन्तु यदि कोई मेरा शिष्य होगा तो उसके पीछे मेरा पूरा व्यक्तित्व जुड़ा हुआ होगा, यदि उसमें त्यूनता होगी तो वह उसकी न होकर मेरी ही कहलायेगी, मैं इस प्रकार का कलक या धब्बा अपने ऊपर नहीं लगने देना चाहता।

पिता को उस सभय प्रसन्नता होती है जब वह जीवन के क्षेत्र में अपने पुत्र से पीछे रह जाता है या हार जाता है, यदि व्यापार में पुत्र, पिता से भी बढ़-चढ़ कर होता है तो यह अप्रत्यक्ष रूप से पिता को ही गौरव मिलता है, इसी प्रकार गुरु अपने शिष्य से हारने में ज्यादा खुशी अनुभव करता है, यदि गुरु से ही शिष्य आगे बढ़ जाता है या उनसे ज्यादा सफलता अथवा लोकप्रियता अंजित करता है तो यह अप्रत्यक्ष रूप से उस गुरु का ही सम्मान और गौरव होता है।

इसीलिये मैं अपने शिष्यों के प्रति कठोर रहता हूँ जिससे कि वे अपने जीवन को समर्पित रख सकें, नैतिक मूल्यों में उनकी आस्था बनी रह सके और मानवता के

गुणों से के परिपूर्ण हो सकें। ऐसा होने पर ही वे आने वाली पीढ़ियों के लिए ज्योति-स्तम्भ का कार्य कर सकेंगे।

मैं अपूर्णता में विश्वास नहीं करता, मैं यह भी नहीं चाहता कि मेरा शिष्य अपूर्ण हो, अपितु मैं उसमें पूर्णता चाहता हूँ और इसीलिये कम-सेन्कम समय में उसको ज्यादा-से-ज्यादा ज्ञान और साधना देने में तत्पर रहता हूँ, ऐसी स्थिति में उसको ज्यादा परिश्रम करना ही पड़ता है। जो परिश्रम से घबरा जायगा वह मेरा शिष्य बनने के योग्य ही नहीं है।

कठोर होते हुए भी उनके हृदय में स्नेह की गगा बहती रहती है और शिष्य इस गगा से आप्लावित रहते हैं, उन्हे गुरु की कठोरता में भी आनन्द आता है, क्योंकि वे यह समझते हैं कि हम सामान्य योगीं या साधक के शिष्य नहीं हैं अपितु श्रीमाली जी के शिष्य हैं और ऐसी स्थिति में जरूरत से ज्यादा श्रम करना स्वाभाविक है।

मैं उनके कोई शिष्यों से मिला और मैंने पाया कि उनके मन में श्रीमाली जी के प्रति अत्यधिक उच्च आदर की भावना है। जब भी श्रीमाली जी की चर्चा छिड़ती है, तो उनकी आखों में प्रेम के आसू छलछला पड़ते हैं, उनके मन की साध यही होती है कि वे ज्यादा-से-ज्यादा-गुरु-चरणों में रह सकें और उनसे ज्ञान प्राप्त कर सकें, मैंने यह देखा है कि न तो गुरु देने में सकोच कर रहा है और न शिष्य प्राप्त करने में न्यूनता अनुभव कर रहा है।

श्रीमाली जी का साधक रूप अपने आप में विलक्षण है, उनके भूमध्य गृहे में एक अलग ही साधना कक्ष है जिसमें अन्य किसी का भी प्रवेश पूर्णत वर्जित है, मुझे केवल दो मिनट के लिए श्रीमाली जी के साथ उस साधना कक्ष में जाने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था और मैंने एक विचित्र विद्युतत्तरणों उस कक्ष में अनुभव की थी, उनके तेजस्वी रूप से या मत्रात्मक घटनि रूप के कारण वह कक्ष अपने आप में विद्युतमय है और सामान्य मानव तो अन्दर जा ही नहीं सकता, क्योंकि अन्दर कदम रखते ही उसे ऐसा झटका लगता है जैसे कि उसने विजली के नगे तार को छू लिया हो।

विशिष्ट साधना से सम्पन्न व्यक्ति ही उस कक्ष में जाने का अधिकारी माना जाता है, या उनके वे शिष्य जो विशिष्ट साधना में प्रवेश करते हैं, वह कक्ष अपने आप में पूर्णत मत्रमय, चेतन्य और विद्युत ऊर्जा से स्फुलिंगित है। वास्तव में ही वह साधक धन्य है, जिसने उस कक्ष में प्रवेश किया है, या वहाँ पर बैठकर कुछ प्राप्त किया है, मैंने यह देखा है कि कोई भी साधक जब उस कक्ष में बैठता है तो स्वत ही उसकी कुण्डलिनी जागृत हो जाती है और पूर्ण समाधि लग जाती है जो कि अपने आप में अनिवार्य होती है।

मुझे लगभग तीन महीने पण्डितजी के घर में रहने का सौभाग्य मिला और वे तीन महीने मेरे पूरे जीवन की निधि हैं जिसमें मैंने व्यावहारिक रूप से बहुत कुछ सीखा है, उस घर में मैंने पण्डितजी से श्रेष्ठ साधना का अभ्यास किया है, उनके गुरु भाई शैशव के अनधिकारि किया है, मा का वात्सल्यमय स्नेह मेरी झोली में है,

चच्चों की सरलता और सहजता मेरे जीवन में अनुप्राणित रही है और घर के शान्त और स्वर्गिक बातावरण से मेरा जीवन आप्लावित हुआ है, वास्तव में ही वे तीन महीने मेरे जीवन की सर्वोच्च साधना और उपलब्धि हैं।

श्रीमाली जी के मकान के भूगर्भ गृह मे एक विशाल पुस्तकालय है जिसमे कई हस्तलिखित ग्रन्थ हैं जो कि तत्र, मत्र और आयुर्वेद से सम्बन्धित हैं, ज्योतिष से सम्बन्धित और साधना से सम्बन्धित भी सैकड़ों पुस्तकें हैं, इतना बड़ा पुस्तकालय मैंने अन्यत्र कही नहीं देखा। वास्तव में ही साधना से सम्बन्धित ग्रन्थों का जो खजाना इस गर्भगृह मे है वह अन्यथा दुर्लभ है।

मैंने श्रीमाली जी से विशेष अनुरोध कर इन पुस्तकों को कम से जमाने की प्रार्थना की थी और उनसे निवेदन किया था कि वे आज्ञा दें जिससे कि इन ग्रन्थों की सूची बनाई जा सके और प्रत्येक विषय से सम्बन्धित ग्रन्थ अलग-अलग आलमारियों मे रखे जा सके, जिससे कि सम्बन्धित साधक उसका लाभ उठा सके।

मेरे अनुरोध को स्वीकार करते हुए उन्होने इम सम्बन्ध मे आज्ञा दे दी थी और पूरे महीने भर मैं इस कार्य मे लगभग उन सारी पुस्तकों को कमबद्ध कर सका था।

इस दौरान मे मुझे कुछ फाइलें मिली जिनमे प्राचीन पत्रों का सग्रह था। इन पत्रों मे कुछ सस्कृत मे थे, कुछ हिन्दी और कुछ बगला भाषा मे, सौभाग्य से मुझे इन तीनों भाषाओं की जानकारी है और तीनों ही भाषाओं मे भली प्रकार बोल-भढ़ लिख सकता हूँ। अत मैंने उन पत्रों को पढ़ा तो मुझे ज्ञात हुआ कि वास्तव मे ही ये पत्र अपने आप मे दुर्लभ हैं।

इसमे से वे पत्र भी मुझे पढ़ने को मिले जो कि श्रीमाली जी ने अपने साधना-काल मे माताजी को लिखे थे। माताजी ने वे पत्र सहेज कर रख दिये थे, जो कि फाइल मे बन्द थे, वे पत्र वास्तव मे ही अन्यतम और दुर्लभ हैं क्योंकि इन पत्रों से श्रीमाली जी के प्रारम्भिक जीवन पर प्रकाश पड़ता है और उस समय उनकी मन-स्थिति का ज्ञान इन पत्रों के माध्यम से होता है।

कुछ पत्र श्रीमाली जी के गुरु योगीराज श्री स्वामी सच्चिदानन्द जी के भी थे, जो कि वास्तव मे ही अन्यतम और दुर्लभ हैं, कुछ पत्र श्रीमाली जी के शिष्यों के भी थे जो उन्होने मार्गदर्शन प्राप्त करने के लिए भेजे थे।

मैंने अनुभव किया कि ये पत्र हमारे साधना जीवन के अमूल्य रत्न हैं और यदि ये प्रकाश मे नहीं आये या ये पत्र समाप्त हो गए तो यह साहित्य एक अमूल्य निधि से विचित हो जायगा, यदि किसी कुटिल व्यक्ति की नजर मे ये पड़ गये तो वह इसका मूल्य समझ कर ले जायेगा।

मैंने इन पत्रों की महत्ता और दुर्लभता अनुभव की और इस सम्बन्ध मे एक दिन श्रीमाली जी को प्रसन्न चित्त देखकर याचना की कि इस प्रकार के पत्रों का सम्पादन कर यदि प्रकाशित किया जाये तो यह अपने आप मे अन्यतम कार्य होगा।

और हम जैसे युवकों को इससे प्रेरणा और मार्गदर्शन मिल सकेगा।

प्रश्न सुनते ही श्रीमाली जी ने तुरन्त भना कर दिया, उन्होंने कहा, मैं इस प्रकार के पत्रों का प्रकाशन उचित नहीं समझता हूँ, क्योंकि इनमें मेरी प्रशंसा हो सकती है और मैं ऐसा नहीं चाहता। वे पत्र कहा पड़े हैं, मेरी राय में इन पत्रों को नष्ट कर देना ही उचित है।

मैं हतप्रभ रह गया कि यह व्यक्तित्व अपनी प्रशंसा से कितना अधिक कतराता है। मेरे भनने कहा कि पण्डितजी अपनी प्रशंसा को प्रकाशित करना नहीं चाहेंगे और यदि उन्हें ज्ञात हो गया तो अवश्य इन पत्रों को वे फाड़ देंगे और इस प्रकार तात्रिक समुदाय एक बहुत बड़ी निधि से बचत हो जायेगा। मैंने उस समय तो श्रीमाली जी को कुछ नहीं कहा और उसी समय माताजी के आ जाने से विषय परिवर्तित हो गया और वात आई-गई हो गई।

परन्तु मैंने पुस्तकों को क्रमबद्ध करने के साथ-साथ उन पत्रों की प्रतिलिपियां भी तैयार कर ली और उन प्रतिलिपियों को अपने पास रख लिया, कई पत्र थे, उनमें से वे पत्र जो वास्तव में ही मुझे अमूल्य लगे, उनकी प्रतिलिपियां मैंने तैयार कर ली, मैं चाहता था कि ये पत्र प्रकाश में आवें जिससे कि हम जैसे युवकों का इससे मार्गदर्शन हो सके और हम इनसे प्रेरणा प्राप्त कर सकें।

तीन महीनों में मैंने श्रीमाली जी से जो कुछ सीखा वह मेरे जीवन की श्रेष्ठतम निधि है, उसके बाद समय आने पर उन्होंने मुझे शिव्य रूप में भी स्वीकार किया और दीक्षा दी, मैं उनका चिर ऋणी हूँ और यह पूरा जीवन उनका ऋणी रहेगा।

मैं ये पत्र प्रकाशित करवा रहा हूँ, मेरा उद्देश्य मात्र हम शिष्यों को इन पत्रों से प्रेरणा प्राप्त करना है, श्री सच्चिदानन्द जी के पत्र अन्यतम है, यह श्रीमाली जी का ही गौरव है कि उन्हे उनके हाथ के लिखे पत्र प्राप्त हो सके, श्रीमालीजी ने भी कुछ पत्र लिखे थे उनकी प्रतिलिपियां भी मुझे कुछ शिष्यों से प्राप्त हुईं। उन शिष्यों ने मुझे वे पत्र तो नहीं दिए क्योंकि गुरुजी के हाथ के लिखे वे पत्र उनके लिए सौभाग्यदायक हैं परन्तु उन्होंने मुझे प्रतिलिपि करने की स्वीकृति अवश्य दे दी।

इस प्रकार मैं कुछ पत्र प्रकाशित कर रहा हूँ जो कि अन्यतम और दुर्लभ हैं, यद्यपि मैंने गुरुजी से स्वीकृति प्राप्त नहीं की है और अनजाने ही उन मूल पत्रों की प्रतिलिपियां प्राप्त की हैं यह एक प्रकार का चौर्य कार्य है, परन्तु यह चौरी भी मेरे लिए गौरव की बात है, मैं गुरुजी के प्रति इस कार्य के लिए अपराधी हूँ और इस चौरी के लिए वे जीवन में मुझे जो भी सजा देंगे मैं सहर्य उसको भोगूगा। मुझे उनकी उदारता पर भरोसा है और उस महान व्यक्तित्व के प्रति मेरा सिर श्रद्धा से नत है।

इस पुस्तक में जो पत्र प्रकाशित हो रहे हैं वे मूल पत्र भले ही मेरे पास नहीं हैं, ही सकता है कि इस पुस्तक को देखने के बाद श्रीमाली जी मूल पत्रों को फाड़ दें या समाप्त कर दें, परन्तु मेरे पास जो भी प्रतिलिपियां हैं वे मेरे स्वयं के द्वाग तैयार

हैं, मैंने उन मूल पत्रों को देखा है, पढ़ा है वे प्रामाणिक हैं और उनकी प्रामाणिकता पर मुझे विश्वास है।

आज मैं उन पत्रों को प्रकाशित कर गौरव अनुभव कर रहा हूँ कि ये पत्र हम जैसे साधकों के लिए मार्गदर्शक के रूप में कार्य करेंगे।

मैं इस सक्षिप्त भूमिका के माध्यम से गुरुजी से क्षमा प्रार्थी हूँ। मेरा उद्देश्य जन-कल्याण है, हम साधकों का मार्गदर्शन है और इसीलिए इस अपराध को करने की हिम्मत चुटा पाया हूँ। इसके लिए मैं अपने आपको गुरुजी के प्रति अपराधी और उत्तरदायी अनुभव कर रहा हूँ।

मुझे विश्वास है कि इन पत्रों से जन-साधारण लाभ उठा सकेंगे और वे उस महान् व्यक्तित्व के कुछ अशो से साक्षात्कार कर सकेंगे। यदि जन-साधारण इससे और उस महान् व्यक्तित्व के जीवन और उनके कार्यों से प्रेरणा प्राप्त कर सका तो मैं अपना यह प्रयास सफल समझूँगा।

विश्वास आषम,

उत्तर काशी, ३० प्र०

योगी कानानन्द

## डॉ० श्रीमाली के पत्र अपनी पत्नी के नाम

प्रेषक—डॉ० नारायणदत्त श्रीमाली

स्थान—लूनी

प्राप्तकर्ता—भगवती श्रीमाली

आलोक—डॉ० श्रीमाली जी ने यह पत्र उस समय अपनी पत्नी को लिखा था  
जब वे साधना के लिये घर से जाना चाहते थे, परन्तु पारिवारिक  
वन्धन उन्हे वहां पर रहने के लिये विवश कर रहे थे, यह पत्र उस  
समय की मानसिक स्थिति को स्पष्ट कर रहा है कि कितनी अधिक  
मानसिक चिन्ता और मनोव्यथा उनके मानस में थी और उन्हे अपने  
आपको साधना के लिये तैयार करने में कितना अधिक मानसिक  
संघर्ष करना पड़ा था ।

प्रियतमे ।

जिसके साथ तुम्हारे भाग्य की डोर जुड़ी है वह एक विचित्र विचारों और  
अनोखी भावनाओं का व्यक्ति है । उसके विचार अपने आप में अलग ही हैं, वह दूसरों  
के विचारों के साथ अपने आपका तादात्म्य नहीं कर पाता, क्योंकि वह इस बात को  
अब अनुभव करने लगा है कि उसका जीवन जन्म लेकर साधारण रूप में समाप्त होना  
ही नहीं है, अपितु उसे अपने जीवन में कुछ ऐसे कार्य करने हैं, जो अपने आप में  
विलक्षण हो, अपने आप में अलग हटकर हो और जो कार्य साधारण व्यक्तियों से  
सम्पन्न होना सभव न हो ।

विवाह से पूर्व मैंने कई राते इस चिन्तन में विता दी थी कि मुझे विवाह करना  
चाहिए या नहीं, और धीरे-धीरे मेरी यह धारणा बद्धमूल होती जा रही थी कि मेरा  
जीवन विवाह के लिये नहीं बना है, क्योंकि विवाह एक ऐसा बन्धन है जिसमें बध करके  
व्यक्ति पूर्णत स्वतंत्र नहीं रह पाता, यद्यपि यह बात सही है कि यह भी जीवन का  
एक आवश्यक धर्म है, और इस धर्म को मानना व्यक्ति का कर्तव्य है, परन्तु जैसा कि

मैंने तुम्हे बताया कि मैं अपने आपको साधारण स्थिति में नहीं रख पाता, और मेरे मन में एक ऐसी छटपटाहट है, एक ऐसी आग है जिसमें मैं चाह करके भी तुम्हारे सामने व्यक्त नहीं कर पाता।



### श्रीमती भगवती श्रीमाली

शायद तुम्हे ज्ञात नहीं होगा कि जब मेरे सामने विवाह का प्रस्ताव रखा गया तो उस समय सबसे अधिक प्रतिवाद मैंने ही किया था, और अपने माता-पिता के सामने यह बात भली प्रकार से स्पष्ट कर दी थी कि शायद मेरा जीवन गृहस्थ बनने के लिये नहीं बना है, सभवतः मैं इस गृहस्थ के दायित्वों को भली प्रकार से बहन नहीं कर सकूँगा, मेरी उदासीनता से एक प्राणी की सारी इच्छाएँ जड़ हो जायेंगी, क्योंकि मेरा चिन्तन, मेरी भावनाएँ और मेरे विचार थे पने आप मे एक अलग धारणा को लिय हुए हैं।

मुझे स्वयं कुछ-कुछ ऐसा लगने लगा था जैसे कि मैं अपने आप से खोया हुआ रहता हूँ और आसपास के विचारों को न तो ग्रहण कर पा रहा हूँ और न उनसे सम्बंधित ही हो पाता हूँ।

शायद मेरे इस प्रकार के विचारों को, मेरे घर वालों ने भाप लिया होया और उन्होंने ऐसा महसूस किया होगा कि यह लड़का यदि इसी प्रकार अपने खयालों में खोया रहा तो, या तो पागल हो जायगा या सन्यासी हो जायगा, दोनों ही स्थितियों में उन्हें नुकसान था और वे नहीं चाहते थे कि उनके घर का सबसे बड़ा लड़का सन्यासी हो जाय या विवाह के नाम पर अपने आपको तटस्थ बना ले।

इसीलिये मेरी इस प्रकार की मन स्थिति को अनुभव कर उन्होंने विवाह के लिये जरूरत से ज्यादा प्रयास करने प्रारंभ कर दिये। यह बात तुम स्वयं समझ सकती हो कि मेरी यह उम्र विवाह करने की नहीं थी, परन्तु शायद इन्हीं भावनाओं से प्रभावित होकर उन्होंने जल्दी-से-जल्दी विवाह करने की योजना बना ली और मुझे बिना बताये काफी कुछ तैयारिया कर ली। उनके सारे प्रयास, सारी योजनायें केवल इसी बात को लेकर के थी कि उनके घर का यह चिराग जलता रहे और आगे यह वश-परम्परा बनी रहे।

मैं मानता हूँ कि उनके विचार अपनी जगह सही थे। हर माता-पिता की यह आकाशा होती है कि उसका पुत्र गृहस्थ बने और आगे की पीढ़ियों के निर्माण में योगदान दे।

परन्तु मैं इस बात को जान रहा था कि यह ठीक नहीं हो रहा है। मेरा विवाह एक प्रकार से मेरे लिये बन्धन ही साबित होगा। मैं अपने जीवन में जो कुछ करना चाहता हूँ शायद वह नहीं कर पाऊगा, क्योंकि उस समय एक ऐसी बेड़ी मेरे पावों में जड़ दी गई होगी, जिसे मैं चाहकर के भी छुड़ा नहीं पाऊगा। पर—पर मेरे विचारों को माता-पिता ने हवा में उड़ा दिया और मेरा विवाह तुम्हारे साथ हो गया।

इसमें तुम्हारा कोई दोष नहीं है, तुमने विवाह किया है, तुम इस घर की वह बन करके आई हो, तुम्हारी अपनी भावनाएँ हैं, अपनी इच्छाएँ हैं, अपने विचार हैं और तुम उन विचारों में बराबर खोई हुई रही हो।

मेरे घर में आने के बाद तुमने जहा मेरे माता-पिता से प्यार पाया होगा, देवर से चुहल अनुभव की होगी, पर साथ ही तुमने अग्नि को साक्षी बनाकर फेरे खाये हैं उसकी तरफ से तो किसी प्रकार का कोई स्नेह तुम्हें प्राप्त ही नहीं हो रहा है। यह उदासीनता तुम्हारे लिये एक पहली की तरह दिमाग को उलझा रही होगी। हो सकता है मेरे बारे में तुम्हारे मन में कई प्रकार की भावनाएँ आई होगी और तुमने कई प्रकार से अपनी उन भावनाओं को शान्त किया होगा।

मैं पिछले काफी समय से तुम्हें खोई-खोई देख रहा हूँ और मैं यह अनुभव कर रहा हूँ कि आते समय तुम्हारे चेहरे पर जो ताजगी और प्रफुल्लता थी, उस पर हल्की-

सी स्थाही ज्ञाई पड़ती जा रही हैं, इसका कारण जहा तक मैं समझ रहा हूँ मेरी उदासीनता है।

वास्तव में ही तुम अपने आपमें पूर्ण नारी हो, और विवाह के उपरान्त सहेलियों के द्वारा तुम्हारे मन में कई प्रकार के विचार भरे होंगे, कई प्रकार के सपने तुम्हारी आखों में तैर रहे होंगे, कई प्रकार की बातें तुम अपने हृठों से कहने के लिये आतुर हो रही होगी, परन्तु इतना समय बीतने के बाद भी जब मेरी तरफ से तुम्हे उदासीनता मिली होगी तो वे सपने धीरे-धीरे टूट रहे होंगे, वे कल्पनाएं जो कि पूरे जीवन को गुदगुदी देती हैं विखर रही होगी और एक प्रकार का ज्ञीना आवरण उस पर पड़ रहा होगा।

मैं जानता हूँ कि तुम विवाह करके आई हो, तुमने मुझसे बहुत अधिक उम्मीदें लगाई होगी, परन्तु सभवत मैं तुम्हारी उम्मीदों को पूरा नहीं कर सकूँगा। यद्यपि यह बात कहते समय मैं अपने आपको भली प्रकार से पहचान रहा हूँ। मैं अपने उत्तर-दायित्वों से भाग नहीं रहा हूँ। अपनी जिम्मेवारियों से विमुख नहीं हो रहा हूँ अपितु मैं पूर्णता के साथ तुम्हारे साथ समझौता कर लेना चाहता हूँ, जिससे कि तुम आने वाले जीवन में परेशानिया अनुभव न करो।

हो सकता है मैं तुम्हे वर्तमान जीवन में उतना अधिक प्यार न दे सकूँ जितना कि विवाह के तुरन्त बाद एक पति वयनी पत्नी को देता है, हो सकता है मैं इस प्रकार के इन्द्रधनुषी ल्वाद तुम्हारे सामने नहीं लहरा सकूँ, जो कि इस उत्तर से लहराने स्वाभाविक है। यह भी हो सकता है कि मैं रसिक और मधुर वातें, गुपचुप सभाषण, चुहल, हसी-मजाक, तुम्हारे सामने नहीं कर सकूँ, परन्तु इसका तात्पर्य यह नहीं है कि मैं तुमसे उदासीन हूँ या तुम्हारी उपेक्षा कर रहा हूँ।

जब मैंने विवाह कर ही लिया है तो भली प्रकार से सोच-विचार लिया है। मेरा एक कर्तव्य जहा अपनी आत्मा की उन्नति करना है वही दूसरी और अपने माता-पिता की इच्छाओं की पूर्ति करना भी है। जिस कार्य से उन्हें सुख मिलता है वह कार्य करना मेरा कर्तव्य है। एक पुत्र का यह धर्म है कि वह अपने पिता के विचारों को मान्यता दे, माता के कथन का आदर करे और उनको अप्रसन्न करके जीवित न रहे। मैंने ऐसा ही अनुभव किया था कि उन्हें मेरा विवाह होने से ज्यादा प्रसन्नता होगी, उन्होंने भी इस बात को सबसे ज्यादा महत्व दिया था और एक दिन तो बातचीत में उन्होंने यहा तक कह दिया था कि यदि तुम माता-पिता का कृण उतारने को कह रहे हो तो वह कृण तभी उत्तर सकता है जब तुम हमारे कहने को मान्यता दो और विवाह कर लो। मैंने उसी दिन विवाह की स्वीकृति दे दी थी, जिसकी परिणति तुम्हारे साथ विवाह है।

इतना होने पर भी मैं तुम्हारी भावनाओं को समझ रहा हूँ, तुम्हारी इच्छाओं को चकनाचूर कर देने का मुझे कोई अधिकार नहीं है, तुम्हारी मान्यताओं को खण्डित

करना मेरा धर्म नहीं है, मैं नहीं चाहता हूँ कि तुम अपने जीवन में उदासीनता के साथ जीवन के क्षण व्यतीत करो, मैं तुम्हे उतना ही सम्मान देता हूँ जितना मैं अपने आपको सम्मान दे रहा हूँ।

मेरी उपेक्षा को तुम किसी और रग में न ले लो, इसीलिये आज मैं अपने मन की बात साफ-साफ कह देना उचित समझता हूँ। मैंने कई बार अपने मन को दृढ़ किया जिससे कि मैं तुम्हारे सामने सारी बात खोलकर रख दूँ, परन्तु जब भी मैं कुछ कहने के लिये उदात्त होता हूँ तो तुम्हारा मासूम चेहरा देखकर मैं कुछ भी कह नहीं पाता और चुपचाप लेट जाता हूँ। मैंने कई बार अपनी भावनाओं को स्पष्टता के साथ कहने के लिये प्रयत्न किया, पर हर बार तुम्हारे चेहरे का भोलापन मुझे कहने से रोके रहा। तुमने स्वयं यह देखा होगा कि मेरी सारी रात जागते हुए बीत जाती है, मैं करवटें बदलता रहता हूँ और उस समय मेरा पूरा दिमाग परस्पर सधर्यं कर रहा होता है, मैं विभिन्न विचारधाराओं के ज्ञानावातों में उलझ जाता हूँ, इस प्रकार धीरे-धीरे अपने सीने पर एक बोझ-सा अनुभव करने लगा हूँ। जब तक मैं अपनी सारी बातें तुम्हारे सामने खोलकर नहीं रख दूँगा तब तक मैं इस बोझ को अलग नहीं कर पाऊगा और शायद तब तक मैं शान्ति से कुछ भी नहीं कर पाऊगा।

जैसा कि मैंने तुम्हे बताया कि मेरा जन्म सामान्य रूप से जीवन विताने के लिये नहीं है, मैं सामान्य रूप से रहना भी नहीं चाहता, मैं नहीं चाहना कि अपनी सुख-सुविधाओं के लिये प्रयत्न करूँ, जीवन में अर्थ को ही सबसे अधिक मान्यता दूँ और अपनी पल्ली के साथ हसी-मजाक, राग-रग, के साथ अपने ये कीमती वर्ष बिता दूँ।

शायद मेरा जन्म इस प्रकार के कार्यों के लिये हुआ ही नहीं है। मैं प्रारम्भ से ही अन्तर्मुखी व्यक्तित्व लिये हुए रहा हूँ, बहुत ही कम खोलकर अपनी भावनाओं को व्यक्त करता रहा हूँ, क्योंकि मेरे मन में छटपटाहट है, मेरे दिल में एक ऐसी आग है जिसे दूसरा सही प्रकार से समझ नहीं पाता है। मैं इस आग को, इस छटपटाहट को जितना ही ज्यादा दबाने का प्रयत्न करता हूँ यह आग उतनी ही ज्यादा भड़कती जाती है, यह छटपटाहट उतनी ही ज्यादा बढ़ती जाती है और पिछले चार महीने में इसी आग को दबाये हुए तुम्हारे पास आता रहा हूँ, परन्तु मैं अपने होठों से एक शब्द भी नहीं कह पाया हूँ, इसीलिये आज मुझे इस पत्र का सहारा लेना पड़ा है जिससे कि मैं अपनी बात को पूर्णता के साथ तुम्हारे सामने रख सकूँ और जीवन के इन प्रारम्भिक क्षणों में एक समझौता कर सकूँ जिससे कि मेरे मन में किसी प्रकार का मलाल न रहे, तुम्हारे मन में किसी प्रकार की विपरीत भावना न बने।

मैं ब्राह्मण युवक हूँ और मेरे मन में यह भावना है कि जब तक मैं इस भारत की खोई हुई विद्या को प्राप्त नहीं कर लूँगा तब तक मेरा जीना व्यर्थ है। मेरे पूर्वज ससार के सर्वश्रेष्ठ विचारवान व्यक्ति रहे हैं, उन्होंने हमारे समाज को जो मान्यताएँ दी हैं, जो विचारसूत्र प्रदान किये हैं वे अपने आप में अप्रतिम हैं, उन्हीं सूत्रों के सहारे उनका

नाम आज तक भी हमारा समाज आदर के साथ ले रहा है। गौतम, कणाद, वशिष्ठ, याज्ञवल्क्य आदि वे विचारवान् युगपुरुष थे जिन्होंने अपने जीवन को तिल-तिल करके जलाया होगा, जीवन का अधिकाश भाग अपनी साधना में लगा दिया होगा और ससार के सारे सुखों से अपने आपको अलग हटाकर जो कुछ उपलब्धिया प्राप्त की, उन अमृत कणों से आज तक हमारा समाज जीवन-रस प्राप्त करता रहा है।

परन्तु अब मैं ऐसा अनुभव कर रहा हूँ कि उनका यह जीवन स्रोत सुख रहा है। यह बात नहीं है कि उनके स्रोत में किसी प्रकार की न्यूनता आ गई है, अपितु आज हमारा समाज एक प्रकार से पथभ्रष्ट हो गया है, उसकी विचारधारा बदल गई है, गुलामी की जजीरों में जकड़ कर वे अपने आपको भुला दैठे हैं। हमारा उच्चतम ज्योतिष ज्ञान आज विदेशियों द्वारा पैरों तले रोदा जा रहा है। हमारे मन्त्री की खिल्ली उडाई जा रही है, हमारे तत्र-मन्त्र और हमारी साधना एक उपहास का पात्र बन गई है, और यदि इसी प्रकार की स्थिति बनी रही तो एक दिन हम इन अमूल्य विद्याओं से हाथ छोड़ दैठेंगे। हमारे पूर्वजों ने, हमारे ऋषियों ने, जो कुछ ज्ञान, जो कुछ विद्या अपने शरीर को जलाकर प्राप्त की थी वे धीरे-धीरे लुप्त होती जा रही हैं। एक प्रकार से हम कृतञ्च होते जा रहे हैं और यह एक दुखद स्थिति है, जब-जब भी मैं यह सोचता हूँ तब मेरे हृदय में एक सिहरन-सी पैदा हो जाती है कि हम कितने पथभ्रष्ट हो गये हैं, हमारा समाज किस प्रकार से ऐसे रास्ते पर चलते लग गया है जिसका अन्त अन्धकार की काल-कोठरी है। मैं जान-दूजकर इस प्रकार के अधेरे पथ का राही नहीं हो सकता। मेरे मन में यही एक आग है जो तिल-तिल करके मुझे जला रही है और चाहते हुए भी मैं आनन्द अनुभव नहीं कर पा रहा हूँ, चाहते हुए भी मैं राग-रंग में अपने आपको लिप्त नहीं कर पा रहा हूँ।

इस उम्र में जब व्यक्ति चाद से बातें करता है, दूधिया चादनी में अपनी प्रियतमा से सभाषण कर आनन्द अनुभव करता है, उस समय मैं अपनी ही आग से भीतर-ही-भीतर दहकता जाता हूँ और तिल-तिल कर अपने आपको जलता हुआ अनुभव करता रहता हूँ।

मेरी एक ही इच्छा है कि मैं साधारण व्यक्ति की तरह नहीं मरू, साधारण रूप से घन कमाकर पेट भरना मेरा अभीष्ट नहीं है, राग-रंग में मस्त होकर अपने जीवन को विता देना मेरा उद्देश्य नहीं है, मेरा लक्ष्य, मेरा उद्देश्य केवल मात्र यही है कि मैं ज्योतिष की अत्यन्त ही उच्च स्थान पर स्थापित कर सकूँ और पूरे ससार को यह दिखा सकूँ कि भारतवर्ष की यह विद्या अपने आपमें अन्यतम है, इस विद्या के माध्यम से ही हम इस विश्व में अग्रणी रहे हैं। इसके अलावा तत्र-मन्त्र आदि हमारे सामाजिक जीवन के आधार रहे हैं, भारत की वेतना या उसका स्पन्दन इस प्रकार की साधनाएँ ही हैं, जिसकी वजह से भारत भारत बन सका है और पूरे ससार का गौरवमय शिरमीर बन सका है।

परन्तु मैं देख रहा हूँ कि मेरा भारत विदेशियों के द्वारा रोका जा रहा है। हम प्राणयुक्त होते हुए भी चेतनाशूल्य हैं। हम अपनी भाषा को भुला बैठे हैं, अपने पूर्वजों के गौरव को विस्मरण कर बैठे हैं और अपने आपको पहचानने से इन्कार करने में गौरव अनुभव करने लगे हैं।

इसके हल के लिये दो ही उपाय हैं एक है राजनीति के माध्यम से इस कार्य को किया जाय और दूसरा साधना के द्वारा अपने पूर्वजों की थाती, जो लुप्त होती जा रही है उसे पुनः सहेज कर प्राप्त किया जाय।

पहला रास्ता मेरे लिये उपयुक्त नहीं है, और मैं उस रास्ते पर नहीं बढ़ सकता, इसकी वजाय दूसरे रास्ते को अपनाना मैं श्रेयस्कर समझता हूँ।

जीवन में जिनकी अलग विचारधाराएँ होती हैं जो लकीर से हट कर कुछ करना चाहते हैं लोग उसे पागल कहते हैं, और एक पागल की पत्नी बनना कितना दुखदायक होता है, इसकी तुम कल्पना कर सकती हो, परन्तु मैं इस विन्दु पर तुमसे समझौता करने के लिये ही पक्षिया लिख रहा हूँ। मैं चाहता हूँ कि तुम मेरे उद्देश्य की पूर्ति में सहायक बनो। मुझे मेरे जीवन के लक्ष्य तक पहुँचाने में मदद करो, और मैं जो कुछ बनना चाहता हूँ, जो कुछ करना चाहता हूँ उसमें तुम भागीदार बनो, यही मेरी आकाशा है।

हो सकता है मेरे विचार तुम्हारे लिये अनुकूल न हो। इस समय तुम्हारे मन में इस प्रकार की वातें अनुकूलता पैदा कर ही नहीं सकती। तुम्हारे जीवन का यह यीवनकाल है और इस काल की अलग ही फिलोसोफी होती है, जो समय तुम्हारे लिये राग-रग, मस्ती और भोज का है उस समय मैं तुम्हारे सामने अलगाव की वातें कर रहा हूँ, तुम्हारे लिए मस्ती और प्यार के जो दिन होने चाहिए उन दिनों में मैं दूसरी विचारधारा तुम्हारे सामने रख रहा हूँ, परन्तु मैं यह सब कहने के लिये मजबूर हूँ और मैं चाहता हूँ कि तुम मेरी इन भावनाओं को भली प्रकार से समझो, तब तुम्हें यह महसूस होगा कि मैंने जो रास्ता चुना है वह असामान्य रास्ता चुनने वाले लाखों में दो-चार ही होते हैं। जो फूलों की राह छोड़कर काटों की पगड़ी पर बढ़ जाते हैं, आनन्द का रास्ता छोड़कर अभाव के रास्ते पर चल पड़ते हैं, भोग विलास और ऐश-आराम का परित्याग कर वे अपने लिये परेशानिया और कष्टों को निमत्रण दे देते हैं, परन्तु इस वात में भी सत्यता है कि इस प्रकार का रास्ता चुनने वाले बहुत ही कम होते हैं और ऐसे व्यक्ति ही आगे चलकर समाज को नेतृत्व दे सकते हैं, देश को नई राह दिखा सकते हैं और उनके द्वारा कुछ ऐसे कार्य सम्पन्न होते हैं जिनका लाभ आने वाली पीढ़िया उठाती हैं, उनके बताये हुए या उनके किये गये कार्यों से वे अपने आपको गौरवान्वित अनुभव करने लगती हैं।

मैंने यह निश्चय कर लिया है कि मैं इस समाज में रहकर कुछ भी नहीं कर पाऊगा, इस घर में रहकर मैं अपने लक्ष्य की पूर्ति नहीं कर सकूगा, आनन्द और सुख

भोग के द्वारा उस रास्ते पर या उस बिन्दु पर नहीं पहुच सकूगा जो मेरा ध्येय है, अत उस ध्येय को प्राप्त करने के लिये मुझे इस घर को छोड़ना पड़ेगा, इन समाज से अपने आपको अलग करना पड़ेगा, तभी मैं कुछ विशिष्ट प्राप्त कर सकूगा और उस विशिष्टता की प्राप्ति के बाद ही मैं अपने आपको पूर्णता दे सकूंगा।

क्योंकि मेरा एकमात्र ध्येय लुप्त विद्या को प्रकाशित करना है, ज्योतिष की खोई हुई प्रतिष्ठा को पुन स्वापित करना है, और इसके साथ-ही-साथ मत्र शास्त्र आदि के द्वारा जो आश्चर्यजनक सिद्धिया हमारे पूर्वजों के पास थी उनको वापस जन-साधारण के लिये सुलभ बनाना है। इसकी पूर्ति घर में बैठकर नहीं हो सकती, समाज के बीच उदर पूर्ति करने से इन विद्याओं को प्राप्त नहीं कर सकता, क्योंकि जो थोड़े बहुत साधक इस ससार में बच गये हैं और जिनके पास इस प्रकार की अलौकिक सिद्धिया हैं, वे भीड़-भाड़ वाले इलाके में नहीं हैं। वे मध्यमली गह्रों पर नहीं बैठे हैं, वे आराम से जीवन यापन करने वालों के बीच नहीं हैं, अपितु वे उन कन्दराओं में हैं जहाँ भौतिक सुखों का पूर्णत अभाव है, वे उन जगतों में हैं जहाँ पग-पग पर सकट है, वे उन स्थानों पर हैं जहाँ स्वार्थ नहीं है, छल और कपट नहीं है, धोखा और अत्याचार नहीं है, क्योंकि उन्हें इन बातों से कोई सरोकार नहीं है।

मैं उन लोगों के पास पहुचना चाहता हूँ जो वास्तव में ही सिद्ध पुरुष हैं, जो वास्तव में ही इन विद्याओं के विशिष्ट जातकार हैं, इसके लिये मुझे जगतों में भटकना पड़ेगा, पहाड़ों की गुफाओं में जीवन को बिताना पड़ेगा, और पग-पग पर कष्टों और अभावों को झेलना पड़ेगा।

इस प्रकार की विद्या तभी प्राप्त हो सकती है जब मैं पूर्णत बीतरागी बनू, और सारे सुखों का परित्याग कर दू, अपने जीवन का मोह छोड़कर उन साधुओं, सन्धारियों और तपस्वियों की खोज करूँ जो कि विरले स्थानों पर ही विचरण करते हैं, उनका पहचानना भी आसान नहीं है, मैं नहीं जानता कि मैं अपने उद्देश्य में सफल हो सकूगा या नहीं, परन्तु मेरी आत्मा बार-बार इस बात को कह रही है, कि तुम्हारे लिए वही रास्ता श्रेयस्कर है, उसी रास्ते पर चलकर तुम कुछ प्राप्त कर सकोगे और आने वाली पीढ़ियों के लिये इस प्रकार की विद्या सुरक्षित रख सकोगे।

हो सकता है इस प्रकार की खोज में मैं समाप्त हो जाऊँ। यह भी हो सकता है कि मैं किसी हिंसक पशु की भेंट चढ़ जाऊँ और यह भी सभव है कि मेरे धौवन के अमूल्य वर्ष व्यर्थ में ही बीत जाय और मैं कुछ भी प्राप्त न कर सकू, परन्तु इन चिन्ताओं से या इन घटनाओं से विचलित होना मैं नहीं चाहता, इन आशकाओं को देखते हुए मैं यदि भन मारकर घर में बैठ जाऊँगा तो मेरी आत्मा मुझे कभी भी क्षमा नहीं करेगी। साधारण जीवन जीने की अपेक्षा मैं हिंसक पशु का भक्ष्य बन जाना ज्यादा श्रेयस्कर समझता हूँ, यह मेरा निश्चय है कि या तो मैं कुछ प्राप्त करके ही घर लौटूगा या अपने आपको समाप्त कर दूगा, परन्तु यह बात निश्चित है कि मैं खाली हाथ घर नहीं लौटूगा।

मेरी ये सारी बातें तुम्हारे लिये कष्टदायक हैं, मैं यह भी अनुभव कर रहा हूँ कि इस प्रकार तुम्हे कष्ट देना किसी भी प्रकार से उचित नहीं है। जो समय तुम्हारे आनन्द का समय है, उन क्षणों में मैं तुम्हे अभाव दे दूँ, यह उचित नहीं है। यह समय तुम्हारे योवन का है, राग-रग और मस्ती का है, इन प्रसन्नता के क्षणों को मैं उदासी और लम्बी प्रतीक्षा में बदल दूँ यह मेरा धर्म नहीं है, परन्तु फिर भी जब दो स्थितियों की तुलना करता हूँ तो मुझे वह स्थिति ज्यादा प्रिय है और एक बड़े कार्य के लिये यदि मैं अपने आपको त्याग देता हूँ तो एक पत्ती के रूप में तुमसे भी अपेक्षा करता हूँ कि तुम मुझे इस कार्य में सहायता दोगी, मेरे लिये वर्धन नहीं बनोगी।

यह निश्चित है कि मुझसे विवाह करके तुम लाभ में नहीं रही हो, यह भी निश्चित है कि मैं तुम्हे सुख के स्थान पर दुख ही दे रहा हूँ, आनन्द और प्रसन्नता के क्षणों में अभाव और परेशानिया प्रदान कर रहा हूँ, तुम्हारी उमगो और आशाओं पर मैं एक प्रकार से स्याह आवरण विछा रहा हूँ और इस प्रकार से तुम्हारे जीवन की सारी स्थितियां, सारी उमरों समाप्त कर रहा हूँ।

मैं नहीं कह सकता कि यहाँ से जाने के बाद मैं वापिस कब लौटूगा? मैं यह भी नहीं जानता कि मैं अपने उद्देश्य में सफल हो भी सकूँगा। आज तुम योवनवती हो, मैं जब वापिस लौटूगा तब तक तुम्हारा योवन अक्षुण्ण रह भी सकेगा या नहीं? मैं जानता हूँ कि मैं जल्दी वापिस नहीं लौट पाऊँगा। हो सकता है कि मुझे अपने लक्ष्य की प्राप्ति में दस माल या पन्द्रह साल लग जाए, और ये दस और पन्द्रह वर्ष तुम्हारे लिये कितने कष्टदायक होंगे इसकी मैं कल्पना कर सकता हूँ।

मैं जानता हूँ कि इन १५ वर्षों में तुम्हारा योवन चिन्ताओं में घुल जायगा। तुम्हारे चेहरे पर जो ताजगी और प्रफुल्लता है वह दुखों के आवरण से मिट जायगी, तुम्हारा जीवन एक अभिशापित जीवन बन कर रह जायगा, परन्तु इतना होते हुए भी मैं तुमसे इस प्रकार की जीवन की याचना करता हूँ, जिस रास्ते पर मैं चल रहा हूँ या जिस पथ पर मैंने जाने की तैयारी की है, वह सुगम और सुखदायक रास्ता नहीं है, अपितु इस रास्ते पर पग-पग पर काटे विछें हैं, हर क्षण, अभाव के साथ जन्म लेकर परेशानियों के साथ व्यतीत होगा। इस रास्ते पर मेरा सारा योवन धुल जायगा। मेरे चेहरे की काति अभावों के कारण धूमिल पड़ जायगी, और एक पूरा जीवन अभावों, कष्टों और परेशानियों का केन्द्र बन जायगा, परन्तु फिर भी यह निश्चित है, कि मैं खाली हाथ नहीं लौटूगा और अपना तथा तुम्हारे योवन का बलिदान देकर जो कुछ भी प्राप्त कर सकूँगा वह मेरा नहीं होगा अपितु पूरे समाज का होगा, उस पर केवल तुम्हारा और मेरा ही अधिकार नहीं होगा अपितु पूरे देश का अधिकार होगा, परन्तु फिर भी मेरे लिये वह क्षण अत्यन्त ही सुखदायक होगा जब कि मैं कुछ प्राप्त कर सकूँगा।

यदि मैं अपने जीवन में कुछ बन सका तो इसका सारा श्रेय तुम्हारा होगा,

क्योंकि इसके पीछे तुम्हारा त्याग होगा, तुम्हारा वलिदान होगा और तुम्हारे सुख और आनन्द की आहति उसके पीछे होगी ।

आज तुम्हारे चेहरे पर जो ताजगी, प्रफुल्लता और चमक मैं देख रहा हूँ, शायद वापिस आने पर वह मुझे दिखाई न दे । यह भी हो सकता है कि उस समय तुम्हारा शरीर एक लकड़ी की तरह शुष्क और ठूँठ की तरह हो जाय, हो सकता है कि तुम्हारे चेहरे पर जरूरत से ज्यादा झुरिया देखूँ, परन्तु फिर भी मैं अपने सकल्प पर दृढ़ हूँ, हो सकता है मैं वापस तुम्हे नहीं देख सकूँ या तुम्हे नहीं मिल सकूँ, मेरे आने से पूर्व ही तुम मुझे प्राप्त नहीं हो सको या उस अभियान में मैं ही समाप्त हो जाऊँ, इस समय मैं कुछ भी नहीं कह सकता । मेरे चारों तरफ एक ज्ञानावात है और उस ज्ञानावात मेरे कुछ भी नहीं देख पा रहा हूँ । इतना होने पर भी मैं तुमसे सहायता की उम्मीद कर रहा हूँ, और मुझे विश्वास है तुम मुझे इस पथ पर आगे बढ़ने के लिए रोकोगी नहीं, अपितु जोश के साथ, उत्साह के साथ आगे बढ़ने के लिए प्रेरित करोगी ।

शास्त्रों में नारी को सहचरी कहा है, इसका तात्पर्य है कि वह मानव के साथ वरावर कदम-से-कदम मिलाकर चले, इसका द्वासरा तात्पर्य यह है कि वह अपने पति की उन्नति में, उसकी प्रगति में सहायक बने, और उसकी आज्ञा का पूर्णता के साथ पालन करे । मैं तुम से ऐसी ही आकाशा रखता हूँ । ऋषियों ने नारी को पृथ्वी की तरह सहनशील बताया है, मेरा विश्वास है तुम मेरे ये जारे गुण अवश्य ही होंगे जो कि एक पृथ्वी में होते हैं, वह हर क्षण, हर पल सहन करती रहती है और मैं तुम से एक ही अकाशा रखता हूँ कि तुम सहनशीलता की प्रतिमूर्ति बन सको ।

हो सकता है तुम इस पत्र को पढ़कर मुझे मना कर दोगी, पर मना करने से पूर्व एक बार भली प्रकार से सोच लेना कि क्या यह तुम्हारे लिए उचित होगा ? क्या तुम्हारा सारा जीवन एक सामान्य नारी की तरह व्यतीत हो जाए ? क्या तुम चाहती हों कि तुम इन छोटे मोटे घर के कार्यों को करती हुई पशु की तरह अपनी जिन्दगी व्यतीत कर दो ? क्या वच्चों को पैदा करना ही गृहस्थ का सर्वोच्च लक्ष्य है ? क्या हमारा जीवन कीड़े-मकोड़े की तरह भटक-भटक कर मर जाने के लिए है ? निश्चय ही तुम ऐसा नहीं चाहोगी, प्रत्येक नारी की यह कामना होती है कि उसका पति एक विशिष्ट व्यक्तित्व सम्पन्न हो । वह सामान्य प्राणी न हो, अपितु लोगों से अलग हटकर हो, उसके नाम से लोग परिचित हो, उसके ज्ञान से आने वाली पीढ़िया लाभान्वित हों, और वह मानव जाति के लिए एक विशिष्ट योगदान देने में सहायक हो । तुम्हारी कामना भी यह होगी और इसी कामना की पूर्ति के लिए मैं जाना चाहता हूँ ।

तुम स्वयं सोचो कि यदि मैं कुछ प्राप्त करके वापिस आ सका तो वह हमारे जीवन का कितना सुखमय दिन होगा जबकि मैं कुछ प्राप्त कर सकूँ गा, कुछ विशिष्ट बन सकूँ गा, कुछ ऐसी उपलब्धिया मेरे पास होगी जो कि अपने आप में अन्यतम होगी

और उस समय गौरव के साथ तुम मेरा नाम उच्चारण कर सकोगी ।

लोग इस वात को अनुभव करेंगे कि मेरे निर्माण के पीछे तुम्हारा बहुत बड़ा सहयोग है, मेरे जीवन के तन्तुओं को अनुकूल बनाने में तुम्हारा बहुत कुछ योगदान रहा है, और तुम्हारे त्याग, तुम्हारे बलिदान की नीव पर ही मैं कुछ बन सकूंगा तथा अपने व्यक्तित्व को, अपने ब्राह्मणत्व को उजागर कर सकूंगा ।

यह पत्र मैं बहुत दुखी मन से लिख रहा हूं, क्योंकि इस पत्र के प्रत्येक अक्षर के पीछे मेरा स्वार्थ है और जितना मेरा स्वार्थ है उतना ही तुम्हारा त्याग है, परन्तु फिर भी मैं प्रसन्नता के साथ यह पत्र तुम्हे दे रहा हूं । मैं इस वात को (जो कुछ इस पत्र में लिखा है) अपने होठों से तुम्हे कहना चाहता था, तुम्हे समझाना चाहता था, परन्तु जब भी मैंने इस प्रकार का उत्कम किया तब तक मैं रुक गया, क्योंकि मेरे सामने तुम्हारा शान्त और सरल चेहरा आ जाता था । जब-जब भी अपने विचारों को कहने के लिए उद्यत हुआ तब-तब तुम्हारी आयु, तुम्हारी भावनाएं, तुम्हारी उमरें मेरे होठों को सी देती थीं, और मैं बहुत कुछ कहना चाहते हुए भी कुछ नहीं कह पा रहा था । यह एक प्रकार की मेरी विवशता थी, और इस विवशता के कारण ही मेरा बहुत समय इस उघड़चुन में बीत गया कि मैं तुम्हे कहूं या नहीं ?

एक बार तो ऐसा भी विचार आया कि मैं अपनी वात तुम्हे नहीं कह सकूंगा, अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए चुपचाप घर से निकल जाऊं, किसी को कानोकान खबर तक न हो । परन्तु फिर मेरे पैरों ने अपने आपको रोक लिया, मेरे मन ने कहा यह उचित कदम नहीं होगा, जिसके साथ सम्बन्ध बना है, उसको सारी वात कह देना ज्यादा उचित होगा, अन्यथा वह कुछ भी नहीं सोच सकेगी, कुछ भी नहीं समझ सकेगी और उसका मानस दिग्भ्रमित होकर रह जाएगा ।

इससे पूर्व मैं कई पत्र लिखकर फाड़ चुका हूं, परन्तु तुम्हारी आखों की सजलता के सामने रखने की हिम्मत नहीं कर सका हूं, पर आज कडे मन से अपनी वात लिख दी है और तुम्हारे सामने इस पत्र के द्वारा रख दी है ।

मैं इस पत्र के उत्तर में अस्वीकृति नहीं चाहता हूं । मना प्राप्त करने के लिए यह त्रुट्टि नहीं लिखा । मैं केवल स्वीकृति चाहता हूं और मुझे विश्वास है तुम प्रसन्नता के साथ उत्साह और उमर के साथ मुझे स्वीकृति दोगी ।

मेरी आत्मा के सारे सुख तुम्हारे पास गिरवी हैं । मैं केवल यहां से भूख, परेशानी, कष्ट, अभाव और कठिनाइया लेकर जा रहा हूं । आगे का जीवन काटों से भरा है अधकार में टटोल-टटोल कर आगे बढ़ना है, किसी प्रकार की कोई किरण मेरे सामने नहीं है, परन्तु फिर भी मेरी आत्मा का प्रकाश मेरे साथ है और वह मुझे सही रास्ता दिखा सकेगा ।

इतना विश्वास करो कि यदि मैं लौटा तो खाली हाथ नहीं लौटूंगा, क्योंकि मेरी आत्मा, मेरा विश्वास, मेरे साथ है और इससे भी बढ़कर मेरे साथ है तुम्हारा त्याग, तुम्हारा स्नेह, तुम्हारी कामनाएं और तुम्हारा बलिदान ।

मैं तुम्हारी झोली मेरे इस समय खुशिया डालकर नहीं जा रहा हूँ, इस समय तो मैं एक लम्बी अन्तहीन उदासी, बेवसी, बेचैनी और इत्तजार ही देकर जा रहा हूँ, जिसे तुम्हे पार करना है। फिर भी इतना विश्वास रखना कि मैं अवश्य लौटूंगा, जरूर लौटकर आऊँगा।

मेरी समस्त शुभकामनाएं तुम्हारे साथ हैं, मेरे प्राणों का अमृत वर्णन तुम्हारे पथ को सुखदायक बना सकेगा, ऐसी मुझे आशा है।

स्नेह युक्त  
(नारायणदत्त श्रीमाली)

प्रेषक डा० नारायणदत्त श्रीमाली ।

स्थान अज्ञात

प्राप्त कर्ता भगवती श्रीमाली

आलोक यह पत्र डॉ० श्रीमाली जी ने अपनी पत्नी को घर से जाने के लगभग ३ वर्ष बाद लिखा था और इन तीन वर्षों मेरे उन्होंने कितना अधिक मानसिक और शरीरिक सघर्ष किया था, उसकी एक क्षीण ज्ञाकी इस पत्र के माध्यम से प्राप्त होती है। साधक को कितना अधिक मानसिक सघर्ष करना पड़ता है यह पत्र उसका प्रमाण है और साधकों के लिये प्रकाशस्तम्भ भी।

प्रियतमा भगवती ।

घर को छोड़े हुए आज लगभग ३ वर्ष बीत गये हैं, पूरे एक हजार दिन, कुछ इससे ज्यादा ही, पर इस लम्बी अवधि मेरे मैंने एक बार भी घर से सम्पर्क स्थापित नहीं किया, एक बार भी पत्र के द्वारा अपने बारे मेरे मैंने कुछ नहीं लिखा, एक बार भी अपनी व्यथा, अपने दुख दर्द को तुम्हारे पास नहीं भेज सका, परन्तु इसका यह मतलब नहीं है कि मैं तुम्हे विस्मरण कर बैठा हूँ। घर को पूरी तरह से भुला बैठा हूँ, मुझे इस घर की बराबर याद बनी रही है, और प्रत्येक क्षण मैं तुम्हारे दुख दर्द के चिन्तन मेरी भागीदार बना रहा हूँ।

इतना होते हुए भी मैं नहीं चाहता था कि मेरा और घर का सम्पर्क सूत्र जुड़ा रहे, क्योंकि इससे फिर एक समस्या पैदा हो जाती। मेरा हृदय डावाडोल हो जाता। सभव है मेरे पावों मेरे फिर से बेड़ी डालने की कोशिश की जाती, मुझे विचलित करने का प्रयत्न किया जाता और इसीलिये मैं स्वयं अपने स्वयं के डर से भागता रहा।

मैं जानता हूँ कि ये तीन वर्ष कम नहीं हैं। पूरे १००० दिन तुम से अलग होकर मैंने जगलो मेरी बिता दिये हैं। मुझे वह क्षण याद हैं जब मैं तुमसे अलग हो रहा था। तुम्हारी आखो मेरी ज्ञानता आसू बह रहे थे उनकी टीस इस समय भी मेरे

क्या अधिकार था ? उसकी उमगो को समाप्त करने का मुझे क्या हक था ? जब-जब भी मैं इन बातों को सोचता हूँ तो मेरी आद्यों की नीद उठ जाती है, और पूरा दिमाग गरम होकर लावे की तरह उबलने लग जाता है ।

मैं जानता हूँ कि तुम उस माहोल में सुखी नहीं हो, क्योंकि हमारा समाज एक दकियानूसी और सकीण विचारों से ग्रस्त है । जहा पग-पग पर नारी के पावों में बेड़िया डाली हूँई हैं, और उन बेड़ियों को देखकर, उसकी विवशता और छटपटाहट को देखकर पुरुष समाज अपने आप पर, अपने कृत्य और कुशलता पर प्रसन्न है ।

पर ये बेड़िया भी, अभाव दुख और कठिनाइया भी वह नारी झेल लेती है, यदि उसे पति का साहचर्य मिल जाय, परन्तु तुम्हे तो वह भी नहीं मिल पाया, जिसके भरोसे तुम इस घर में आई थी । वह भरोसा ही अपने स्वयं से भाग खड़ा हुआ, जिस विश्वास और सम्बल को लेकर तुम यहा आई थी । वह आधार ही तुम्हारे नीचे से हट गया, और तुम आधारहीन, वैवस, निरीह सी होकर दिन को शरीर तोड़ परिश्रम करती होगी, और रात के अंधेरे में आसुओं से तकिये को सिसक-सिसक कर भिगीती होगी ।

मैंने तुम्हारे शरीर की कोमलता को अनुभव किया है, और साथ ही अपने घर के कठोर कार्यों के भी निकट सम्पर्क में रहा हूँ, जहा प्रात चार बजे से रात बारह बजे तक काम के अलादा कुछ भी नहीं होता । जिस घर में आराम को अभिशाप समझा जाता है, चक्की चलाना, दूर स्थानों से पानी लाना, गायों को दुहना, भोजन एकाना, गोदर लौपना, और घर के संकड़ों कार्यों को करने के बाद भी उपेक्षा । और ताने सुनना—कितना कठिनाईपूर्ण, कितना दुखदायी होता होगा और तुम उस यत्रण की चक्की में पिस कर तिल-तिल कर अपने आपको खाककर रही होगी ।

अन्य स्त्रियों को तो दिन भर के जी तोड़ परिश्रम के बाद पति का कुछ साहचर्य मिल जाता है परन्तु तुम तो उससे भी बचित हो । तुम्हारी आद्यों में आसू तैर जाते होंगे परन्तु उनको पोछने वाला वहा कोई नहीं है, जब परिश्रम से शरीर टूट रहा होगा तब भी तुम्हारा हालचाल पूछने वाला उस परिवार में मुझे कोई नजर नहीं आता, क्योंकि मैंने उस परिवार को भोगा है जहा पर वह की पौरों की जूती समझा जाता है । जहा पर यह देखा जाता है कि वह का कार्य केवल पशु की तरह काम करना होता है, आराम की इच्छा करना उसके अधिकार क्षेत्र के बाहर की बात होती है, वास्तव में ही तुम जितने कष्ट में, जितनी यत्रणा पूर्ण स्थिति में अपना समय व्यतीत कर रही हो, उसको सोच कर मैं काप उठता हूँ । तुम्हारा दुर्बल शरीर इतने थपेडों को किस प्रकार से झेल पाता होगा, क्या इतने थपेडे झेलने के बाद तुम आज तक बची भी रही हो या नहीं, मैं कुछ भी नहीं कह सकता ।

परन्तु इस बात को भली प्रकार से समझ लो, कि जीवन में अलौकिकता तभी प्राप्त हो सकती है, जबकि उसके पीछे कष्टों का लम्बा उत्तिहास हो, त्याग की नीव पर ही कुछ विशेष अलौकिक कार्य सम्पन्न हो सकते हैं । यदि मैं चाहता तो एक

सामान्य जीवन जी सकता था । मुझे किसी प्रकार की कमी नहीं थी, घर में मानवाप्रथा, भाई-बहन थे, सुन्दर पत्नी थी, आनन्ददायक क्षण थे और मैं कहीं पर भी छोटी-मोटी नीकरी कर अपना पेट पाल सकता था ।

परन्तु तुम स्वयं यह सोचो कि ऐसे साधारण जीवन को क्या जीवन कहा जा सकता है ? मेरे जैसा पागल शायद ही कोई होगा जिसने खुशियों को छोड़ कर दुखों के साथ समझौता किया हो । आनन्द को त्याग कर अभावों के साथ रहने में प्रसन्नता अनुभव की है । भोग और विलास को छोड़कर परेशानियों, कष्टों और दुखों से नाता जोड़ा है, परन्तु मैंने यह सब अपने सीने पर पत्थर रखकर किया है, क्योंकि मेरी एक ही भावना, लालसा और इच्छा थी कि मैं सामान्य मानव बनकर नहीं रहूँ । मेरे ब्राह्मणत्व को धिक्कार है, यदि मैं कुछ विशिष्टता प्राप्त नहीं कर सकूँ, ज्योतिष के क्षेत्र में पूर्णता नहीं ला सका, तत्रों और मन्त्रों के अलौकिक रहस्य को उजागर नहीं कर सका, और मेरे देश की जो यह विशिष्ट थाती है उसे पुनः समाज को नहीं सौप सका ।

तुम्हें छोड़ने के बाद मैं एक क्षण भी आराम से नहीं जी सका हूँ, इसके पीछे कोई भोग या वासना की बात नहीं है, अपितु मेरे मन की यह विडम्बना है कि मैं जिस रास्ते पर चला हूँ क्या वह उचित है ? मैं जो कुछ करने जा रहा हूँ, क्या मैं उस कार्य को कर सकूँगा । मेरे सामने जो लक्ष्य है क्या मैं उस लक्ष्य को पा सकूँगा । इस प्रकार के सैकड़ों प्रश्न मेरे मानस में बराबर घुमड़ते रहे हैं और इन विचारों के अधड़ ने एक क्षण के लिये भी मुझे चैन से सोने नहीं दिया है ।

मेरे पत्र को पढ़ते ही तुम्हारे होठों ने बुद्बुदाया था कि यह पागलपन है और आज मैं वास्तव में ही अनुभव कर रहा हूँ कि मैं पागल हूँ । इन तीन वर्षों में मैंने इस शब्द पर कई बार विचार किया है और मैं यह अनुभव कर रहा हूँ कि वास्तव में ही मुझमें इस प्रकार की स्थिति है । पर विना पागल हुए कोई भी वस्तु प्राप्त नहीं हो पाती । विद्यार्थी जब अपनी डिग्री के लिये पागल हो जाता है, रात-रात भर जागता है उसकी भूख और प्यास उड़ जाती है तब जाकर कहीं उसे सफलता मिलती है । भक्त अपने प्रभु के पीछे पागल हो जाता है, उसे न अपने शरीर का होश रहता है और न खानपान का, तब उसे उस प्रभु के दर्शन हो पाते हैं । तुलसी, सूर, मीरा, नादि एक प्रकार से पागल ही थे, उनका पूरा जीवन अपने लक्ष्य के पीछे पागल बन जाता था और इस पागलपन के बाद ही वे अपने लक्ष्य तक पहुँच सके थे । वास्तव में ही विना पागल हुए कोई वस्तु प्राप्त नहीं हो पाती, इस दृष्टि से मैं पागल हूँ और आज इस बात को अनुभव कर रहा हूँ कि मैं भी अपने लक्ष्य के पीछे जब तक पागल नहीं हो जाऊँगा तब तक मुझे अपना लक्ष्य प्राप्त नहीं हो सकेगा ।

तुम्हारे होठों ने मुझे पागल कहा है तो वास्तव में ही मैं पागल हूँ और मैं रहता हूँ कि तुम भी मेरे विचारों का अनुसरण करती हुई पगली बनो । हमारा पूरा धर्मशास्त्र इस बात पर एक भत्त है कि पलीं की गति पति के अलावा कुछ भी नहीं ।

पति ही उसका गुरु, उसका पथ-प्रदर्शक और उसका सर्वस्व होता है, 'पतिरेको गुरु स्त्रियाम्' मनु ने कहा है कि पत्नी को अपने आप में उसी प्रकार का आचरण और व्यवहार ढाल लेना चाहिए जिस प्रकार उसका पति हो, इसीलिये धृतराष्ट्र की पत्नी ने जब देखा कि उसका पति अन्धा है तो उसने भी जीवन भर के लिये अपनी आखो पर पट्टी बाध ली। वेवरवत की पत्नी ने उसी प्रकार अपने जीवन को ढाल दिया था जिस प्रकार से उसका पति था। दात्रेय एक भिखारी था परन्तु वह उच्चकोटि का विद्वान भी था। यद्यपि उसकी पत्नी राजा की पुत्री थी फिर भी उसने पति के समान ही याचनावृत्ति को अपना लिया था। इसी प्रकार-यदि तुम्हारे होठों ने मुझे पागल कहा है तो मैं भी चाहता हूँ कि तुम पगली बन सको और अपने जीवन के त्याग से, मुझे बदल सको जिससे कि मैं अपने लक्ष्य तक पहुँच सकूँ।

मेरा प्रथम पागलपन यह है कि मैं सुष्टु-सुविद्यापूर्ण जीवन को सही जीवन नहीं मानता। मुझे यह देखकर दुख होता है कि मेरे देश के साठ करोड़ नरनारी पराधीनता के जुए से घघे हैं उनमें से कुछ मुझी भर लोग सम्पन्न हैं, वाकी पूरा देश अभावों की चक्की में पिस रहा है, उनके पास याने के लिये भोजन, पहनने के लिये पूरा वस्त्र तथा सोने के लिये छत तक नहीं है। ऐसी स्थिति में यदि मैं आराम का जीवन व्यतीत करता हूँ तो यह मेरे लिये अनुकूल नहीं है, मुझे कोई अधिकार नहीं है कि मैं भरपेट भोजन करूँ, रग-रेलिया मनाऊँ या आनन्द के साथ अपने जीवन को व्यतीत करूँ। मैं चाहता हूँ कि उन दुखियों के अभावों को दूर कर मकूँ, उनके आसुओं को पोछ सकूँ, उनके अभावों, बाधाओं और परेशानियों में भागीदार बन सकूँ।

मेरा दूसरा पागलपन यह है कि मैं ब्राह्मण हूँ और अपने ब्राह्मणत्व को पहचान सका हूँ। मेरे पूर्वज उच्चकोटि के ब्राह्मण थे। उनके पास अलौकिक सिद्धिया थीं, ज्ञान का अस्य भडार था, ज्योतिष के क्षेत्र में वे अद्वितीय थे। काल को अपने चिन्तन के माध्यम से उन्होंने बाध रखा था, और भविष्य की उन अधेरी खाइयों में वे सफलता-पूर्वक ज्ञानने में सफल हो सके थे, जहा पर सामान्य मानव की दृष्टि नहीं जाती।

पर आज वे विद्याएँ कहा हैं, ज्योतिष को सही रूप में जानने वाले इस देश में कितने हैं? तत्र और मत्र की वास्तविकता कहा पर है? आकाश-गमन तथा परदेश गमन की सिद्धिया कहा है? पर—पर— यह सब कुछ मेरे देश में था। हम ब्राह्मणों के पास इस प्रकार की सिद्धिया थी कि हम अपने शरीर में से प्राण निकाल कर निर्जीव शरीर में प्राणों का सचार कर सकते थे। यह बहुत दूर की बात नहीं है, शकराचार्य ने ऐसा कर दिखाया था—पर आज ये सब कल्पनाएँ बन गईं। हमारे ज्ञान का मर्बाल उडाया जा रहा है, हमारी विद्याएँ उपहास का पात्र बन गई हैं, हमारे ब्राह्मणत्व पर लालच लगाया जा रहा है, और इतना सब कुछ होते हुए भी हमारे कानों पर जू तक नहीं रेंगती। हम अपने ही राग-रा में मस्त हैं, अपने ब्राह्मणत्व को भुला दें हैं, अपने पूर्वजों की थाती लोप हो रही है और हम आनन्द से जीवन जी रहे हैं। क्या यह उचित है? क्या इस प्रकार हम इन विद्याओं से अलग नहीं हो जायेंगे? क्या कुछ

समय बाद इस प्रकार की अलौकिक सिद्धियों से हमारा देश चवित नहीं हो जायेगा ? ये और इस प्रकार के सैकड़ों प्रश्न मेरे मानस मे घुमड़ रहे थे और उस दिन मेरे हृदय को सबसे अधिक चोट लगी, जिस दिन एक साधु ने मुझे यह कहा कि ब्राह्मण अपने आप मे समाप्त हो गया है । कुछ समय बाद ब्राह्मण उस व्यक्ति को कहा जायगा जो केवल पेट भरने को ही अपना जीवन समझता हो, और अपनी उदरपूर्ति के लिये यजमान को ईश्वर से भी ज्यादा मान्यता देता हो ।

और मैंने उसी दिन निश्चय कर लिया था कि मैं इस ब्राह्मणत्व को लोप नहीं होने दूँगा । यदि प्रभु ने मुझे शरीर दिया है तो यह शरीर एक सामान्य जीवन बन कर नहीं रह पायेगा । जब तक यह कुछ विशिष्टता प्राप्त नहीं कर लेगा तब तक मैं अपने जीवन को जीवन नहीं कहूँगा, फिर मेरे और कीड़े-मकोड़ों के जीवन मे फर्क ही क्या रह जायगा ?

पर इस प्रकार की अलौकिक सिद्धिया, तत्र, मत्र बाजारो मे नहीं विकते । गली-कूचे मे फिरने वाले साधुओं के पास इस प्रकार का ज्ञान नहीं होता । इस प्रकार के व्यक्ति ससार से उदासीन हैं, समाज से कटे हुये हैं, और प्रकृति की गोद मे, उसके साहचर्य मे अपने आपको लिप्त किये हुए हैं । मुझे उन लोगों तक, उन साधुओं तक, उन विशिष्ट महर्षियों तक पहुँचना है, जिनके पास इस प्रकार की अलौकिक सिद्धिया हैं ।

आज की नई पीढ़ी ने पेट और कोट पहनना, अग्रेजी बोलना और विदेशियों की तरह रहन-सहन अपनाना अपने जीवन का धर्म मान लिया है । ब्राह्मण का वेटा कलर्क बना अपना गौरव समझने लगा है, ऐसी स्थिति मे यह विद्या कैसे सुरक्षित रहेगी । मैंने इस बात को अनुभव किया कि जिन विभूतियों के पास यह ज्ञान है वे इन-गिने ही रह गये हैं, और यदि वे समाप्त हो गये तो यह दुर्लभ ज्ञान, यह अलौकिक सिद्धिया उनके साथ ही समाप्त हो जाएगी ।

इसीलिये मैं अपने जीवन को सामान्य रूप से 'नौकरी करके' विताना पाप समझने लगा था । समाज को आगे बढ़ाने के, उसे जिन्दा रखने के, कई प्रकार हैं । राजनीति के द्वारा भी समाज मे चेतना दी जा सकती है । क्रान्ति के द्वारा भी समाज को आगे बढ़ाया जा सकता है, परन्तु इस प्रकार से जो समाज बनता है वह खोखला होता है । क्योंकि वह देह तो सुन्दर बन जाती है परन्तु उसकी आत्मा शून्य होती है । उस आत्मा मे स्पन्दन इस प्रकार के ज्ञान की चेतना के द्वारा ही दिया जा सकता है, और इसीलिये मैंने इस रास्ते को अपनाया, यदि यह मेरा पागलपन है तो मैं इस पागलपन पर खुश हूँ । मैंने आनन्द का जीवन छोड़कर दुखों का जीवन स्वीकार किया है । खुशियों को त्याग कर अभावों के साथ रहने मे प्रसन्नता अनुभव करने लगा हूँ । राग-रग, भोग-विलास आदि को छोड़कर जगलो मे भटकना, भूमि पर जोना तथा कठिनाइयों, परेशानियों, भूख और अभावों को साथ लेकर पहाड़ों मे इधर-उधर पागलो की तरह भटकना मैंने स्वीकार किया है— और मैं आज इस बात को मानता हूँ कि

मैं जिस रास्ते पर चल रहा हूँ वह रास्ता इतना आसान नहीं है, उसमें काटे-ही-काटे हैं, फूलों की कल्पना करना ही मूर्खता है।

मेरा तीमरा पागलपन यह है कि मैं किसी भी कीमत पर उन लुप्त विद्याओं को प्राप्त करना चाहता हूँ जो कि अलौकिक हैं, और इन तीन वर्षों में मैंने यह अनुभव किया है कि मैं अपने लक्ष्य पर पहुँच सकूँगा। घर पर जब मैं था तब मुझे विश्वास नहीं था कि इस प्रकार की अलौकिक रिद्धिया वास्तव में होती हैं। मन्त्रों में इतनी अधिक शक्ति होती है कि वह असभव को भी सभव कर सकता है। परन्तु आज जब इस क्षेत्र में घुसा हूँ, थोड़ा बहुत जो कुछ प्राप्त किया है उसके आधार पर मैं यह कहने में समर्थ हूँ कि आज भी इस प्रकार के साधु जीवित हैं जो अलौकिक हैं, जिनके पास ज्ञान का अधय भण्डार है, मैंने उन साधुओं के पास पहुँचने का प्रयत्न किया है और मुझे अपना लक्ष्य स्पष्ट दिखाई देने लगा है।

पर मेरे निकलने के बाद मैं एक दिन भी आराम से सो नहीं सका हूँ। तुम यदि आज मेरी हालत देख लो तो शायद अपने आपको सौमार्यशाली समझेगी। तुम्हारे पास सिर ढकने के लिये छन हैं, खाने के लिये स्तरी-सूखी वाजरे या भक्तों की रोटी तो हैं परन्तु मेरे पास तो यह भी नहीं है। कोई निश्चित नहीं है कि शाम कहा पर बैठेगी, सुबह कहा पर होगी। शाम को भोजन प्राप्त भी हो सकेगा या नहीं। शाम तक जीवित भी रह सकूँगा या नहीं, कुछ भी नहीं कह सकता। सब कुछ अनिश्चित है। परन्तु फिर भी मेरी आखों की चमक टूटी नहीं है, वलिक उसमें तीव्रता ही आई है। क्योंकि इसके बावजूद भी मुझे कुछ ऐसे अलौकिक साधु मिले हैं जिनके पास इस प्रकार की विद्याएँ हैं और उनके द्वारा मुझे मिला है—बहुत कुछ मिला है।

यह जीवन कितना कष्टदायक है यदि मैं इस पत्र के माध्यम से व्यक्त करूँ तो तुम्हारी आखें भर जायगी। मेरे पास एक धोती और एक कुर्ता है, जिसे मैं स्नान करने के बाद नित्य बदल लेता हूँ, इसके अलावा किसी प्रकार का कोई भौतिक साधन न तो मेरे पास है और न अपने पास रखना चाहता हूँ।

नगे पाव चलने से पूरे पाव जगह-जगह से फट गये हैं, और कई स्थानों से तो खून भी रिसने लगा है, क्योंकि एक साधु ने यही शर्त रखी थी कि यदि नगे पाव आगे के साल भर तक विचरण कर सको तो तुम ज्ञान पाने के अधिकारी हो, और मैंने उस ज्ञान की प्राप्ति के लिये इस शर्त को भी स्वीकार कर लिया है। मेरी यह धारणा है कि मुझे प्रत्येक स्थान का अन्न स्वीकार नहीं करना चाहिए, प्रत्येक व्यक्ति के हाथ का भोजन ग्रहण नहीं करना चाहिए, इसीलिये मैं दिन में एक बार किसी एक ब्राह्मण पर्ति-वार से एक समय का आटा स्वीकार कर लेता हूँ और अपने हाथों से पकाकर खा लेता हूँ। उसके साथ न तो साग होता है और न अन्य साधन। कई बार तो इस प्रकार का परिवार ही नहीं मिलता और ऐसी स्थिति में भूखे रह जाना पड़ता है। हकीकत तो यह है कि अब कुछ स्वभाव ही ऐसा हो गया है कि भूखे रहकर मैं ज्यादा आनन्द अनुभव करने लगता हूँ।

पिछले महीने मैं एक ऐसे स्थान पर था जो आवादी से काफी दूर था। उस साधु के पास जो ज्ञान था वह अलीकिक था। क्योंकि वह ओघड़ था और जैसा कि तुम जानती हो ओघड़—ओघड़ ही होता है। उसने एक दिन मेरी छोटी-सी गलती पर इतने जोर से डडा मेरी पीठ पर मार दिया था कि आज भी उस स्थान पर दर्द करने लगती है। जिस समय वह डडा लगा था तब तुम्हारा स्मरण हठात् हो आया था। उस दिन की घटना मेरी आखो के सामने तैर गई जबकि तुम्हारे हाथों से दूध की बाल्टी गिरने पर पिताजी ने क्रोध के आवेश में जलती हुई लकड़ी से तुम्हारी पीठ पर बार कर दिया था, उस घटना को मैं भुला नहीं पाया था, क्योंकि वह चोट तेरी पीठ पर नहीं अपितु मेरे हृदय पर लगी थी, वह आधात तेरी पीठ पर नहीं मेरे समाज की निलंजिता और मेरे सकोच पर लगी थी—फकोला पड़ गया था। दो-तीन दिन तक तो तुम मुझसे छुपाती रही, परन्तु जब वह घाव बन गया तब मुझे ज्ञात हुआ और आज जब उस डडे के चोट की कसक अपनी पीठ पर अनुभव करता हूँ तब महसूस होता है कि उस चोट का दर्द तुमने कितनी शालीनता के साथ भोगा था। उस शारीरिक चोट से भी ज्यादा गहरी खरोच तुम्हारे मानस पर पड़ी थी क्योंकि तुम एक अलग वातावरण से आई थी, और मेरे घर पर एक अलग वातावरण देखने को मिला था। तुम्हारे घर मेरे एक अलग भावना थी, एक अलग विचार पद्धति थी, एक अलग जीवन का रहन-सहन था। जबकि मेरे घर का माहौल उससे विल्कुल विपरीत था, और इस माहौल मेरे यदि वहूँ की पीठ पर जलती हुई लकड़ी मार दी जाती है तो यह शिक्षा का एक अच्याय माना जाता है।

इन तीन वर्षों मेरा पता नहीं तुमने और कितनी जलती हुई लकड़िया खाई होगी, कितनी गालियों की बौछार अपने ऊपर झीली होगी। कितनी यत्रणा और कष्ट को तुम दात भीचकर सह रही होगी—कुछ नहीं कह सकता।

यह पत्र मैं ऐसे स्थान से लिख रहा हूँ जहा लास-पास कोई वस्ती नहीं है। इस समय रात के तीन बजे हैं और सारा जगल साय-साय कर रहा है। कभी-कभी जगली पशुओं की आवाजें जगल की इस भयानकता को और भयानक बना देती हैं। यहा पर एक छोटी-सी कुटिया है जिसमे साधु सोये हुए हैं, और बाहर इस दालान मेरे बैठकर मैं तुम्हे पत्र लिख रहा हूँ। मिट्टी के तेल की एक छोटी-सी ढिवरी जल रही है। पिछले दिनों ही एक गृहस्थ से कुछ कागज और एक कलम माग ली थी। क्योंकि तुम्हे कई दिनों से पत्र लिखने की सोच रहा था।

इस पत्र लिखने के पीछे कोई वासना या मोह नहीं है जितनी कि यह इच्छा है कि तुम बहुत अधिक मेरे बारे मेरे चिन्तित न हो। कम-से-कम तुम्हे यह तो अहसास हो कि मैं अभी तक जीवित हूँ। यदि मैं तुलना करता हूँ तो मैं यहा तुम्हारे कष्टों की अपेक्षा ज्यादा सुखी हूँ। तुम्हारे प्रति मेरा एक कर्त्तव्य है, तुम्हारे साथ मेरी भावना जुड़ी हुई है। अग्नि को साक्षी रख कर मैंने तुम्हारा वरण किया है—और इसी धर्म के नाते मेरा यह कर्त्तव्य हो जाता है कि मैं तुम्हे अपने मन की बात कहूँ।

जान बूझकर मैं अपना पता नहीं दे रहा हूँ और सही बात तो यह है कि साधुओं का कोई अता-पता नहीं होता 'रमता जोगी और वहता पानी' का कोई ठिकाना नहीं होता कि आज कहा है और कल कहा होगा।

यह एक तरफ का पत्र व्यवहार है, तीन वर्षों के बाद यह पहला पत्र लिखा है, और दूसरे पत्र की इच्छा अभी मत करना, ही सकता है मैं दो या तीन या चार वर्षों के बाद पत्र लिख सकूँ। परन्तु इतना निश्चित समझना कि मैं जहा भी हूँ सुखी हूँ, स्वस्थ हूँ, मेरे मन में तुम्हारे प्रति जरूरत से ज्यादा अपनत्व है और यह अपनत्व क्षीण नहीं होगा। कभी भी क्षीण नहीं होगा।

यद्यपि मेरे पिता जरूरत से ज्यादा क्रोधी हैं। यद्यपि मेरे माता और पिता का व्यवहार तुम्हारे प्रति बहुत अधिक अनुकूल नहीं होगा। सस्कारों की वजह से वे तुम्हें प्रताड़ित करते होंगे, परन्तु फिर भी तुम्हें धैर्य से काम लेना है। किसी भी हालत में उनके सामने अपनी जवान नहीं खोलनी है। यदि त्रै जलती हुई लकड़ियों से भी तुम्हें पीट लें तब भी तुम्हें उफ़्र नहीं कहना है। खाने के लिए जो कुछ भी मिल जाए उसी को भगवान का प्रसाद समझकर स्वीकार कर लेना है, किसी भी प्रकार की इच्छा या वाचना मत करना।

सब कुछ होते हुए भी वे मेरे माता-पिता हैं, मेरे लिए भादरणीय हैं, उन्होंने जन्म दिया है, इस सासार में कुछ करने के लिए मुझे पाल-पोस कर बढ़ा किया है, अत उनके इम ऋण को मैं स्वीकार करता हूँ। यद्यपि मैं उनसे दूर हूँ इसलिए शरीर से तो मैं उनकी सेवा नहीं कर पा रहा हूँ, पर मुझे विश्वास है कि तुम्हारी तरफ से सेवा में कोई कमी नहीं आएगी। यही नहीं अपितु तुम्हारा यह कर्तव्य है कि तुम उनकी सेवा जरूरत से ज्यादा करो, क्योंकि मेरे हिस्से की भी सेवा तुम्हें ही करनी है।

सेवा में किसी भी प्रकार का प्रतिदान नहीं होता। सेवा केवल एकाग्री होती है उसके माध्यम से किसी प्रकार की प्राप्ति की भावना नहीं होती। तुम्हारे लिए वे सब कुछ हैं, वह परिवार ही तुम्हारा परिवार है और उस परिवार की शरीर से और मन से सेवा करना तुम्हारा कर्तव्य है। मुझे विश्वास है इसमें तुम्हारी तरफ से किसी प्रकार की न्यूनता नहीं आएगी।

यह पत्र केवल तुम्हारे लिए है और इस पत्र को गोपनीय रूप से ही तुम्हे रखना है। तुम्हारे मन में उस परिवार के प्रति जरूरत से ज्यादा भादर और सम्मान बना रहे, चाहे किसी भी प्रकार की स्थिति हो, अपने आप को तुम्हें हर हालत में दीपशिखा की तरह जलते रहना है। मैंने तुम्हारी भावनाओं को पढ़ा है तुम्हारे व्यक्तित्व से जितना भी परिचित हुआ हूँ उससे मैं आश्वस्त हूँ और मुझे तुम्हारे त्याग की रोशनी में अपना पथ स्पष्ट दिखाई दे रहा है।

आज भले ही न सही, परन्तु आने वाला समय इस बात को स्वीकार करेगा कि मेरे निर्माण के पीछे सब कुछ तुम्हारा है। तुम्हारा त्याग मेरे त्याग से बहुत बढ़ा

चढ़ा है। तुम्हारे त्याग की रोशनी में ही मैं आगे बढ़ सका हूँ। मेरे पीछे तुम्हारा बहुत बड़ा सबल है, तुम्हारी प्रेरणा है और शक्ति है।

तुम्हारा समय ईश्वर चिन्तन में ज्यादा लगता चाहिए, प्रभु के सामने तुम्हारी यही प्रार्थना होनी चाहिए कि स्वामी जिस उद्देश्य के लिए गए हैं उस उद्देश्य की पूर्ति में वे सफल हो और अपने ज्ञान से समाज को, आने वाली पीढ़ियों को रोशनी दे सके, उनका पथ प्रशस्त कर सकें

तुम्हारा साथी  
(नारायणदत्त श्रीमाली)

प्रेषक डा० नारायणदत्त श्रीमाली

स्थान अज्ञात

प्राप्तकर्ता भगवती श्रीमाली

आलोक—घर से निकलने के कई वर्षों बाद यह पत्र पण्डितजी ने पत्नी के नाम भेजा था, जिसमें उन्होंने उनके कर्तव्य को स्पष्ट किया था, वही साथ ही-साथ इस पत्र के माध्यम से उनके मानस चिन्तन की ज्ञानी भी प्राप्त होती है उन्होंने इन वर्षों में कितना मानसिक सधर्ष और जन कल्याण के लिए कितना अधिक त्याग और बलिदान किया था उसका आभास इस पत्र के माध्यम से प्राप्त होता है जो कि साधकों के लिए एक दीप-स्तम्भ की तरह ज्योतिर्मय है।

प्रिये ।

बहुत समय बीत गया है, जबकि मैं तुम्हे आज पत्र लिखने बैठा हूँ, मुझे याद नहीं आ रहा है कि मैंने इससे पूर्व तुम्हे कब पत्र लिखा था, परन्तु इतना याद है कि मैंने जो पत्र लिखा था उसको भेजे हुए चार वर्ष से कुछ ज्यादा ही हो गया है।

इन चार वर्षों में मैंने बहुत कुछ भोगा है, बहुत कुछ सहन किया है और जिस उद्देश्य से मैं घर से निकला था उस उद्देश्य की पूर्ति में अनुकूलता प्राप्त हुई है, जब निकला था तब मेरा मन आशकाओं से ग्रस्त था, पता नहीं मैं जिस उद्देश्य के लिए जा रहा हूँ उस उद्देश्य की प्राप्ति होगी भी या नहीं, मैंने अपने जीवन का जो बहुत बड़ा जुआ खेला है उसमें सफल हो सकूँगा या नहीं? मैं जान-वृक्ष कर अपने यीवन को अभावों की भट्टी में घुलने के लिए दे रहा हूँ, क्या यह उचित है या नहीं? इतना हठ करके मैं जा रहा हूँ मेरे जाने से पिता, अपने आपको वेसहारा अनुभव करने लगेंगे, जिस समय मुझे घर में रहकर मा की सेवा करनी चाहिए, उसके आसुओं को पोछना चाहिए, उस समय मैं इन सबको छोड़कर एक ऐसे रास्ते पर बढ़ रहा हूँ

जिसका कोई ओर-छोर दिखाई नहीं दे रहा है, मेरे साथ ऐसा कोई पथ-प्रदर्शक भी नहीं है जिसके सहारे मैं आगे बढ़ सकूँ, ऐसी कोई ज्योति भी मेरे हाथ में नहीं है जिसके सहारे मैं इस अन्धकार में बढ़ता हुआ लक्ष्य पर पहुँच सकूँ। इस प्रकार के सैकड़ों प्रश्न मेरे मन को कुरेद रहे थे, परस्पर विरोधी विचार मेरे मानम को उद्वलित कर रहे थे और मैं भयकर तूफानों से धिर कर अपने मस्तिष्क को बढ़ी कठिनाई से स्वतं रखने का प्रयत्न कर रहा था, परन्तु मेरे सामने कुछ भी स्पष्ट नहीं हो रहा था ।

ऐसे ही परस्पर विरोधी विचारों के अध्यंड में जब मैं लगभग अपने विचारों से डिगने जा रहा था, जब यह निश्चय करने जा रहा था कि मुझे इम अनजाने रास्ते पर नहीं बढ़ना चाहिए, वर्तमान में जो सुख-सुविधाएं हैं उनको छोड़ कर अभावों के दलदल में नहीं फसना चाहिए और जो कुछ प्रभु ने दिया है उसी को पाकर सन्तुष्ट हो जाना चाहिए, जो कुछ प्राप्त है उसी में सन्तोष कर लेना चाहिए । मच कह रहा हूँ उन दुर्लभ क्षणों में मैं अपने विचारों से फिसल गया था, मिन्होंने सम्बन्धियों और परिचितों ने जो भयकर वातावरण मेरे सामने बढ़ा-चढ़ा कर वताया था उससे जाने का निश्चय मैं भन-ही-भन छोड़ चुका था, ऐसे ही क्षणों में तुम दीपशिखा की तरह मेरे सामने प्रकट हुई । मैंने तुम्हारा कारुणिक रूप भी देखा है और तेजस्वी तथा ओज पूर्ण चेहरा भी । तुम्हारा आसुओ से भरा हुआ मुख-मण्डल भी मेरे सामने साकार हुआ है और दृढ़ता तथा तेजस्विता से युक्त चेहरा भी । जब मैं लगभग अपने आपमे टूट चुका था, मा की आखों के बहते आसुओ से लड़खड़ा चुका था, तब तुमने मेरे शरीर मे एक नई विचारधारा पैदा की थी, एक नया रास्ता मेरे मामने स्पष्ट किया था । तुम्हारा वह चेहरा, तुम्हारी वह दृढ़ता और तुम्हारी वह ओजस्विता आज भी मेरे सामने ज्यो-की-न्यो साकार है । सच कहूँ तो इन ७-८ वर्षों में तुम्हारी यह दृढ़ता ही मेरा पाथेय बनी है, मेरे लिए वह प्रकाश विन्दु की तरह जगमगाती रही है, जब-जब भी मैं दुर्बल और कमज़ोर पड़ा हूँ, उसने मुझे सबल, साहस और दृढ़ता दी है ।

प्रारम्भ मे तुम जरूर हताश हो गई थी, एक प्रकार से अपने जीवन से ही निराशा अनुभव करने लग गई थी । ऐसा लगने लगा था जैसे तुम्हारे शरीर का पूरा खून निकल गया हो, चेहरा फीका पड़ने लग गया था और तुम मे और मृत्यु मे बहुत ज्यादा फासला अनुभव नहीं हो रहा था, परन्तु ज्योही मुझमे कायरता का सचार हुआ, तुम्हारा रूप ही बदल गया, तुम्हारी वह श्रीहीन आखें ओजस्विता मे परिणत हो गई, और चेहरे पर एक अपूर्व कान्ति, एक अपूर्व चमक आ गई जो कि अपने आप मे मेरे लिए अन्यतम थी, आश्चर्यजनक थी ।

मैंने इतिहास मे राजपूत महिलाओं के जीहर पहे थे । मैंने पढ़ा था कि वे महिलाएं जो असूर्यम्पश्या कहलाती थीं, मुस्कराती हुई, खिलखिलाती हुई अग्नि को समर्पित

हो जाती थी। आग में कूदते समय भी उनके चेहरे पर एक अपूर्व चमक रहती थी, मृत्यु का वरण करते समय उनके चेहरे की कान्ति और बढ़ जाती थी, और मैंने ऐसा दृश्य पहली बार प्रत्यक्ष रूप में देखा जब तुमने स्पष्ट शब्दों में मुझे बताया कि इस प्रकार हृताश और निराश होने की ज़रूरत नहीं है, जो जीवन में खतरा नहीं ले सकता

डॉ० श्रीमाली

वह कुछ भी नहीं कर सकता। जो मृत्यु से डरता है उसका जीवन स्पन्दित होते हुए भी मृत्यु तुल्य है। जो असफलताओं की आशकाओं से घबरा जाता है वह कायर है, बुजदिल है।

बातचीत के दीरान तुमने आगे कहा था कि जब आपने इस रास्ते पर बढ़ने का निश्चय कर ही लिया है तो फिर इस प्रकार लडखडाने की जरूरत नहीं है, इस प्रकार बुजदिली प्रदर्शित करने की आवश्यकता नहीं है, जो समुद्र के किनारे बैठे रहते हैं उनके हाथ में धोधे ही आते हैं पर जो खतरा उठाकर समुद्र की बीच धार में कूद जाते हैं व युवक ही मोती प्राप्त करने में सफल होते हैं, जीवन में यदि तुम्हें धोधे ही चुनने हैं तो यहें जीवन ठीक है, पर धोधे चुनने वाले कायर और बक होते हैं, बीर और साहसी किनारे पे नहीं बैठे रहते, मगरमच्छ और खतरनाक जन्तुओं से घबराते नहीं हैं, अपितु विना हिचकिचाहट के समुद्र में कूद जाते हैं और जीवन में सफल हो जाते हैं।

मैंने तुम्हारा वरण किया है एक ऐसे पति का वरण किया है जो साहसी है, जिसमें कुछ करने की भावना है, जिसमें आगे बढ़ने की लालसा है, जो समाज में कुछ कर दियाने की क्षमता रखता है, मैंने कायर और निर्वल व्यक्ति से शादी नहीं की, नपुस्क और श्रीहीन व्यक्ति की मेरी नजरों में कोई इज्जत नहीं है, जो अपने आपसे हार जाता है उसकी सासार भी कद्र नहीं करता, यदि एक दार आप मेरी नजरों से गिर गए तो फिर वापिस मेरी नजरों में इज्जत नहीं पा सकेंगे, आप मेरे पति हैं, आपका मम्मान करना मेरा कर्तव्य है। आपकी आज्ञा शिरोधार्य करना मेरा धर्म है परन्तु मेरा यह भी धर्म है कि जब आपके पाव लडखडाने लगे तब आपको सम्बल दू, जब आप निराश और हताश हो जाए तब आपको सहारा दू, जब आप अपने आपमें कमजोरी अनुभव करने लगें तब आपमें आशा का सचार कह और मैं यह कह कर अपने धर्म का निर्वाह कर रही हूँ।

आपमें कमजोरी इसलिए आई है कि आपके मित्रों ने एक भयानक चित्र आपके सामने खीच दिया है। पर आप यह देखे कि क्या उन्होंने अपने जीवन में कुछ किया है? क्या उनको कोई जानता है? इस गली के बाहर क्या उनका कोई अस्तित्व है? क्या वे समाज को कुछ देने में समर्थ हैं? यदि नहीं, तो फिर उनकी बात मानने से क्या लाभ? वे स्वयं कायर हैं और दूसरों को भी कायरता के अलावा कुछ भी नहीं दे सकते। जिसके पास जो कुछ होता है वह वही तो दे सकता है। वे कायर हैं, बुजदिल हैं, जीवन से चूके हए हैं अत उनके पास निराशा और हताशा देने के अलावा कुछ भी नहीं है।

आप विचलित इसलिए हो गए कि आपने पिताजी के उतरे हुए चेहरे को देखा है, आप निराश इसलिए हो गए कि आपने मा की आखों में बहते हुए आसुओं को देखा है, आपने छोटे भाई के उदास चेहरे को अनुभव किया है, आपने ऐसा महसूस किया है जैसे इस घर की रौनक समाप्त हो गई है, आपने ऐसा पाया होगा कि जैसे

इस घर की रोनक समाप्त हो गई है, आपने ऐसा पाया होगा कि जैसे इस घर पर मृत्यु का सन्नाटा छा गया हो और इस वातावरण ने आपके पावों में कमज़ोरी ला दी होगी, पर क्या यह उचित है? जब आपने एक निश्चय कर ही लिया है तो फिर उम्मि में न्यूनता लाना उचित नहीं है, जो भी इस प्रकार का निश्चय करेगा उमे तो इन समस्याओं को पहले से ही देखना पड़ेगा। जो इस प्रकार आगे बढ़ना चाहेगा उसके सामने ये परेशानियाँ आएगी ही। शुभ कार्य में पग-पग पर बाधाए और कठिनाइया आती है, पर इससे वे निराश नहीं होते, हमारा इतिहास इन तथ्यों से भरा पड़ा है, राम के अपने कर्तव्य-निर्वाह में क्या इस प्रकार की बाधाए नहीं आई थी, क्या उनके सामने दशरथ का श्रीहीन चेहरा और कौशल्या की अश्रूपूर्ण आवें नहीं थी? क्या गौतम बुद्ध घर से निकलते समय इन सारे विचारों के बब्डर से नहीं चलके थे? पर इनसे वे अपने पथ से विचलित नहीं हुए। अपितु इस प्रकार की बाधाओं ने तो उनके पैरों में और ज्यादा मजबूती ला दी थी, इस प्रकार की कठिनाइयों ने उनके जीवन में और ज्यादा दृढ़ता पैदा कर दी थी और इसीलिए वे जीवन में सकल हो सके हैं। मृत्यु पर विजय प्राप्त कर सके हैं और उस युग के समाज को बहुत कुछ दे सके हैं।

आप स्वयं सोचिए यदि इस प्रकार राम अपने पथ से अपने निश्चय से लड़खड़ा जाते तो क्या उनमें और एक साधारण राजपूत में कुछ अन्तर रहता? यदि यशोधरा का मोह बुद्ध को बाध लेता तो क्या आज हम उनका नाम स्मरण रख पाते? क्या शक्तराचार्य अपनी मा की आखों के आसुओं से विचलित हुए थे? हमारा तो पूरा इतिहास इस प्रकार की घटनाओं से भरा पड़ा है और आज यदि हम उन युग-पुरुषों को स्मरण करते हैं तो इसलिए कि उनके सामने भी इस प्रकार की चुनौतियाँ थीं, इस प्रकार के विरोधी विचार उनके दिमाग में भी उठे थे, इस प्रकार का विरोधी वातावरण उनके सामने भी था, पर वे कायर नहीं बने, उन्होंने अपने जीवन में हार कर नपुसकता प्रदर्शित नहीं की, अपितु उन्होंने मुझे बांध कर खड़े हुए, समाज को चुनौतिया दी और अपने पूरे जीवन को दाव पर लगा दिया। इसीलिए आज वे जीवित हैं और आगे भी सैकड़ों वर्षों तक जीवित रह सकेंगे।

यह सही है कि जब मैंने विवाह किया तब मेरे दिमाग में बहुत कुछ सुखद कल्पनाएँ थीं, यह उम्मि कल्पनाजीवी होती है, मेरी सहेलियों ने भी मुझे बहुत कुछ बताया था और वे मुझसे बहुत कुछ उम्मीदें भी रख रही होगी, परन्तु जब मैं यहाँ आई तब मैंने अपने आपको एक विचित्र वातावरण में अनुभव किया, यहाँ का वातावरण मेरे घर के वातावरण से सर्वथा भिन्न था। मैं बड़ी कठिनाई से अपने आपको सत्यत कर सकी, मेरे जो दिवास्वप्न थे वे तो एक महीने में ही काफ़ूर हो गए। मेरी जो सुखद कल्पनाएँ थीं वे विवाह के कुछ समय के बाद ही हवा में विलीन हो गईं, मैंने अपने मन में यह निश्चय कर लिया कि मुझे जब अपना जीवन इसी वातावरण में विताना है तो मुझे अपने आपको वातावरण के अनुकूल बनाना ही होगा। जब मैं

धरती पर सोई तो कुछ दिनों तक तो नीद ही नहीं आई, जब मैंने पहली बार मक्के की रोटी चन्दलिए के साग के साथ खाई तो उसका स्वाद एक अजीव अटपटा-सा लगा और मैं भूखी ही उठ गई परन्तु ऐसा कब तक करती? मैं धीरे-धीरे उसके अनुकूल अपने आपको बनाने का प्रयत्न करती रही, उस वातावरण में अपने आपको ढालने की कोशिश करती रही और अपने जीवन को इस प्रकार से कठोर बनाने का प्रयत्न करती रही जिससे कि इस प्रकार के वातावरण को वह झेल सके।

मैंने काफी कुछ पढ़ रखा था, मैंने पढ़ा था कि जब वह पहली बार समुराल जाती है तो उसका बहुत-बहुत स्वागत होता है, उसके आराम का, उसके सुख-सुविधाओं का पूरा-यूरा ध्यान रखा जाता है, देवर उसे गुदगुदाते हैं, ननदे मजाक करती हैं, हम-जोली बहुए उससे चुहल करती है और उसका वह समय मन्त्र-मुग्ध की तरह वीत जाता है, पता ही नहीं चलता कि कब प्रात होता है, कब साञ्च उत्तर आती है और कब रात शुरू हो जाती है।

परन्तु मैंने यहा ऐसा कुछ भी नहीं पाया, अपितु इससे विलकूल भिन्न वातावरण अनुभव किया, शुरू-शुरू में तो मैंने ऐसा अनुभव किया जैसे मैं घनघोर जगल में आ गई हूँ, चारों तरफ एक आतक चतुर्दिक एक डरावना-सा माहौल है और कुछ ऐसा वातावरण है जो कि अत्यन्त ही अटपटा और असगत है।

घर में दूसरे ही दिन मुझे एक मील दूर से पानी लाने की आज्ञा हुई। मैं अपने घर में सिर पर मटकी रखकर कभी पानी लाई नहीं थी, परन्तु उस दिन सभलते-सभलते भी सिर पर से मटकी गिर गई और गिरते ही जिन गालियों से मेरा स्वागत सत्कार हुआ वह मेरे लिए अप्रत्याशित था, मैं अपने आप में जडवत् हो गई, मैं समझ नहीं सकी कि इस समय क्या कर सकती हूँ, इस सारे कार्य में मेरी क्या गलती है, मैं जब सिर पर सयत ढग से मटकी रख नहीं सकती तो गिरना स्वाभाविक है और चार आने की एक मटकी के पीछे जो मेरा अपमान हुआ है जिस प्रकार से मेरे ऊपर गालियों की बौछार हुई है, क्या वह उचित है? क्या वह का स्वागत इस समाज में इसी प्रकार से होता है और यदि पहला दिन इतने स्वागत के साथ हुआ है तो फिर अभी तो पूरा जीवन आगे पड़ा है और यह सोच-सोचकर मैं पीपल के पत्ते की तरह काप गई। सच कहती हूँ वह सारा दिन मेरा दुखी मन से बीता, सारी रात मैं अपने आप में सो नहीं सकी। एक प्रकार से मैं अपने आपको असुन्क्षित अनुभव करने लग गई थी, मुझे कुछ ऐसा लगने लगा था कि जैसे मैं कमाइयों के बीच घिर गई हूँ, आने वाले समय और आने वाली अज्ञात आशकाओं से मैं वर-वर कापने लगी।

परन्तु मैंने यह निश्चय कर लिया था कि यथासमय मेरी तरफ से कम-से-कम गलती हो, मुझे ऐसा कोई मौका नहीं देना चाहिए जिससे कि इन लोगों को कुछ कहने का अवसर मिले, अपने लिए कुछ भी नहीं मांगना है। स्वयं के लिए किसी भी प्रकार की सुख-सुविधा की इच्छा नहीं करती है, जो कुछ मिल जाए, जिस प्रकार से भी

मिल जाए उसी मे सन्तुष्ट रहना है ।

और मैंने अपने जीवन को इसी प्रकार से ढालने का प्रयत्न किया, जमीन पर जो भी बिछीना मिल गया उसी को श्रेयस्कर मान लिया, जो भी खाने को मिल गया उसी को सब कुछ समझ लिया, और अपनी तरफ से कुछ ऐसी व्यवस्था की जिससे कि आपके कानों तक मेरी बात न पहुँचे, क्योंकि जब आपको ज्ञात होता कि यह खाना खाना मेरे लिए कष्टप्रद है तो शायद आपको दुख होता, सुवहं चार बजे उठ-कर चक्की चलाना, पानी लाना, वापस आकर इतने लम्बे-चौडे घर को साफ करना लीपना, भोजन बनाना, गायो और भैसो का दूध दुहना, उसे गर्म करना, उनको चारा-पानी देना, उनके गोवर को लीपना और दोपहर को जगल से घास काटकर लाना, जलाने के लिए लकड़िया जगल से लाना, शाम को फिर गायो का काम, भोजन का काम, कपडे धोना, सबको भोजन करवाना और बरतन भाजते-भाजते रात्रि के घ्यारह-वारह बज जाते । इस हाड्तोड मेहनत के बाद भी उपेक्षा, गालिया और आलोचना सुनना, यह सब कुछ मेरे लिए सर्वथा अप्रत्याशित था । मेरे लिए इतना बोझ उठाना सम्भव नहीं था, मैंने कभी अपने जीवन मे ऐसा सोचा ही नहीं था कि मुझे इस प्रकार के बातावरण मे जाना पड़ेगा, इस प्रकार के कामों मे लगाना पड़ेगा और इस प्रकार से गालिया और ताने सुनने पड़ेगे, सब कुछ अप्रत्याशित था, परन्तु फिर भी मैंने अपने होठ सी लिए थे, अपने होठों पर चुप्पी की मोहर लगा ली थी । मैंने निश्चय कर लिया था कि यह शरीर बहुत समय तक मेरा साथ नहीं देगा, परन्तु जब तक भी इस पिंजरे मे प्राण है तब तक मुझे उफ् नहीं कहना है, सब कुछ भहना है, दात भीचकर सहना है, जी को मसोस कर रहना है और मैंने यह किया है तथा आज तक करती रही हूँ ।

शायद आपको स्मरण होगा, विवाह के दो महीने बाद मेरे पिताजी मुझसे मिलने के लिए आये और अपने साथ खाने के लिए सेव लेकर आये थे, उन सेवों को देखकर मेरे होठों पर पहली बार व्यग्य की मुस्कराहट उभरी थी, मैंने अपने भाग्य पर चिचार किया था कि जहा खाने के लिए सब्जी भी ढग से प्राप्त नहीं होती वहा पर ये सेव प्राप्त होना प्रकृति का और नियति का मेरे ऊपर कितना कूर व्यग्य है ।

मेरे पिता ने जब मेरे चेहरे को ध्यान से देखा तो उन्हे जबरदस्त आधात लगा था । वे इस बात की कल्पना ही नहीं कर सकते थे कि केवल दो महीने मे वेटी का चेहरा इस प्रकार से फीका पड़ जायेगा, चेहरे की सारी लुनाई और चमक इस प्रकार से बुझ जायेगी, इसकी तो उन्होंने कल्पना ही नहीं की थी । उन्होंने एक तरफ मुझे ले जाकर पूछा भी था, कि क्या वेटी तुम यहा खुश हो ?

और मैंने पहली बार चेहरे पर जबरदस्ती से मुस्कराहट चढ़ाकर स्वाभाविक रूप से उत्तर दिया था कि मैं खुश हूँ, बहुत खुश हूँ, परन्तु इतना कहते-कहते मेरी आँखें भर आईं, मैं बहुत प्रयत्न करती रही कि आँखें मेरा साथ दें, आँखें मेरा भेद न खोलें, परन्तु उन्होंने सारी बात कह दी और मेरे पिता की गतुभवी आँखों ने वह

सब कुछ जान लिया जो मैं कहना नहीं चाहती थी ।

मैंने अपने जीवन में पहली बार अपने पिता को उदास देखा था । सम्भवत वे अपने आपको अपराधी समझने लग गये थे, उन्होंने यह अनुभव कर लिया था कि मैंने अपनी बेटी का गला घोट दिया है, उसकी खुशिया नीलाम कर दी है, उसके चेहरे पर जो चमक समाप्त हो गई है उसका जिम्मेवार मैं स्वयं हूँ, उसके आचल मे जो दुख भर दिया है वह मेरी गलती है, उसकी आखों में जो आसू तैर रहे हैं उसका जिम्मेवार मैं स्वयं हूँ और वे सारे विचार उनके दिमाग में एक साथ ही कांध गए होगे और उनका चेहरा बुझ गया । मैंने पहली बार अपने पिता का इतना श्रीहीन चेहरा देखा था, सच कहती हूँ कि उनके इस प्रकार के चेहरे को देख कर मैं रुक नहीं सकी, और उनकी गोद में सिर देकर फक्क पड़ी, मेरी आखों में आसू वाध तोड़कर वह निकले, हिचकिया भर आई और मैं न चाहते हुए भी उनके सामने थरथरा गई, मेरे माथ ही उनकी आखों से भी आसू वह निकले और उनके बीच गर्म आसू जब टप-टप करते हुए मेरे चेहरे पर पड़े तो आप कल्पना कर सकते हैं कि मेरे दिल पर क्या गुजरी होगी और किस प्रकार से उन्होंने इतना जवरदस्त धक्का अपने कमज़ोर सीने पर छेला होगा ?

शाम को मेरे पिता ने जब मुझे अपने घर ले जाने के लिए आपके पिताजी से पूछा तो उन्हे सीधी गालियों की बीछार मिली । उन्हे बताया गया कि मैं कितनी कामचोर हूँ, कितनी मटकिया फोड़ दी है,, कितनी रोटिया जला दी है और कितनी बार अपनी उगलिया जलाकर झूठी सहानुभूति प्राप्त करने की कोशिश की है । उनकी मान्यता यह थी कि जो मेरी उगलिया जल गई है वे मैंने जानबूझकर जलाई हैं, जिससे कि दूसरी बार रसोई करने से छुटकारा मिल सके, यही नहीं अपितु मैंने कितनी बार जगल से आते समय लकड़ियों की ढोरी या घास के गढ़ुर गिराये हैं, इन सबका लेखा-जोखा उनके सामने रख दिया गया, यह भी बताया गया कि मैं निकम्मी हूँ, वेकार हूँ, बलवान नहीं हूँ, कामचोर हूँ और मैं उनके घर के लिए किसी भी प्रकार से योग्य नहीं हूँ ।

आपके पिताजी, धारा प्रवाह रूप से यह सब कुछ कहते रहे और मेरे पिता अपराधी की तरह इन सब बातों को सुनते रहे । आप उन दिनों किसी कार्यवश एक सप्ताह के लिए बाहर गये हुए थे, यदि आप उस क्षण देखते या गालियों की बीछार सुनते तो शायद आप स्वयं स्यत नहीं रह पाते, मैं अपने आप मे इतनी दुखी हो रही थी कि यदि उस समय धरती फट जाती तो निश्चय ही मैं उसमे समा जाने का गौरव अनुभव करती ।

और अन्त मे निर्णय सुनाते हुए बताया कि किसी भी हालत मे हम वह को आपके घर नहीं भेजेंगे, इसको यही रहना होगा, यह यहा सुखी है, हम इसको जरूरत से ज्यादा प्यार दे रहे हैं, इसको किसी प्रकार की कोई तकलीफ नहीं है इमलिए इसको ले जाने की आवश्यकता नहीं है ।

इसके साथ ही आपकी माताजी ने यह भी जोड़ दिया कि भविष्य में इसमें मिलने के लिए आने की जरूरत नहीं है और जब हमें भेजनी होगी तब आपको कहलवा देंगे।

मैंने उस दिन पहली बार अनुभव किया कि हमारे समाज में स्त्रिया कितनी पराश्रित और पददलित है, मैंने उस दिन यह अनुभव किया कि वेटी का पिना होना कितना दुखदायक है। मैंने उस दिन यह अनुभव किया कि पुत्री का पिता किस प्रकार से वेवस हो जाता है, मैं अशुपूरित आखों से उन्हें जाते हुए देखती रही, ऐसा लग रहा था जैसे वे एक गाय को कसाइयों के बाडे में छोड़कर जा रहे हैं। उन्होंने मुड़कर मुझे देखा तक नहीं, या यो कहूँ कि उनमें इतनी शक्ति ही शेष नहीं रह गई थी कि वे मुझे मुड़कर देखते। वे जाते रहे और मैं डबडबाई आखों से उन्हें देखती रही।

इतना होते हुए भी मैंने आपमें कभी गिकायत नहीं की। आप स्वयं अपने विचारों में उलझे हुए थे, आप स्वयं अपनी समस्याओं से घिरे हुए थे। ऐसी स्थिति में मैं अपनी समस्याओं से आपको परेशान करना उचित नहीं समझती थी। आपने एक-दो बार पूछा था कि तुम सुखी तो हो और मैंने जवरदस्ती की मुँकराहट ओढ़कर कहा था कि मैं बहुत सुखी हूँ, बहुत सन्तुष्ट हूँ।

मैं उस दृश्य को नहीं भुला पा रही हूँ जब मैं सर्दी में बीमार पड़ गई थी, मैं जमीन पर सोती रही क्योंकि घर में एक ही खाट थी और उस पर आपके पिता जी सोते थे, जमीन पर पूरा विछौता नहीं था और ओढ़ने के लिए बोरी की जो सिली हुई गुदड़ी थी वह पर्याप्त नहीं थी। आप स्वयं जानते हैं कि आपके गाव में किननी सर्दी पड़ती है और ऐसी सर्दी में जब पूरे पहनने के लिए कपड़े नहीं थे ओढ़ने के लिए पूरी गुदड़ी नहीं थी तो सर्दी लगना और बुखार आना स्वाभाविक था। जब सुबह मैं उठने के लिए उच्चत हुई तो मैं उठ नहीं पाई। ऐसा लग रहा था जैसे मेरा सारा शरीर टूट रहा है, दिमाग चक्कर खा रहा था और उस समय  $104^{\circ}$  के आसपास में बुखार अनुभव कर रही थी।

परन्तु मैं किर भी हिम्मत करके उठी और चक्की चलाने लगी। मैं कोशिश कर रही थी फिर भी मैं स्वयं अपने आप में नहीं थी। मुझे कुछ भी पता नहीं था कि चक्की चलाते-चलाते कब मैं सज्जाशून्य-सी हो गई और मेरा सिर चक्की के हत्थे पर टिक गया।

मुझे होश तब आया जब मेरी कमर पर जोरों की लात लगी और इसके माथ-ही-साथ गालियों की बौछार मुझे झेलने को मिली, वह मेरे लिए आश्चर्यजनक थी, मैं अपने आप में नहीं थी, मुझे यह भी जात नहीं था कि कमजोरी की वजह से मैं इस बुखार में कब देहोश हो गई हूँ और कब चक्की का चलना बन्द हो गया है।

जब आपकी माताजी ने चक्की चलने की आवाज नहीं सुनी तो वे दबे पाँव यह देखने के लिए आईं कि वह क्या ढोग कर रही है? और जब उन्होंने देखा कि

मैं चक्की के हृत्ये पर सिर रखकर पढ़ी हूँ तो उन्होंने सोचा कि यह सो रही है और उन्होंने जितनी तेजी से और जोर से लात मेरी कमर पर लगा भक्ती थी लगाई। ही सकता है कि उन्होंने लात धीरे लगाई होगी परन्तु एकवारगी ही मेरा सिर चक्कर खा गया और मैं वही पर बेहोश होकर गिर गई, लात के प्रहार से चक्की का हृत्या मेरे सिर मे घुस गया और खून वह निकला।

परन्तु उन्होंने इस बात की आवश्यकता ही नहीं समझी कि उम खून को बन्द करने का उपाय भी करना है, या बेहोशी को दूर करने का भी यत्न करना है, पता नहीं मैं कब तक वहां पढ़ी रही, खून बहन्वहकर सूख गया था और जब मेरी आख पुली, तब दिन के तीन बजे थे और मैं वही चक्की के पास पढ़ी हुई थी।

आज भी वह चोट का निशान रह-रह कर साल जाता है और इतना जोरों से दर्द उठता है कि मैं सहन नहीं कर पाती। पिताजी के यह पूछने पर कि खून कैसे निकला तो माताजी ने कहा था कि मर जाती तो अच्छा था, जिन्दा रहकर यह क्या करेगी और इस घर का क्या भला कर सकेगी ?

उफ् ! आज इस जगल मे बैठा हूँ, तुम से बहुत दूर, पर—सच कहता हूँ कि तुम्हारे साथ जो घटनाए घटी है वे सब रह-रहकर मेरे दिमाग मे वरावर चक्कर काटती रहती हैं मैं जितना ही इन घटनाओं को भुलाने का प्रयत्न करता हूँ उतनी ही ज्यादा ये घटनाए मेरे मानस को उद्वेलित करती रहती हैं, वास्तव मे ही मेरा समाज आज के समय मे बहुत ही पिछड़ा हुआ है और इस समाज मे तूने जो कुछ भोगा है, जिस प्रकार से भोगा है, वे घटनाए जब स्मरण आती हैं तो मेरे रोगटे खड़े हो जाते हैं और मैं अपने आप मे कापकर रह जाता हूँ।

मैंने तो अपने आपको उस समाज से कुछ समय के लिए काट लिया है एक प्रकार से अपने आपको अलग कर लिया है पर तुम उसी समाज मे हो, उसी वातावरण मे हो, उसी परिवार मे हो और उस दमधोटू वातावरण मे तुम किस प्रकार से सास ले रही होगी, यह सोचकर मैं अपने आपको अपराधी-ता महसूस करने लग जाता हूँ।

इस समय मैंने एक पहुचे हुए साधु से “नखर्दर्पणादि खण्ड विश्रृति” ज्ञान प्राप्त किया है, इसके माध्यम से हम अपने अगृहे के नाखून मे वर्तमान जीवन की सारी घटनाये देख लेते हैं, मैंने यह साधना सीखने के बाद सबसे पहले तुम्हे देखने का प्रयत्न किया था, केवल इसी तथ्य से कल्पना कर सकती हो कि मेरे मानस मे तुम्हारा विष्व तुम्हारा स्मरण कितना अधिक शक्तिशाली है।

और जब मैंने अपने दाहिने हाथ के अगृहे के नाखून मे तुम्हारा चित्र देखा तो मेरा हृदय धक्के से रह गया। एक दुबली-पतली लाश की तरह आगत मे एक तरफ दौड़ी हुई हो, शरीर पर फटी हुई साढ़ी पहनी हुई है, आँखें अन्दर धस गई हैं, शरीर पर मास का नाम-निश्चन तक नहीं है और ऐसा लग रहा है जैसे अस्थि-पजर पर जन्मगद्दनी की जीवित खाल चढ़ा दी हो।

सच कहता हूँ तुम्हारे इस रूप को देखकर मैं अपने आपे मे नहीं रह सका था, मैंने अपने आपको पूरी तरह से अपराधी महसूस किया था, उस दिन मैंने अपने आपको कितनी बार धिक्कारा होगा इसकी कोई कल्पना ही नहीं कर सकता, मैंने स्वयं को धिक्कारते हुए कहा कि यह सब तुम्हारे कारण हुआ है। इसमे केवल तुम्हारा स्वार्थ है, तुमने अपने स्वार्थ के लिए एक पूरे जीवन को वरदाद कर दिया है, उसके यौवन को, उसकी खुशिया और उसकी उमगो को, दुख की भट्टी मे वेरहमी से फेंक दिया है। तुमने इस बात को सोचा भी नहीं कि जो कुछ तुम कर रहे हो, उसके पीछे कितना कुछ हो जाएगा, उस दिन तो सोच-सोचकर पागल-सा हो गया था और उस रात्रि को हिचकिया भर-भरकर जितना रोया था उतना शायद अपने पूरे जीवन मे भी नहीं रोया हूँगा, उस दिन जितना अपने आपको अपराधी महसूस किया था उतना कभी भी महसूस नहीं किया। जिस दिन मेरे पावो मे साप लिपट गया था और मृत्यु मुहसे एक क्षण के अन्तराल पर थी उस दिन भी मैं इतना विचलित नहीं हुआ था जितना उस दिन तुम्हें नाखून मे देखकर हुआ था।

परन्तु मुझे सन्तोष है कि तुम जीवित हो। मुझे उस दिन कम-से-कम इस आशका से तो भुक्ति मिल गई कि जिसने मेरे लिए त्याग किया है जिसने मेरे लिए अपने आपको बलिदान किया है उसकी सांसें अभी तक कायम हैं, उसके शरीर का मास भले ही समाप्त हो गया हो, चमड़ी अभी तक जिन्दा है और एक बार फिर मेरे हृदय ने पुलक महसूस की है, बानन्द अनुभव किया है, घर जाने की ललक पैदा की है और यह इच्छा बलवती हुई है कि मुझे जल्दी-से-जल्दी तुमसे मिलना चाहिए, जल्दी से-जल्दी अपनी बाहो मे भरकर तुम्हे उठा लेना चाहिये।

इस समय मैं तुमसे बहुत दूर हूँ। इतना दूर कि यदि मैं जल्दी-से-जल्दी आना भी चाहूँ तब भी मुझे काफी समय लग जायेगा और यह भी कि जिस उद्देश्य के लिए मैंने इतना सब कुछ ज्ञेला है वह अब कुछ ही कदम दूर रह गया है। मैंने बहुत कुछ प्राप्त किया है और यदि तुम मेरी उपलब्धिया, मेरी सफलता सुनोगी तो तुम एक-बारगो प्रसन्न हो जाओगी, तुम्हारे चेहरे पर बात्म-सन्तोष की झलक उभर आयेगी, तुम्हारी आखो मे विश्वास की ज्योत्सना फैल जायेगी, तुम्हारे होठो पर खुशी का तराना गुनगुना उठेगा और मन को एक बार फिर विश्वास हो जाएगा कि कुछ प्राप्त हुआ है, जिसके लिए इतना सब कुछ किया है।

तुम्हारा कोई पत्र मेरे सामने नहीं है पर तुम्हारा मौन-पत्र अपने आपमे अन्यतम है, घर से रवाना होते समय तुमने जिस साहस के साथ मुझे विदाई दी थी वह अपने आप मे अन्यतम क्षण है। उस समय, जब कि मैं कायर हो रहा था, मेरे पाव कमजोर पड़ रहे थे और जब यात्रा स्थगित करने का निर्णय कर लिया था तब तुमने जिस साहस के साथ, जिस वीरता और धैर्य के साथ मुझे सलाह दी थी, आगे बढ़ने के लिए प्रेरणा दी थी, कुछ कर गुजरने के लिए साहस दिया था वह आज भी मेरे सामने ज्यो-कान्त्यो है। मैं उन आखो की चमक भूला नहीं पाया हूँ, तुम्हारे उन

शब्दो ने मुझे वरावर सहायता दी है और मैं आश्चर्य से उस समय तुम्हें देख रहा था, तुम्हारे परिवर्तित रूप को देख रहा था, भारतीय नारी के आदर्श को परख रहा था कि यह वही नारी है जो मेरा प्रस्ताव सुनकर हतप्रभ हो गई थी, जिसकी आवें डबडवा आई थी, जिसका चेहरा फीका पड़ गया था और जिसके शरीर में एक कपन एक थरथराहट पैदा हो गई थी, पर जब इसी भारतीय नारी ने अपने पति को कमज़ोर होते हुए देखा है तो इसका रूप ही बदल गया है।

वास्तव में ही उन क्षणों में तुम्हारा धैर्य तुम्हारा साहस अप्रतिम था, तुमने साहस के साथ मुझे जाने के लिए प्रेरित किया। तुमने जो कुछ कहा था वे अक्षर मेरे जीवन के लिए तो स्वर्णिम अक्षर हैं। तुम्हारा वह साहस, वह औजस्ती रूप मेरे लिए अप्रत्याशित और आश्चर्यजनक रहा है।

परं पर जब मैं रवाना होने के लिए तैयार हुआ और जिस दिन मैंने रवाना होने का निश्चय कर लिया सारा सामान बघ गया तब तुम्हारा वही पत्ती रूप पुन उभर आया। तुम्हारा चेहरा फिर आसुओ से भर गया और तुमने जो कुछ साहस दिखाया था वह एकदारगी ही ढह गया। मैं कितने दुखी मन से, कितने व्यथित हृदय से वहा से रवाना हुआ था, वह मैं ही जानता हूँ। परन्तु उससे भी ज्यादा तुम व्यथित थी, ज्यादा दुखी और उदास थी। ऐसा लग रहा था जैसे देह से प्राण जा रहे हो और वह देह वेवस खड़ी देख रही है। उस समय मैं जान करके भी अनजान बना रहा, मुझमे इतना साहस ही नहीं रह गया था कि मैं मुड़कर तुम्हें और तुम्हारी उस अवस्था को देखूँ।

मुझे विश्वास है तुम सुख से होगी, मेरी तरफ से किसी प्रकार की चिन्ता करने की जरूरत नहीं है। मैंने तुम्हें एक से अधिक बार देखा है, यह सब साधना के द्वारा ही सम्भव हो सका है और जब भी तुम्हारा स्मरण आता है मैं अपने आपको रोक नहीं पाता हूँ, तुम्हें देख लेता हूँ और अपने मन को शान्ति दे देता हूँ।

मेरे माता-पिता की सेवा करना उन्हे कष्ट न हो, इस बात का ध्यान रखना परिवार का मगल ही तुम्हारा मगल है, माता-पिता का आशीर्वाद ही हमारे जीवन का पाथेय है।

श्रीधर ही तुम्हें पत्र लिखूँगा, जिसमे विस्तार से अपनी बात को कह पाऊँगा।

स्नेह युक्त,  
(नारायणदत्त श्रीमाली)

## डा० श्रीमाली का पत्र ऋतु के नाम

प्रष्टक डा नारायणदत्त श्रीमाली

स्थान जोधपुर

प्राप्तकर्ता ऋतु नैनीताल

आलोक—इस पत्र के माध्यम से पण्डितजी के मानस चिन्तन का आभास मिलता है कि किस प्रकार से गृहस्थ में रहते हुए भी अपने आपको वीतरागी-सा बना रखा है और किस प्रकार से एक साधक गृहस्थ में रहते हुए भी बानप्रस्थ वत् जीवन व्यतीत कर सकता है, जीवन का प्रत्येक क्षण कितना अधिक मूल्यवान होता है और उसका किस प्रकार से हिसाब रखा जाता है इसका आभास इस पत्र के माध्यम से साधकों को प्राप्त होता है।

प्रिय ऋतु,  
शुभाशीर्वाद ।

तुम्हारा पत्र मिला, जिसमें तुमने आरोप लगाया है कि मैं जान बूझ कर तुम्हारे पत्र का उत्तर नहीं देता या तुम्हें पत्र का उत्तर प्राप्त करने में बहुत अधिक प्रतीक्षा करनी पड़ती है, इसका तात्पर्य यह नहीं है कि मैं पत्र का उत्तर देना नहीं चाहता या तुमसे अथवा तुम्हारे परिवार से उदासीन हूँ, अपितु इसका कारण मेरी अत्यधिक व्यस्तता है। मैं चाहता हूँ कि मेरे जीवन का प्रत्येक क्षण रचनात्मक कार्यों में ही व्यतीत हो। आगे के जीवन में मेरी जितनी सासें हैं उनका हिसाब-किताब समाज के पास हो, एक भी क्षण व्यर्थ में नहीं बीत जाए, इस बात का मुझे हमेशा आभास रहता है।

तुमने अपने पत्र में आरोप लगाया है कि मैं उस तरफ चिछले एक वर्ष से नहीं आ सका हूँ या मैं नहीं आना चाहता हूँ, तुम्हारा ऐसा सोचना व्यर्थ है। मैं स्वयं तुम्हारे परिवार से मिलने के लिए उत्सुक हूँ, उनकी सेवा मेरे मानस में इस समय भी है, उनकी भावनाओं को मैं भली प्रकार से समझता हूँ और मेरे न आने से आप सब लोगों को कितनी खीझा, कितनी उदासी और कितनी वेचैनी होती होगी, इमंजी मैं कल्पना कर सकता हूँ।

परन्तु तुम्हारे सामने प्रश्न केवल तुम्हारे परिवार का है, जबकि मेरे सामने इस प्रकार के सैकड़ों, हजारों परिवारों का प्रश्न है, तुम्हारी समस्याओं से तुम चिन्तित हो और चाहती हो कि इस समस्या का निराकरण जल्दी हो जाए। जिस प्रकार से तुम सोच रही हो उसी प्रकार से अन्य परिवार के लोग भी तो सोचते होंगे। भारतवर्ष में कम-से-कम एक करोड़ से ज्यादा लोगों से मेरा व्यक्तिगत परिचय होगा और इनमें से कम-से-कम पाँच-दस लाख परिवार ऐसे होंगे जिनका मुझसे निकट का परिचय होगा। वे यह चाहते हैं कि मैं उनके थहरे भी जाऊ, उनकी बातें भी सुनू, उनकी समस्याओं का निराकरण भी करू, जिस प्रकार से तुम्हे और तुम्हारे परिवार को खीझ या देखनी होती है उसी प्रकार से इन इस लाख परिवारों को भी होती होगी, जिस प्रकार से तुम मुझसे मिलने के लिए आतुर हो उसी प्रकार से और लोग भी तो होंगे। काश्मीर से कन्याकुमारी तक मेरा परिवार फैला हुआ है, मैं उन सब परिवारों का एक सदस्य हू, उनके सुख-दुख का भागी हू, उनकी समस्याओं के निराकरण में सहयोगी हूं, उनके हृदय और विश्वाद, दुख और सुख आदि मेरा भी योगदान रहा है, इसीलिए इन सबसे मेरा आत्मीय सम्बन्ध है, मेरा अपनत्व है, निकट का सम्पर्क है।

इस सम्बन्ध या सम्पर्क के पीछे किसी प्रकार का कोई स्वार्थ नहीं है, उन परिवारों से मुझे कुछ लेना नहीं है, उनके और मेरे बीच जो सम्बन्ध हैं वे आत्मीय सबध हैं, प्रेम के सम्बन्ध हैं, सरलता और सहजता के सम्बन्ध हैं, इसीलिए ये सम्बन्ध स्थायी हैं और इतने वर्ष बीतने के बाद भी इन पर किसी प्रकार की गर्द नहीं जमी है।

जो सम्बन्ध स्वार्थ पर आधारित होते हैं वे ज्यादा समय तक जीवित नहीं रहते, जिन सम्बन्धों के पीछे केवल मात्र स्वयं का ही हित चिन्तन होता है वे सम्बन्ध क्षणजीवी होते हैं, जिन सम्बन्धों के पीछे वासना, धोखा, कपट, छल या स्वार्थ होता है, उन सम्बन्धों का अन्त अत्यन्त ही दुखदायक होता है, मैं इस प्रकार के सम्बन्धों की भत्सना करता हू, इस प्रकार के सम्बन्धों का निर्वाह मैं कर ही नहीं सकता, मैं तो अपने जीवन में पूरी तरह से उन्मुक्त रहा हू। मेरे जीवन का कोई भी क्षण गोपनीय नहीं रहा है, मेरे जीवन का प्रत्येक हिस्सा सार्वजनिक है। मैं चाहता हू कि मेरा यह जीवन और आगे का जीवन इसी प्रकार सार्वजनिक बना रहे, ऐसी स्थिति में छल, कपट, धोखा की गुजाइश कहा हो सकती है ?

मैं तुम्हारी और तुम्हारे परिवार की समस्याओं से परिचित हू, परन्तु यह समस्या इतनी तीव्र नहीं है कि उसका समाधान आज का आज ही होना आवश्यक हो। तुमने अपने पत्र मेरे आरोप लगाया है कि मैं तुम लोगों को भुला दौड़ा हू या तुम्हारे कार्यों के बारे मेरे मैं सचि नहीं ले रहा हू, यह सोचना व्यर्थ है। मैं अपने जीवन मेर सत्य का हाथी रहा हू। मैं उतनी ही बात कहता हू जितनी कि कर सकता हू, व्यर्थ मेर किसी को न तो धोखे मेर रखता हू और न उसे दिवास्वर्ण दिखाता हू।

दिलस्व होने की बात मैं स्वयं स्वीकार करता हू और यह शिकायत तुम्हारी

ही नहीं है अपितु सँकडो-हजारो परिवारो की है, पर तुम स्वयं सोचो कि तुम्हारी तरफ तो इसलिए आना है कि तुम लोगों से मिलना है, पर जब मैं घर से रवाना होने का उपक्रम करता हूँ और शात होता है कि कलकत्ता के किसी परिचित परिवार का पुत्र बीमार है और उनकी सारी बाशा केवल मेरी ओर ही लगी दुई है, उनकी यही

भावना है कि यदि मैं वहा पहुँच जाता हूँ तो उनका इकलौता पुत्र वच सकता है तो तुम बताओ कि ऐसी स्थिति मेरे मैं तुम्हारी तरफ कैसे आ सकता है? मेरा पहला कर्तव्य यह होता है कि मैं उस दुखी परिवार के पास पहुँचूँ। उसे सान्त्वना दूँ और यदि मुझे मैं कुछ शान है तो उसके द्वारा उसके पुत्र को स्वस्य करूँ।

कई बार ऐसा होता है, कई बार ऐसा हुआ है, तुम्हारा ही नहीं और भी कई परिवारों का मुझ पर आरोप है कि मैं उनसे मिलता नहीं हूँ या मिलना नहीं चाहता या कुछ क्षणों के लिए आकर तुरन्त रखाना हो जाता हूँ। उन्हें ऐसा लगता है कि जैसे श्रीजन कृष्ण मेरे एक शीतल हवा का क्षोका कुछ क्षणों के लिए आकर चला गया हो, परन्तु इतना होते हुए भी मैं उन कार्यों को प्राथमिकता देता हूँ जो तुरन्त आवश्यक होते हैं, जिनका समाधान यदि कुछ समय के लिए टाल दिया जाए तो ऐसी घटना घटित हो जाती है जिसका समाधान फिर सम्भव ही नहीं होता।

मुझे तो खुशी है कि तुम्हारा जन्म पहाड़ों की गोद मेरे हुआ है और पहाड़ों की निश्छलता, पहाड़ों की सहजता, उसकी सरलता तुम्हारे जीवन मेरे भी व्याप्त हुई है, मेरा स्वयं का अधिकाश जीवन पहाड़ों मेरे ही व्यतीत हुआ है। मेरे तो जीवन के सुख-दायक क्षण ही प्रकृति की गोद मेरे बीते हैं, प्रकृति को जिस रूप मेरे मैंने समझा है उस प्रकार से कम लोगों ने समझा होगा, मेरे लिए यह प्रकृति मात्र है, वहिन है, इसने मुझे बहुत कुछ दिया है, मेरे जीवन को यदि खुशियों से परिपूर्ण किया है तो वह इस प्रकृति के माध्यम से ही हो पाया है।

पर आज मैं उस प्रकृति से कट सा गया हूँ, एक ऐसे लोक मेरे अपने आपको घिरा हुआ अनुभव कर रहा हूँ जिसमे बघन है, कसावट है मोह और प्रेम का चतुर्दिक जाल है, इस लोक से जितना ही ज्यादा अलग होने का प्रयत्न करता हूँ उतना ही ज्यादा उलझता जाता हूँ। आज का मानव पूरी तरह से कृतिम हो गया है इसीलिए उसमे छल, कपट, धोखा और अनाचार की बाहुल्यता आ गई है, इतना होने पर भी वह प्रकृति से अपने आपको अलग नहीं कर पाया है, बहुत बड़े-बड़े मकान बनाकर उसमे प्रकृति के पीछे लगाने को वह आतुर रहता है, क्योंकि उसके जीवन का आधार उसकी मानवीयता का आधार प्रकृति रहा है। अत व्यक्ति जितना ही ज्यादा प्रकृति से कटता है, वह उतना ही ज्यादा खोखला होता है।

मैं जगलो मेरे अकेला रहा हूँ, मेरे नीचे धरती का बिछीना रहा है और मैं आकाश की चादर ओढ़कर निर्द्वन्द्व रूप से सोया हूँ। मेरे पास कुछ नहीं होते हुए भी मैं अपने आपको सासार का सबसे ज्यादा सम्पन्न समझता था क्योंकि मेरे पास प्रकृति श्री, उस प्रकृति के हजारों रूप मेरे सामने थे, मैं प्रत्येक पल उस प्रकृति के परिवर्तित रूप को देखता था और अपने आपमेरे मुख होता था। जितना ही ज्यादा मैं प्रकृति के निकट गया हूँ उतना ही ज्यादा मुझे सुख और सन्तोष मिला है, जितना ही ज्यादा मैंने प्रकृति से तादातम्य स्थापित किया है उतनी ही ज्यादा मुझे अनुकूलता प्राप्त हुई है।

और आज मैं विल्कुल दूसरा जीवन जो रहा हूँ, रहने के लिए बहुत बड़ा मकान है, खाने के लिए सुस्वादु भोजन है, काम के लिए नौकर चाकर हैं और इतना सब कुछ होते हुए भी मेरे मन में शान्ति नहीं है। एक छटपटाहट है कि मैं कितना जल्दी इस कृतिमता से निकलूँ और प्रकृति की गोद में चला जाऊँ। मुझे यह भवन, यह सुख-सुविधाएँ विल्कुल सान्त्वना नहीं देती। मैं एक प्रकार से अपने-आपको घिरा हुआ अनुभव करने लग गया हूँ। जगलो में रहते हुए जो मस्ती थी, जो उन्मुक्त भावना थी वह समाप्त हो गई है और इस समय तो चौबीसों घण्टे कार्य के अलावा कुछ भी मेरे सामने नहीं रह गया है।

प्रात चार बजे से उठ कर रात्रि को ग्यारह बजे तक मैं एक क्षण के लिए भी विश्राम नहीं कर पाया या यो कहा जाए कि विश्राम करने को समय ही नहीं मिलता। मैं स्वयं इस प्रकार बीस-बीस घण्टे कार्य करते-करते थक गया हूँ, मैं चाहता हूँ कि जितना जल्दी इससे छूटकर उस तरफ आ सकूँ, प्रकृति की गोद में बैठ सकूँ, उसके साथ बातें कर सकूँ और एक बार पुन अपने जीवन को आनन्द के क्षणों में डुबो सकूँ।

मैंने दोनों प्रकार का जीवन जीया है, मैं शूख और अभाव में भी रहा हूँ और सम्पन्नता को भी अनुभव किया है। पत्थरों और चट्ठानों पर भी सोया हूँ और मध्यमली गहों पर भी विश्राम किया है। जगलो में विचरण करता रहा हूँ और ऊचे महलों और होटलों में भी रहा हूँ परन्तु इन दोनों स्थितियों में से यदि मुझे एक स्थिति चुनने के लिए कहा जाए तो निश्चय ही मैं उस स्थिति को ज्यादा श्रेयस्कर मान रहा हूँ जिसका रास्ता प्रकृति की तरफ है। इस प्रकार के ऊचे-ऊचे भवनों में रहते हुए मुझे किंचित भी सुख नहीं मिलता, मध्यमली गहों पर लेटकर मुझे नीद नहीं आती, आनन्द और वैभव के ऊचे में रहते हुए भी मेरा मन छटपटाता रहता है। एक प्रकार का अभाव-सा अनुभव करता है, ऐसा लगता है जैसे मैं अपने जीवन से कट गया हूँ, मूल जीवन स्रोत से परे हट गया हूँ। मेरे जीवन की पूर्णता उसी दिन हो सकती है जिस दिन वे प्रकृति से पुन तादात्म्य स्थापित कर सकते। जब भी मुझे प्रकृति की गोद में जाने का अवसर मिलता है, मेरे लिए वे क्षण स्वर्णिम होते हैं, उन क्षणों का मैं जी भरकर आनन्द लेता हूँ और पुन अपने आपको तरोताजा और स्वस्थ अनुभव करने लग जाता हूँ।

इसलिए मेरी तो स्वयं की यह इच्छा रहती है कि मैं उस तरफ आऊँ, आप लोगों के परिवार के ऊचे रहूँ, प्रकृति के साथ अपने आपको एकाकार करूँ और कुछ क्षण भी यदि मुझे इस प्रकार के मिल जाएँ तो वे क्षण मेरे स्वयं के हो जाएँ, मेरे नाम लिख लिए जाएँ।

परन्तु मैं इस प्रकार के क्षणों से बचित हो गया हूँ, चाहते हुए भी वे क्षण मेरे नहीं रहे, क्योंकि मैं इतना अधिक स्वार्थ अपने आपमें पैदा नहीं कर सकता। जिस उद्देश्य के लिए मैंने अपना घर बार छोड़ा था, जिस लक्ष्य के लिए मैंने अपने योवन

को दाव पर नगाया था, जिस उद्देश्य की पूर्ति के लिए कष्ट सहे थे तो क्या वह उद्देश्य मेरा व्यक्तिगत था ? मैं अपने जीवन मे व्यक्तिगत जैसी कोई मान्यता नहीं रखना चाहता । मैं तो चाहता हूँ कि मेरा प्रत्येक क्षण समाज के लिए समर्पित रहे, मैं जो कुछ सीख सका हूँ, जो कुछ मैंने प्राप्त किया है उसे दोनों हाथों से लुटाऊ, समाज को ज्यादा-से-ज्यादा वह ज्ञान दूँ जो मैंने प्राप्त किया है और इस ज्ञान के माध्यम से अपने समाज का, अपने देश का ज्यादा हित-सम्पादन करूँ ।

और इस हित सम्पादन मे यदि मुझे व्यक्तिगत क्षण नहीं मिलते हैं तो मुझे कोई चिन्ता नहीं, यदि मुझे आराम और सुविधाएं नहीं मिलती हैं तो इसका मुझे गिला नहीं है, यदि चाहते हुए भी मैं कुछ क्षण अपने लिए नहीं निकाल सकूँ तो मुझे इस बात की कोई परवाह भी नहीं है । यदि मेरे आगे का पूरा जीवन समाज के लिए समर्पित हो जाए तो यह मेरे लिए युशी की बात होगी । मेरे जीवन का प्रत्येक क्षण समाज का हित कर सकता हो तो इससे ज्यादा प्रसन्नता की बात कुछ हो ही नहीं सकती ।

मैंने भारत की प्राचीन विद्याओं को प्राप्त करने मे जो कष्ट भोगा है, जो दुख झेला है, जो परेशानिया उठाई हैं, वे मैं ही समझता हूँ और मेरे मन की यही आकाशा है कि मैं इस ज्ञान को अपने साथ नहीं ले जाऊँ, जो कुछ मैंने प्राप्त किया है उसे समाज मे बाट दूँ, लोगों को दे दूँ और इस प्रकार से उस ज्ञान को जीवित रखूँ जिससे कि आने वाली पीड़िया उस ज्ञान से वचित न हो ।

पर मुझे दुख है कि मेरे समाज की वर्तमान पीढ़ी बहुत ही उतावली है, उसमे धैर्य और समय का जरूरत से ज्यादा अभाव है । मैं अपने ज्ञान को देना चाहता हूँ और उनमे इस ज्ञान को प्राप्त करने की क्षमता ही नहीं है । मैं चाहता हूँ कि अपने जीवन मे निर्जीव पुस्तकों के लेखन की अपेक्षा कुछ सजीव ग्रन्थ तैयार करूँ, कुछ ऐसे युवक तैयार करूँ जो इस ज्ञान को प्राप्त कर सकें, इस ज्ञान मे समृद्ध हो सकें, इस ज्ञान मे पूर्णता प्राप्त कर सकें जिससे कि मेरी मृत्यु के बाद भी यह ज्ञान मेरे साथ ही समाप्त न हो जाये अपितु यह ज्ञान उन युवकों के माध्यम से जीवित रहे, उनके द्वारा यह ज्ञान की धारा आगे बढ़ती रहे और इस प्रकार आगे के वर्षों तक यह ज्ञान हमारे समाज मे जीवित रह सके, जिससे कि हमारा समाज लाभान्वित हो, हमारा देश गर्व से उन्नत बना रह सके, हमारे महायियों की धरोहर सुरक्षित रह सके ।

परन्तु इतने वर्षों मे मैं अन्य सारे कार्यों मे सफल हो सका परन्तु प्रयत्न करने पर भी ऐसे १५-२० युवक प्राप्त नहीं हो सके जो इस प्रकार का ज्ञान प्राप्त करने मे समर्थ हो । यह बात नहीं है कि मेरे पास इस प्रकार की भावना लेकर लोग आते नहीं हो, नित्य ५०-६० लोग इस प्रकार का ज्ञान प्राप्त करने के लिए भागे चले आते हैं परन्तु वे परिश्रम करना नहीं चाहते, वे चाहते हैं कि मैं अपने ज्ञान को उनमे परिवर्तित कर दूँ । वे चाहते हैं एक ही दिन मे वे महान् तन्त्र-शास्त्री, या मन्त्र-शास्त्री बन जायें, वे एक ही दिन मे प्रकाण्ड ज्योतिप और भविष्यवक्ता बनना चाहते

हैं, पर ऐसा कैसे सम्भव है ? जब मेरे उन्हें अपनी कसौटी पर कसता हूँ तो वे सोने की जगह पीतल निकल आते हैं और एक-दो दिन के बाद ही भाग खड़े होते हैं। मुझे दुख है कि मेरे देश के साठ करोड़ व्यक्तियों में से साठ व्यक्ति भी ऐसे नहीं हैं जिनमें इस प्रकार का ज्ञान प्राप्त करने की ललक हो, जिनमें इस प्रकार की विद्या सीखने की प्रवल इच्छा हो, जो परिश्रम से सम्बन्ध जोड़ने वाला हो, जो साधनों के क्षेत्र में कष्ट उठाने में समर्थ हो, जिनका संकल्प दृढ़ हो, जिनको सासा में परिपक्वता हो, जिसके हृदय में कुछ कर गुजरने की क्षमता हो, ऐसे युवक मिल ही नहीं रहे हैं। मेरे देश में ऐसे युवकों का अकाल है और ऐसी स्थिति देख कर कई बार तो मेरी आखें डबडबा आती हैं कि क्या यह ज्ञान जो कुछ मैंने प्राप्त किया है, वह मेरे साथ ही समाप्त हो जाएगा ? इतने अधिक कष्ट उठाकर जो कुछ मैंने प्राप्त किया है, वह सब बेकार चला जाएगा ? इन सारी साधनाओं को पन्नों पर उतारने से क्या हो आएगा जब तक सजीव ग्रन्थ नहीं लिख पाऊगा तब तक यह सब बेकार है, यह सब व्यर्थ है ।

मन्त्र एक ध्वन्यात्मक प्रयोग है, मन्त्र की मूल आत्मा ध्वनि है । उसका आरोह अवरोह है । किस मन्त्र को किस प्रकार से उच्चारित करना है यह मूल वात है कि मन्त्र को पढ़ लेना ही कुछ नहीं है, जब तक उस मन्त्र की ध्वनि, उसका आरोह, अवरोह उसको लय, ज्ञात नहीं होती तब तक उस मन्त्र का प्रभाव हो ही नहीं सकता । इसीलिए हमारे शास्त्रों में वताया गया है कि मन्त्र गुरु मुख से लेना चाहिए । इसका मूल कारण यह है कि गुरु ही उच्चारण कर उस मन्त्र की ध्वनि का आभास दे सकता है । यह आभास कागज नहीं दे सकते, पुस्तकों में लिखे मन्त्र नहीं दे सकते, इसलिए मन्त्र का ज्ञान, मन्त्र की मूल आत्मा, पुस्तकों के माध्यम से पहचानी ही नहीं जा सकती, उसे समझने के लिए तो गुरु की नितान्त आवश्यकता है, गुरु ही उसे इस वात का ज्ञान दे सकता है कि किस मन्त्र का उच्चारण किस प्रकार से करना है ? किस प्रकार से उसे प्रयोग में लाना है ? किस प्रकार उसका उपयोग करना है ? और उस मन्त्र से सम्बन्धित और अन्य क्या-क्या विद्याएं हैं उसका कौलन और उत्कीलन क्या है ? यह सब पुस्तकों नहीं बता सकती । इसका ज्ञान तो तभी हो सकता है जब सामने गुरु बैठा हो और वह शिष्य गुरु चरणों में बैठकर सीख रहा हो । इसके लिए चाहिए धैर्य, सयम और परिश्रम की भावना और और मेरे युवकों में आज उन्हीं गुणों का अभाव है ।

मेरे लिए यह कितनी बड़ी दुख की बात है कि मैं इस प्रकार का ज्ञान देना चाहता हूँ और ज्ञान लेने वाले मिल ही नहीं पाते । मैं ज्यादा-से-ज्यादा इसको बाटना चाहता हूँ और सामने वाले की ज्ञोली देखता हूँ तो वह फटी हुई लती है मुझे ऐसा लग रहा है कि मैं चाह कर भी कुछ नहीं कर पा रहा हूँ, मेरे मन में किस प्रकार की बाग धधक रही होगी, कितनी बेचैनी और छटपटाहट मेरे मानस में रहती होगी इसकी तुम कल्पना कर सकती हो ।

और ऐसे ही क्षणों में जब मेरा मानस बोक्षिल हो जाता है छटपटाहट से दिल

वेचैन हो जाता है, तब मैं प्रकृति की तरफ भागने की कोशिश करता हूँ, कुछ दिन वहा रहने का प्रयत्न करता हूँ परन्तु फिर मेरा कर्तव्य मुझे समाज में ठेल देता है, मेरी आत्मा कहती है कि तुम्हारे इन क्षणों पर तुम्हारा कोई अधिकार नहीं है, तुम्हारे जीवन की जो सासें हैं वे समाज की हैं, प्रत्येक भास का हिमाव समाज को देना है, अपने स्वार्थ के लिये समाज से कटकर एक तरफ ढैं जाना कायरता है, और मैं अपने जीवन के साथ 'कायरता' शब्द को जोड़ना नहीं चाहता, इसीलिये भारी मन से, और नवीन भासा के साथ पुनः समाज में घुस जाता हूँ कि शायद इस बार कोई ऐसा युवक मिल जायगा जो कुछ सीख सकेगा, जिसमें सीखने की इच्छा होगी। कार्य करने की उत्कृष्ट भावना होगी और मैं अपने ज्ञान को देकर अपने आपको हल्का अनुभव करने लग सकूँगा।

मैं भीड़ इकट्ठी करने में विश्वास नहीं रखता, यदि मैं चाहता तो अपनी इन साधनाओं के द्वारा इस प्रकार के चमत्कार दिखा सकता था या दिखा सकता हूँ जोकि अपने आप में अन्यतम हो, और इस प्रकार मैं अपने इर्द-गिर्द शिव्यों की लम्बी-बौद्धी फौज इकट्ठी कर सकता था, परन्तु मैं इस प्रकार की धारणा के सर्वथा विपरीत हूँ, मैं मानव हूँ अपने आपको भगवान कहलाने में विश्वास नहीं रखता। मैंने प्रारम्भ से ही इस प्रकार के विचारों को हेय दृष्टि से देखा है, मेरे विचारों में यह आडम्बर है पाखण्ड है, जनता के साथ छल है, जीवन में शान्तिपूर्ण तरीके से ठोस रूप में जो कुछ भी कार्य किया जाता है, वह ज्यादा श्रेष्ठकर होता है, समाज के लिये ज्यादा उपयोगी होता है, देश के लिये ज्यादा लाभदायक होता है।

मैं अपने जीवन में अत्यन्त ही सरल और सात्त्विक जीवन जीने को उचित समझता हूँ। मेरे जीवन की 'फिलोसोफी' एक अलग ढंग की है। मैं अपने जीवन में अन्तर्मुखी ज्यादा रहा हूँ। मैंने अपने आपको कभी उजागर करने का प्रयत्न नहीं किया, कभी भी अपनी प्रशसा करने की कोशिश नहीं की, मैंने यह कभी नहीं चाहा है कि भीड़ इकट्ठी करूँ, 'गुरु' कहलाऊ या ऊचा सम्मान प्राप्त करूँ।

इसकी अपेक्षा मैं इन सब चीजों से भागता रहा हूँ, मैंने अपने जीवन में एक ही उद्देश्य रखा है कि जीवन में मौन रहकर जितना कार्य हो पाता है उतना वाचाल बन कर नहीं। यदि जीवन में ठोस कार्य करना है या कुछ उपलब्धि प्राप्त करनी है तो वह चुपचाप तरीके से ही हो सकती है। जिसको पाखण्ड प्रिय है, जो अपने आपको सम्मानित कराना चाहता है जो यह चाहता है कि वह दुनिया की नजरों में दिखाई दे, वह इस प्रकार का आचरण कर सकता है, मेरी प्रकृति इससे सर्वथा भिन्न है।

मैंने अपने जीवन में जो कुछ प्राप्त किया है, वह पूरे समुद्र में एक बूद की तरह है, ज्ञान तो एक समुद्र की तरह होता है जिसका कोई ओर-छोर नहीं होता। मैंने इस समुद्र में डुबकी लगाने का प्रयत्न किया है और यह प्रभु की कृपा है कि मृझे मोती प्राप्त हुए हैं जो कि समाज के लिये गीरवयुक्त हैं।

यहा यह स्पष्ट कर दूँ कि आज जो अपने आपको प्रसिद्ध साधु, मन्त्र-शास्त्री, या

तात्रिक कहते हैं उनमें से कई लोग मेरे साथ रहे हैं, और मुझसे गोप्नीय तरीके से बहुत कुछ सीखा है, आज उनके पास लम्बी-चौड़ी भीड़ है, शिष्यों की पूरी जमात है, यह उनका चमत्कार है कि उन्होंने उस बूद का समुद्र बना दिया है, परन्तु मेरे लिये यह सब व्यर्थ है, मैं इस प्रकार की धारणा के सर्वथा विपरीत हूँ, इस प्रकार वह पाखण्ड मेरी दृष्टि में हैरान है ।

इसमें कोई दो राय नहीं कि शरीर, शरीर होता है उसको भी आराम की आवश्यकता होती है, वह भी विश्राम चाहता है और जिस प्रकार से मैं इस शरीर से वीस-वीस घण्टे काम लेता हूँ, उसको देखते हुए यह निश्चित है कि यह शरीर बहुत लम्बे समय तक मेरा साथ नहीं देगा, परन्तु जब तक मैं जीवित हूँ तब तब अकर्मण नहीं रहूँगा, मेरे जीवन का प्रत्येक क्षण समाज को समर्पित है और समर्पित रहेगा ।

मैं शीघ्र ही तुम्हारी तरफ आने का प्रयत्न करूँगा और जल्दी ही मुझे समय मिल पायेगा, जबकि मैं तुमसे और तुम्हारे परिवार से मिल सकूँगा । और कुछ समय प्रकृति के साथ निर्मुक्त रूप से व्यतीत हो सकेगा ।

मेरा शुभाशीर्वाद सदैव आप लोगों के साथ है ।

स्नेह युक्त,  
(नारायणदत्त श्रीमाली)

## पत्र—डा० श्रीमाली के नाम

प्रेपक अरविन्दकुमार  
स्थान ज्ञावुआ (मध्य प्रदेश)  
प्राप्तकर्ता महामहोपाध्याय, डा० नारायणदत्त श्रीमाली

आलोक—एक शिष्य किस प्रकार से अपने जीवन को समर्पित करके साधना के उच्च क्षेत्र पर पहुच सकता है और किस प्रकार से उसके मानस में गुरु के प्रति सम्मान और श्रद्धा रहती है, उसके मानस का चिन्तन किस प्रकार से गुरु के साथ एकाकार रहता है इसका आभास इस पत्र के माध्यम से प्राप्त होता है जो कि साधकों के लिये अनुकरणीय है।

श्री अरविन्द कुमार पण्डितजी के प्रिय शिष्य है और कई वर्षों तक पण्डितजी के समीप रहकर उन्होंने उच्च स्तर की साधनाएँ सिद्ध की हैं।

परम पूज्य गुरुदेव,

साष्टाग दण्डवत्

आज बहुत दिनों के बाद मैं आपको पत्र लिख रहा हू, यद्यपि यह मेरी धृष्टता है कि मैं विना आपकी आज्ञा के, आपको पत्र लिखने की चेष्टा कर रहा हू, परन्तु मेरी विकलता इतनी अधिक बढ़ गई है कि मैं चाहते हुए भी अपने आपको रोक नहीं पा रहा हू। मैंने बहुत प्रयत्न किया कि आपको पत्र न लिखू, आपके व्यस्त समय को लेने का मुझे कोई अधिकार नहीं है, आपके चिन्तन में मैं विच्छ दू ऐसा मैं उचित नहीं समझता, परन्तु पिछले एक महीने से मैं कुछ ऐसी आकुलता अनुभव कर रहा हू कि विना आपसे मिले मैं अपने आपको रोक नहीं पाऊगा, यद्यपि आपने मुझे पत्र लिखने के लिये मना किया था और आज्ञा दी थी कि विना पत्र के भी बातचीत हो सकती है, एक दूसरे को देखा जा सकता है और आपने कृपा करके जो ज्ञान, जो साधना मुझे दी थी, वह मेरे जीवन की अतुलनीय सम्पत्ति है, आपने मुक्त हस्त से मुझे सब कुछ देने का प्रयत्न किया, परन्तु मैं ही अभागा हू कि उस समुद्र में से इतने अधिक भोती बटोर नहीं सका जिससे कि मेरी झोली पूरी तरह से भर जाय, इतनी अधिक आतुरता, इतनी अधिक वैचैनी मैंने अपने जीवन में कभी अनुभव नहीं की थी, परन्तु

आपके जाने के बाद मैं कोशिश करते पर भा अपने आपको नियत्रित नहीं कर पा रहा हूँ।

आपने मुझे साधना काल में यह बताया था कि जब भी मन चल हो जाय तब प्रभु के चरणों में बैठ जाना चाहिए और उस मन्दिर में प्रभु के सामने अपनी सारी इच्छाएं रख देनी चाहिए, पर मैं किसे मन्दिर मानूँ किसको ईश्वर मानूँ? किसके सामने अपनी व्यथा कहूँ? मेरे लिये तो मन्दिर, ईश्वर या इष्ट जो कुछ भी है, वह आप ही है और आपके अलावा मेरे लिये कुछ भी नहीं है।

आपका पूरा शरीर मेरे लिये मन्दिर के समान है, आपके चरण उस मन्दिर के सुदृढ़ स्तम्भ हैं। आपका शरीर इस मन्दिर का गर्भगृह है, और आपका उन्नत ललाट इस पवित्र मन्दिर का शिखर, जो कि दूर से ही धृव्य और दिव्यतम दिखाई देता है। इस मन्दिर में जो मूर्ति बैठी हुई है, सत्य और प्रेम की वह साक्षात् मूर्ति ही मेरा इष्ट है। उसके सामने मैं बच्चों की तरह रोया हूँ, गिरगिडाया हूँ और मुझे इससे सान्त्वना मिली है, प्रेम की अजल धारा प्राप्त हुई है, जब मैंने इस प्रकार के मन्दिर में प्रवेश किया है, इस प्रकार के पवित्र मन्दिर की छाया में बैठा हूँ, इस प्रकार की सजीव मूर्ति की कहणा मुझे प्राप्त हुई है तो फिर मैं और किस मन्दिर में जाऊँ? किस मूर्ति के सामने अपनी व्यथा कहूँ?

मैं अपने जीवन में बहुत भटका था, सैकड़ों मन्दिरों से सिर टकराया था, हजारों मूर्तियों के सामने अपनी व्यथा कही थी, परन्तु किसी ने भी मेरे आसू नहीं पोछे, किसी ने भी मेरे मन की तड़फ महसूस नहीं की, पर जब मैं आपके चरणों में आया, इस साक्षात् मन्दिर की छाया में बैठा तो ऐसा लगा जैसे मुझे वह सब कुछ प्राप्त हो गया हो जिसकी तलाश मुझे वर्षों से थी, और जब इस मन्दिर में निवास करते वाली साक्षात् मूर्ति के दर्शन किये और उसकी कहणा से आप्लावित हुआ तो मैं धन्य हो गया, मेरा सारा जीवन उन्मुक्त हो गया, जीवन में जो बैचैनी थी वह एकदारी ही समाप्त हो गई।

इस भारत में लाखों मन्दिर हैं, जहा पर लोग जाते हैं, हजारों तीर्थ स्थल हैं, जहा पर गृहस्थ जाकर अपनी मानसिक व्यथा शान्त करते हैं, परन्तु उनमें कितने ऐसे हैं जो सही रूप में प्रभु के दर्शन कर पाते हैं, आपका शरीर एक चलता फिरता अद्भुत पावन मन्दिर है जिसमें कहणा की, दया की, और ममता की साक्षात् मूर्ति विद्यमान है, इस प्रकार के मन्दिर और इस प्रकार की दिव्य मूर्ति को छोड़कर मैं और कहा जाऊँ?

मेरा पूरा जीवन तब तक व्यर्थ था जब तक कि इस मन्दिर के पास नहीं आया था। मेरा सारा शिक्षण, मेरा सारा ज्ञान एक प्रकार से व्यर्थ ही रहा था, आज मैं यह अनुभव कर रहा हूँ कि मेरे जीवन के कई वर्ष व्यर्थ में बरवाद हो गये। स्कूल की शिक्षा और कालेज का अध्ययन मानव के जीवन निर्माण में किसी प्रकार से सहायक नहीं होता। एक प्रकार से यह शिक्षण उसको थोड़ी डिग्गिया भले ही दे दे

परन्तु उसकी आत्मा का विकास नहीं कर सकता, आत्मा का विकास तभी हो सकता है जबकि उसे गुरु की प्राप्ति हो जाय। इस सारे में जितने भी व्यक्ति हैं, उनका अस्तित्व महज एक बालक के समान है, फिर वे भले ही सौ वर्ष के बूढ़े हो या पच्चीस वर्ष के बालक, क्योंकि जीवन की पूर्णता तभी समव है जबकि उम्रको यह ज्ञान हो जाय कि उसका अस्तित्व क्या है दुनिया में हजारों पण्डित हैं, विद्वान् हैं, अपने क्षेत्र में अग्रगण्य हैं, और उनकी विश्व में छायाति भी है परन्तु फिर भी वे अपने आपको ही नहीं पहचानते। जब तक उनको आत्मस्वरूप का ज्ञान नहीं होता तब तक वे व्यर्थ में ही इधर-रधर भटकते रहते हैं, अपना अवरूप आत्म-ज्ञान या आत्म-ज्योति का दर्शन कराने वाला केवल गुरु ही होता है, सद्गुरु ही व्यक्ति को उसकी आत्मा में सुक्षात्कार कराने में समर्थ होता है।

जब तक मुझे आपका सानिध्य प्राप्त नहीं हुआ था तब तक मैं अपने आपको विद्वान् और योग्य समझता था, जब तक मैंने आपको उगली नहीं पकड़ी थी तब तक पूरा भारत मुझे भौतिक शास्त्र का विद्वान् मानता था, जब तक मैं आपके चरणों के पास नहीं बैठा था तब तक मुझे अपने आप पर बहुत अधिक घमण्ड था, जरूरत से ज्यादा अहं था और मैं अपने आपको बहुत कुछ समझने लग गया था, परन्तु जिस दिन आपका वरदहस्त मेरे सिर पर पड़ा उस दिन एक नई ज्योति के दर्शन हुए, एक नया प्रकाश मेरी आखों के सामने आया, मैंने पहली बार अनुभव किया कि इतना शीतल स्पर्श आज तक मेरे जीवन में अनुभव नहीं हुआ। मुझे उस दिन जिस स्वर्गिक सुख की अनुभूति हुई थी वह अपने आप में वर्णनातीत है। बूद तभी तक उछलती है जब तक वह बूद होती है पर उसको अपने वास्तविक रूप का ज्ञान तभी होता है जब वह समुद्र में मिलती है, उस समुद्र के सामने उसका महत्व क्या है, ठीक ऐसा ही मैंने आपके सामने आने पर अपने आपको अनुभव किया, मैंने दूर से हिमालय की ध्वलता का अवगाहन किया था, और उससे प्रवाहित गगा में स्नान किया था, परन्तु इन दोनों का सयुवत आभास उसी दिन हुआ था जिस दिन आपका सुखद स्पर्श मुझे प्राप्त हुआ था। आपकी आखों की करुणा, दया और प्रेम की त्रिवेणी में जिस दिन मैं डूवा था उसी दिन मैंने अनुभव कर लिया था कि यही वास्तविक सुख है, मेरे जीवन का यही वह विन्दु है जिसे प्राप्त करने के लिये मैं भटक रहा था।

आपका प्रथम दर्शन ही मेरे लिए एक दिव्य दर्शन था। और पहली बार ही आपको देखकर मैं अपने आपमें आपके प्रति सम्मोहित-सा अनुभव करने लगा था। वास्तव में ही सन्त के दर्शन ही जीवन की पूर्णता का परिचायक होता है। यह मानव का भाग्य है कि उसे जीवन में सच्चे सत के दर्शन हो जाय। मुझे अपने पिता के द्वारा कही हुई एक घटना का स्मरण हो रहा है, उन्होंने कहा था कि जीवन की पूर्णता तभी होती है जबकि सच्चे सन्त के दर्शन हो जाए, फिर भले ही वह सन्त भभूत रमाया हुआ हो या दिगम्बर हो, लगोटी पहने हुए हो या पूर्ण गृहस्थ हो, इससे उस सन्त की दिव्यता पर कोई असर नहीं पड़ता, सन्त के दर्शन ही मानव के पापों का क्षय होता

है। इस सबध मे उन्होंने मुझे एक कहानी सुनाई थी जो कि मुझे आज भी स्मरण है।

एक बार देवर्षि नारद ने भगवान विष्णु से प्रश्न किया कि सन्त के दर्शन करने से क्या लाभ है? भगवान विष्णु नारद के प्रश्न को सुनकर विहसे और कहा कि अमुक स्थान पर एक मिट्टी के कण को लुढ़काता हुआ कीट जा रहा है, यह प्रश्न उसने पूछो।

महर्षि नारद उस कीट के पास गये और उससे प्रश्न किया। प्रश्न सुनते ही कीट ने देवर्षि नारद को एक क्षण के लिए देखा और अपने प्राण त्याग दिये।

नारद लौटकर विष्णु के पास पहुचे और जो घटना घटी थी वह वता दी, भगवान विष्णु ने एक वर्ष बाद आने के लिए कहा।

एक वर्ष बाद नारद ने जब पुन यही प्रश्न दोहराया तो विष्णु भगवान ने कहा कि अमुक जगल मे अमुक सरोवर के किनारे वैठे हुए राजहस से तुम जाकर प्रश्न करो, इसका उत्तर वह देगा।

नारद तुरन्त उस स्थान पर पहुचे और उस राजहस से यही प्रश्न किया। राजहस ने नारद को व्यानपूर्वक देखा और अपने पर फैला कर वही समाप्त हो गया।

नारद को अत्यन्त दुख हुआ और उन्होंने विष्णु से जाकर सारी बात कह दी। भगवान विष्णु ने एक वर्ष बाद फिर आने के लिए कहा।

एक वर्ष बाद जब नारद ने पुन यही प्रश्न भगवान विष्णु के पास रखा तो भगवान विष्णु ने उन्हे एक नगर के राजगृह मे जन्मे नवजात शिष्य से वह प्रश्न पूछने के लिए कहा।

नारदजी तुरन्त उस राजगृह मे पहुचे, वहा उनका अत्यन्त आदर सत्कार हुआ, उन्होंने एकान्त मे उस शिष्य से बात करने की इच्छा प्रकट की। लोगो को आश्चर्य हुआ कि यह नवजात शिष्य देवर्षि नारद से किस प्रकार बातचीत कर सकेगा, पर नारद का हठ देखकर सभी अलग हो गये।

जब नारद ने प्रश्न किया कि सन्त के दर्शन से क्या लाभ है तो शिष्य ने उत्तर दिया, महर्षि नारद पहली बार मैं कीड़ा था आपके दर्शन से मेरी मृत्यु हुई और मैं उच्च योनि मे राजहस बना। दूसरी बार जब आप जैसे सन्त के दर्शन हुए तब मैं उस योनि से छुटकारा पाकर इस राजगृह मे जन्म लिया है और आज आपके पुन दर्शन प्राप्त हुए हैं अत सुखपूर्वक राज्य भोगने के बाद मेरी मुक्ति हो सकेगी।

सन्त अपने आप मे चलते फिरते देवालय हैं, विचरण करते हुए पवित्र तीर्थ स्थल हैं, और आप मे मैने एक सच्चे सत के दर्शन किये हैं, आपके दर्शन करने के बाद मेरे जीवन मे कोई भी इच्छा, कोई भी आकाशा बाकी नहीं रही है।

यद्यपि यह सब कुछ लिखने का मुझे कोई अधिकार नहीं है, यह लिखकर एक प्रकार से मैं पागलपन ही कर रहा हू, परन्तु मेरे मन मे आपके जाने के बाद इतनी अधिक छटपटाहट बढ़ गई है कि मैं विना कहे रह नहीं सकूगा। मैं वहुत कुछ कहना चाहता हू परन्तु जब भी आप मेरे सामने होते हैं मेरी बाणी रुद्ध जाती है, गला भर आता है और आखो मे हर्ष और आनन्द के आसू छा जाते हैं, इस प्रकार, मैं आपको

मूर्ति के भली प्रकार से दर्शन करना चाहते हुए भी दर्शन नहीं कर पाता हूँ, आपको बहुत कुछ कहना चाहते हुए भी कुछ नहीं कह पाता हूँ, अपने मन की व्यथा, अपने मन की तड़फ़, अपने मन की देचेनी आपके सामने खोल कर रखना चाहता हूँ पर रख नहीं पाता । पता नहीं आपके सामने आते ही मेरी क्या अवस्था हो जाती है कि मैं कुछ भी नहीं कह पाता, कुछ भी नहीं कर पाता, जो भी कुछ यद देता है वह सब विस्मरण हो जाता है और आखो के सामने करुणा और प्रेम की साक्षात् मूर्ति साकार हो जाती है ।

मैंने आपको सागर की तरह अनुभव किया है, मैंने यह देखा कि इस सागर में जो जितनी ही ज्यादा गहरी हुवकी लगता है वह उतने ही ज्यादा मूल्यवान रूप प्राप्त करता है । मैं अपनी व्यक्तिगत अनुशूलिति के माध्यम से कहने में समर्थ हूँ कि आपके द्वारा साधना की जो गगा प्रवाहित होती है वह अपने आप में निर्मल है, उसमें स्नान कर चित्त हल्का हो जाता है, मन में कई गुना आनन्द बढ़ जाता है और पूरा शरीर एक नये ही भावलोक में विचरण करने लग जाता है ।

आपसे अलग हुए लगभग एक वर्ष बीतने को आ रहा है और इस एक वर्ष में एक क्षण के लिए भी मैं आपको भुला नहीं पाया हूँ । सम्भवत मैं अपने जीवन में आपको भुला भी नहीं सकूँगा, आपने मुझे दिव्य विन्दु के दर्शन करने को कहा है, परन्तु जब भी मैं दिव्य विन्दु पर ध्यान अवस्थित करता हूँ तब आपका सुन्दर स्वरूप मेरे सामने साकार हो जाता है, और वह विन्दु अपने आप तिरोहित हो जाता है, उस समय जितना आनन्द प्राप्त होता है, मैं उसका वर्णन नहीं कर सकता, मेरी लेखनी में या मेरी जीभ में इतनी शक्ति ही नहीं है कि मैं उस आनन्द का वर्णन कर सकूँ ।

यद्यपि आपने मुझे जो 'चाक्षुष-साधना' सिखाई थी, उसके प्रयोग से मैं बराबर आपके दर्शन करता रहा हूँ, और अपने जीवन के प्रत्येक क्षण को सरस करता रहा हूँ, परन्तु इससे तृप्ति नहीं होती । ऐसा लगता है जैसे बहुत कुछ होते हुए भी मैं हर बार चित्त रह जाता हूँ, बहुत कुछ प्राप्त करना चाहते हुए भी प्राप्त नहीं कर पाता, आपके शरीर दर्शन का जो आनन्द मैंने प्राप्त किया है, वह अपने आप में अन्य-तम है । चाक्षुष-साधना से तो केवल मेरी आत्मा ही आपको देख पाती है, परन्तु मेरे नेत्र अतृप्त हैं, उनकी प्यास तब तक नहीं बुझती जब तक कि ये नेत्र आपके दर्शन न कर लें । दूर से हिमालय के दर्शन उतना आनन्द कैसे दे सकते हैं जितना आनन्द उस हिमालय से मिलने पर या हिमालय की छाया में बैठने से प्राप्त होता है, जब-जब भी मैंने इस सबध में साधना के द्वारा आपसे आज्ञा चाही है, तब-तब आपने निष्ठुरता से भना कर दिया है, पता नहीं मुझ से ऐसा क्या अपराध हो गया है, जिससे कि आप निकट आने की अनुमति नहीं देते । हो सकता है मुझ से अपराध हुआ हो, परन्तु मैं तो बालक हूँ और बालक का धर्म ही गलतिया करना है । आपको मैंने माता और पिता दोनों ही रूपों में देखा है, दोनों का सयुक्त स्वरूप ही गुण होता है और इसी रूप में मैंने आपके दर्शन किये हैं, फिर मुझे आपके दर्शन करने से चित्त क्यों रखा जा रहा

है ? 'कुपुयो जायेत ववचिदपि कुमाता न भवति' पुन्र कुपुय हो सकता है परन्तु मा कुमाता नहीं होती, मैं अपराध कर सकता हूँ परन्तु आप क्षमाशील हैं, करुणा की साक्षात् मूर्ति हैं, आप मेरे अपराध पर ध्यान दें और मुझे आज्ञा दें जिससे कि मैं आपके चरणों में आ सकूँ, आपके सानिध्य में कुछ क्षण बैठ सकूँ और अपने जीवन जो धन्य कर सकूँ, इन अतृप्त आखों की प्यास बुझा सकूँ, और जीवन की अभिलाषा को, इच्छा को पूर्णता दे सकूँ ।

इस जीवन में तो शायद मेरे द्वारा कोई पुण्य कार्य नहीं हुआ होगा, परन्तु इसमें कोई सन्देह नहीं कि पूर्व जन्म में मैंने अवश्य ही पुण्य कार्य किये होंगे जिससे कि मैं आपका सानिध्य पा सका, आपके चरणों में बैठ सका, और आपकी छपा, आपका स्नेह, आपका ममत्व पा सका । आपके पास रहकर छ वर्ष क्रिस्ट्रक्टार से बीत गये कुछ मालुम ही नहीं पड़ा । ऐसा लगा जैसे हवा में कपूर विलीन हो गया हो और उसकी गंध ही वातावरण में रह गई हो, परन्तु आपसे अलग होकर यह एक वर्ष निकालना इतना अदिक कठिन हो गया है कि कुछ कह नहीं सकता । मेरे लिये प्रत्येक क्षण भारी हो रहा है, यह एक वर्ष इस प्रकार से बीता है जैसे मैंने हजारों वर्ष बिता दिये हो । अब तो ऐसी स्थिति वन गई है कि मैं चाहते हुए भी अपने आपको रोक नहीं पा रहा हूँ, यद्यपि आपके पास आने में आपकी आज्ञा बाधक वन रही है, परन्तु मैं बालक हूँ और बालहठ से कहीं मेरे द्वारा आपकी आज्ञा का उल्लंघन न हो जाय, यदि कुछ समय तक आपके दर्शन नहीं कर सका, तो शायद ये प्राण इस पिंजरे में नहीं रह पायेंगे । कुछ ऐसा ही आभास होने लगा है ।

पिछली बार जब साधना में आपसे वातचीत करने का सुखद क्षण प्राप्त हुआ था तब आपने मुझे विवाह करने की आज्ञा दी थी, पर प्रभु मेरी इच्छा इस प्रकार की नहीं रह गई है, मैं अब अपने जीवन को पुनर उस कीचड़ में नहीं धकेलना चाहता, जिस कीचड़ से मैं बाहर निकल आया हूँ । मेरी तो एक ही इच्छा है कि मैं आपके चरणों में रहूँ, आपका सुखद स्पर्श अनुभव करूँ, आपकी आज्ञा का पालन करूँ और इस प्रकार मेरा पूरा जीवन आपके चरणों में रहते हुए व्यतीत हो जाय ।

मेरे लिए माता-पिता, भाई वन्धु, स्वजन, कुटुम्ब, परिवार यदि उठ हैं तो वह सब कुछ आप ही हैं । मेरे लिए न कोई मन्दिर है, न कोई इष्ट देवता । मेरे लिए कुछ है तो वह केवल आपका सामीप्य है, आपकी छपा है ।

आज विश्व, कलह, युद्ध, रोग, और अधिकार से ग्रस्त है, चारों तरफ धोखा, छल, कपट का साम्राज्य छाया हुआ है । पीडित मानवता पुकार रही है, आवश्यकता है एक ऐसे स्नेह की, एक ऐसे करुणा के प्रवाह की, जिससे कि वह पीडित मानवता सान्त्वना पा सके, उसके हृदय में आनन्द और उमग आ सके, और यह सब कुछ आपके द्वारा ही सम्भव है, आपकी करुणा के माध्यम से ऐसा हो सकेगा, ऐसा मैं अनुभव करता हूँ । इस प्रकार के कार्य में मैं भागीदार वन सकूँ, आपके सन्देश को ज्यादा से ज्यादा

लोगों तक पहुंचा सकू, उनकी पीड़ा हर सकू और उन्हें सच्चा आत्मीय सुख दे सकू, यही मेरी इच्छा है, यही मेरा लक्ष्य है और इस लक्ष्य की पूर्ति तभी सम्भव है जबकि आपका वरदहस्त मेरे सिर पर हो, आपकी आज्ञा मेरे लिए पाथेय हो।

आपने मुझे बहुत कुछ दिया है, मैंने आपसे बहुत कुछ पाया है फिर भी मैं अपने आप से अतृप्त हूँ। ऐसा लग रहा है जैसे अभी तक मेरा पूरी तरह से निर्माण नहीं हो पाया है, अभी तक मेरी आखो में खालीपन है, और यह खालीपन यह, शून्यता आपके द्वारा ही भरी जा सकती है, आपने साधना के माध्यम से जो कुछ मुझे दिया है, उससे उक्खण इस जीवन में तो क्या अगले सात जीवन में भी नहीं हो सकता। यदि मेरे शरीर के चमड़े की चर्म पादुकाएं आपके पैरों के लिए बनें तब भी मेरा उस कृपा से उक्खण होना सम्भव नहीं है।

आपके पास रहकर मैंने जितना सुख और सन्तोष प्राप्त किया है उतना जीवन में कभी नहीं कर पाया था। मुझे ऊचे-से-ऊचा सम्मान मिला था, विदेशों में मेरे कार्य की सराहना हुई थी, तब भी मुझे इतना आनन्द प्राप्त नहीं हुआ था, जितना आनन्द आपके चरणों में बैठकर प्राप्त हुआ था। आपसे जो कुछ पाया है वह मेरे लिए अन्यतम है, आपके घर में जो शान्ति प्राप्त हुई है, उसका वर्णन करना सम्भव नहीं है।

पूज्य माताजी करुणा की साक्षात् सूर्ति हैं, मैं उनसे प्रार्थना करूँगा कि वे आपको प्रेरित करें, जिससे कि आप मुझे अपने चरणों में बुला सकें, मैं अतृप्त हूँ और आपके चरणों के पास आने के लिए उतावला हूँ, आपके बिना मेरी कोई गति नहीं है, आप हीं मेरे सर्वस्व हैं, सब कुछ हैं।

एक बार पुन आपके चरणों में नमन करता हुआ आपके सान्तिव्य में आने की इच्छा प्रकट करता हूँ और आज्ञा चाहता हूँ जिससे कि मैं जल्दी-से-जल्दी आपके चरणों में आ सकू।

आपका ही,  
(अरविन्द कुमार)

प्रेषक	श्री सच्चिदानन्द परमहस
स्थान	अज्ञात (सभवत वद्रीनाथ के आस पास)
प्राप्त कर्ता	डा० नारायणदत्त श्रीमाली
आलोक	डा० श्रीमाली जी ने परमपूज्य गुरुदेव के पास लिखे गए एक पत्र में साधना सम्बन्धी अपनी आन्तरिक अनुभूतियों का विवरण देते हुए उनसे मार्ग निर्देश की याचना की थी, पूज्य श्री स्वामीजी ने यह पत्र उसी के उत्तर में लिखा था।
विषय	साधना ज्ञान।
	ओम तत् सत्
	आशीर्वादिक श्री सच्चिदानन्द परमहस
	चिरायु।

परम शुभा शिपा राशय सन्तु।

वावा। तुम लोगों के मगल के लिए परम मगलमय के समीप प्रार्थना करता हूँ, मगलमय तुम लोगों का मगल करे, यही मेरा इष्ट है। वत्स। तुम्हारा पत्र पाकर सब अवगत हुआ।

वत्स। जो कुछ तुम बाहर देखने का प्रयत्न कर रहे हो, वह अपने अन्तर में देखो, क्योंकि अन्तर का प्रकाश ही बाह्यकाश को प्रकाशित और ज्योतिस्त्व करता है। साधारणत मानव अपनी आन्तरिक चिन्ता को बाह्यकाश में देखता है और तभी वह चिन्ता घनीभूत होकर उसके मस्तिष्क को तथा चित्त को विश्रान्त कर देती है, यदि तुम सूक्ष्मता से देखोगे तो यह सारी प्रकृति नित्य लीलालीन दिखाई देगी, अन्तर के प्रकाश के द्वारा ही तुम बाह्य प्रकृति के आध्यात्मिक मूल को देख सकते हो, मन में प्रकाश का और पवित्रता का सूक्ष्म विन्दु भी होता है तो यह सूक्ष्म विन्दु जगत-शक्ति के प्रकाश से मिलकर मन को शुद्ध और चित्त को परिष्कृत कर देता है। सर्वव्यापिनी शक्ति को यदि हम आध्यात्मिक में स्थापित करें, तभी हम अपने अन्तर के प्रकाश को बाह्य प्रकाश में मिलाने में समर्थ हो सकते हैं, महाशक्ति का ज्ञान अन्तर और बाह्य को एकाकार करने में समर्थ होता है। अन्तर की पवित्रता से ही महामाया के विशुद्ध भाव का चिन्तन हो सकता है तत् हेतु जिस ज्ञान का उदय होता है वही अखण्ड प्रकाश तथा उज्ज्वल तेज कहा जाता है, इसी उज्ज्वल तेज के प्रभाव से मन का पाप—ताप, ज्वाला, यत्रणा, वेदना, आशक्ति आदि तिरोहित हो सकती है और इसके बाद ही चित्त शुद्ध और परिष्कृत हो पाता है। ऐसा होने पर ही चित्त में अगूठे के सदृश जो जगत—शक्ति का प्रकाश उद्दित होता है वही प्रकाश हमारे जीवन को ऊचा उठाने में समर्थ होता है। फलस्वरूप मानव बाह्य व्यापार को भूल जाता है और इस स्थूल जगत से अपने आपको हटाकर सूक्ष्म जगत में प्रवेश करने का अविकारी बन जाता है।

विज्ञान के द्वारा स्थूल की उपासना ही हो पाती है, जब तक सूक्ष्म का चिन्तन

नहीं होगा तब तक हमारा सारा व्यापार निष्क्रिय है, क्योंकि विज्ञान के द्वारा जो उपासना होती हैं वह स्थूल ही होती है, सूक्ष्म की उपासना चित्त-वृत्तियों का निरोध करने पर ही सम्भव है, उसके लिए कल्युचित और सन्तप्त चित्त को परे हटाकर निर्मल चित्त की अवधारणा करनी चाहिए, महाशून्य में जब महाशक्ति का आलोक सचरित होता है उस समय निर्मल चित्त वाला ही उस प्रकाश और आलोक के रहस्य को समझ पाता है क्योंकि इस प्रकार के रहस्य को समझने की जो भाषा है वह अलिखित है।

विश्व में जो शक्तिभूत है उसके मूल में यही शक्ति कार्य करती है जो कि आदि, मध्य और अन्तिम है। विषयों में इसी का प्रकाश चुतिमान होता है उसकी शक्ति सङ्कुचित होने पर भी यह विश्व सकीर्ण होता है और धीरे-धीरे आसुरी शक्तियों का उदय होता है, जीवन में पूर्णता प्राप्त करने के लिए इन आसुरी वृत्तियों का त्याग बावश्यक है।

यह परम्परामयी सत्ता पूरे विश्व को नाना प्रकार से खेल खिलाती है, यही सुख-दुःख, हानि-लाभ, आशा-निराशा, पिता-पुत्र, भाई-बहिन, सेव्य-सेवक आदि को खिलाकर एक ऐसा खेल खेल रही है जिसको समझना सुगम नहीं। भ्रमवश हम इस खेल से समझ नहीं पाते और इसकी आलोचना करके अपने आपको बुद्धिमान बनुभव करते हैं, परन्तु इस प्रकार की आलोचना बुद्धिहीनता का प्रमाण है क्योंकि जीव, वात्सा, स्वरूप सूक्ष्म, स्थूल वादि सभी इसी महाशक्ति भा की नित्य लीला है, जब तक इस लीला को समझने का प्रयास नहीं करोगे तब तक तुम्हारा चित्त विघ्न और उद्विग्न रहेगा।

अगीभूत पुत्र और शिष्य में कोई अन्तर नहीं होता। जो वात्सल्य गृहस्थ में मा के द्वारा अगीभूत पुत्र को प्राप्त होता है, सन्यास में वही वात्सल्य गुरु द्वारा शिष्य में प्रवाहित होता है। तुम्हारा निर्माण एक विशेष उद्देश्य को लेकर मा जगज्जननी ने योग शक्ति के भाव्यम से किया था। मैं तो केवल उस आद्य शक्ति के प्रकाश का सूक्ष्म कण हूँ। जो कुछ होता है, जो कुछ हुआ है, वह सब उस आद्य शक्ति के भ्रू-सकेत से ही हुआ है, तुम्हारा जन्म, सामान्य मानव के रूप में जन्म लेकर समाप्त होने के लिए नहीं हुआ है, अपितु तुम्हारी रचना एक विशेष उद्देश्य को लेकर है, तुम्हारा मेरे पास आना और मेरा तुम्हे अगीभूत करना भी उस नित्य लीलाविहारिणी की एक लीला है। सूक्ष्म रूप में तुम भी उसी प्रकाश के एक कण हो जिस प्रकाश के कण से मेरा अविभावि है, परन्तु तुम्हे अपने पास खीचना और एक विशेष प्रकाश से तुम्हारा निर्माण करना एक विशेष उद्देश्य से प्रेरित है। जिस प्रकार कुम्भकार मिट्टी के लोटे को चोट देकर एक विशेष रूप में निर्मित करता है उस कुम्भकार का एक निश्चित उद्देश्य होता है और इस उद्देश्य से प्रेरित होकर ही वह मिट्टी को हाथ लगाता है एवं तीव्राधात से उसका स्वरूप निर्मित करता है।

तुम्हारा मेरे पास आना और मेरे द्वारा आघात देदेकर एक विशेष रूप में

तुम्हारा निर्माण करना एक निश्चित उद्देश्य को लेकर था। यह उद्देश्य वह शक्ति ही जाननी है मुझे तो केवल उसकी आज्ञा का पालन करना है, इसीलिए तुम्हारे प्रति एक विशेष उत्तरदायित्व अपने चित्त में अनुभव करता हूँ और तब तक यह बाबा शान्त नहीं होगा जब तक तुम अपने लक्ष्य पर पहुँच नहीं जाओगे।

मेरे मन में मोह नहीं है, अपितु बातस्त्व भाव अवश्य है क्योंकि मैंने तुम्हारा पालन उसी रूप में किया है जिस प्रकार से एक मा अपने नवजात बत्स का करती है। मेरे सम्पर्क में रहने पर तुम्हे जरूरत से ज्यादा यातना और कष्ट सहन करना पड़ा है परन्तु यह सब कुछ इसलिए आवश्यक था जिससे कि मेरे निर्माण में किसी प्रकार की कोई न्यूनता न रहे। तुम्हारे पत्र से जो भावना स्फुटित होती है वह मोह है, क्योंकि सूक्ष्मता में यदि तुम प्रवेश करोगे तो देखोगे कि वहाँ न पली है, न पुत्र है, न मा है, न वाप है, न गुरु है, न शिष्य है, सभी एक ही अश के अलग-अलग कण हैं, जिनका अपने आप में पृथक अस्तित्व होते हुए भी पृथक अस्तित्व नहीं है। वे अलग-अलग होते हुए भी एक हैं क्योंकि इन सबका निर्माण उसी मा आद्याशक्ति के ज्योतिर्विन्दु से हुआ है, इसलिए मेरे समीप आने और मेरे साथ रहने की जो इच्छा तुमने व्यक्त की है वह तुम्हारा मोह ही तो है, यह मोह उस शक्ति के प्रकाश तथा देह विकास के क्रिया संयोग से जन्म लेता है, जब तक इस प्रकार के शशु—द्वेष-दम्भ, मोह—शरीर स्थित मानवीय भावों के आकर्षण—विकर्षण से सघर्षभूत रहेगे तब तक इनसे पिण्ड छुड़ाना सम्भव नहीं होगा। इसीलिए यह प्रकाश बिन्दु जगत जननी मा की गोद में रहते हुए भी शशुओं से आकृष्ट रहता है और इन शशुओं के कुसगत से चित्त वेदना-भागी होता है।

परन्तु पुत्र ! इस प्रकार वेदना-भागी होने से जीवन के क्षणों का मूल्य नहीं समझ सकते। हमारे जीवन का प्रत्येक क्षण उस नित्य लीला विहारिणी का प्रकाश है, अत इन क्षणों को शशुओं से अवद्ध करना अपने आपको पतन के कगार पर स्थित करना है, तुम्हे आशाहीन होने की आवश्यकता नहीं, सब कुछ होते हुए भी बाबा देह रूप में है, और इस देह रूप में होने पर कभी-कभी इन शशुओं का 'आधात सहन करना ही पड़ता है, इसीलिए तुम्हारे प्रति मोह की व्याप्ति हो जाती है, यद्यपि मैं अपने अन्तर से तुम्हे अलग नहीं देखता हूँ क्योंकि तुम शिष्य रूप में मेरे ही अगीभूत हो और तुम्हारे जीवन का प्रत्येक कार्य मेरे ही उद्देश्य की पूर्ति में सहायक है।

नित्य लीलाविहारिणी के कार्य में व्याधात डालने का पापभोगी में स्वयं अपने आपको समझता हूँ, तुम्हारे जीवन का निर्माण गृहस्थ रूप में होते हुए भी सन्यास रूप में था। पूर्वजन्म में तुम मुझसे पूर्णतः अगीकृत रहे हो, मेरे ही अग से तुम्हारे शिष्यत्व का निर्माण हुआ था और आद्य रूप से प्रारम्भ कर अन्तिम क्षण तक प्रवाहमान तुम्हारा वैराग्य जीवन प्रवाहित रहा था। परन्तु मैं इस बात को समझता हूँ कि सन्यास-जीवन—एकागी जीवन है, आज आवश्यकता समाज को चैतन्य करने की है, आद्य शक्ति मा की क्रियाओं तथा भौतिक जगत की स्थूल व्यापारों में सघर्षण

की वजह से पाप, क्रोध, छल, धोखा, असन्तोष, विग्रह आदि आसुरी प्रवृत्तिया व्याप्त होने लगी हैं और धीरे-धीरे इस भू पर आसुरी वृत्तियों का विकास बढ़ता जा रहा है, ऐसे समय में एकान्त-भोगी होने से जीवन-निर्माण का पूर्ण उद्देश्य अपूर्ण रह जायेगा। इस समय आवश्यकता इस वात की है कि इस स्थूल व्यापार में सलग्न मानव को सही रास्ता दिखाने के लिए प्रयत्न किया जाए और उस आद्यप्रकाश को पुनर्स्थापित किया जाय जिससे कि भूतल पर दया, करुणा, प्रेम, स्नेह की अमृत-वर्षा हो सके।

इसके लिए उन कर्णों के समान ही अपने कण को बनाना आवश्यक है, जब तक उनके सदृश बनकर कार्य नहीं किया जायगा, उनके दीच रहकर अपनी भाव-नाभों को व्यक्त नहीं किया जायगा तब तक इस कार्य की पूर्णता सभव नहीं है, तुम्हारे जीवन के तन्तु भोगमय न होकर योगमय ही रहे हैं परन्तु फिर भी मुझे उस जगज्जननी मा के शकेत से तुम्हे पुनर्गृहस्थ में प्रवेश देने की कठोर आज्ञा देनी पड़ी है, यद्यपि वत्स ! इससे तुम्हारे चित्त पर कठोर आघात लगा था फिर भी ऐसा करना प्रकृति के मूल धर्मों के अनुरूप है इसीलिए तुम्हें ऐसा करने के लिए वाद्य होना पड़ा है।

इस समय पृथ्वी पर जिस प्रकार की भावनायें प्रवाहित हैं, वे आसुरी वृत्तियों की दोतक हैं, ये वृत्तिया स्थूलता में गम्य हैं, सूक्ष्मता की तरफ इन वृत्तियों का निरोध हो गया है, जब तक इन आसुरी वृत्तियों की पराजय नहीं होती तब तक दैविक वृत्तियों का अभ्युदय सभव नहीं है। इन दैविक वृत्तियों के अभ्युदय के लिए ही तुम्हे पुनर्गृहस्थ में भेजने की इच्छा मा की रही है, इसीलिए मैंने यहाँ से रवाना होते समय तुम्हें कहा था कि तुम्हे इस विष्व में कमलवत् रहना है, आसुरी वृत्तियों का प्रहार होने पर भी तुम्हे क्षमाशील बने रहना है, जिस समय चारों ओर पाप-वृत्तियों का अन्धकार व्याप्त हो, उस समय एक छोटे से दीपक को स्वयमेव प्रकाशित बनाये रखने में अत्यधिक जीवट की आवश्यकता अनुभव होती है, इसीलिए मेरे सैकड़ों शिष्यों के होते हुए भी इस कार्य के लिए मात्र तुम्हारा चयन करना पड़ा, मैंने तुमसे मा के योगक्षेम से जीवट की भावना बलवती देखी है, मैंने तुमसे दिव्य गुणों के परि भार्जन की भावना अनुभव की है, प्रतिकूल परिस्थितियों में अपने आपको अड़िग बनाये रखने की क्षमता का साहस देखा है इसलिए इस कार्य के लिए तुम्हारा चयन करना पड़ा है और इसी हेतु तुम्हे पुनर्गृहस्थ धर्म में भेजने के लिए कृत सकल्प होना पड़ा है।

गृहस्थ में विश्व जननी के अपरिवर्तनीय नियमों तथा क्रिया सयोग से उत्पन्न द्वेषादि प्रवृत्तियों का विकास और मोहादि भावनाओं का परिमार्जन स्वाभाविक है, परन्तु तुम्हे अपनी पूर्व शृखला को स्मरण रखना है, तुम्हारे पूर्व जीवन सन्यासी के रूप में विकसित हुए हैं, इसीलिए इस जीवन में भी सन्यासी वृत्तियों का विकास तुम्हारे जीवन में स्वाभाविक रूप से रहा है, परन्तु फिर भी तुम्हे अपने गृहस्थ धर्म का पालन उसी रूप में करना है, जिस रूप में आद्या शक्ति मां की लीला विचरण करती है, फलस्वरूप मोह आदि वृत्तिया तुम पर हाथी होने का प्रयास करेंगी। चारों तरफ जिस प्रकार से आसुरी वृत्तिया तुम पर प्रहार कर रही हैं, वह मैं अनुभव कर

रहा हू। फिर भी तुम्हे अपने कर्तव्य पथ से च्युत नहीं होना है और इन वृत्तियों के बीच रहते हुए भी अपने आपको निर्लिप्त और निर्माल्य बनाये रखना है। मोहादि वृत्तियों के बीच भी अपने आपको तटस्थ भाव से बनाये रखना ही तुम्हारे सन्यास जीवन की कसौटी है। गृहस्थ जीवन में सन्यास जीवन को विकसित करना कठिन कसौटी है, जिस प्रकार से मैंने तुम्हारा निर्माण किया है उस रूप में देखने पर मुझे विश्वास है कि तुम इस कसौटी पर खरे उतरोगे।

वत्स ! तुमने अपने पत्र में चित्त की चबलता का आभास दिया है, तुम्हारा चित्त, गृहस्थ से हट कर मेरे पास आने को व्याकुल है, ऐसा तुमने व्यक्त किया है, परन्तु तुमको यह नहीं शूलना चाहिए कि वावा ने जिन कष्टदायक शूलों में तुमको फेंका है, उसके पीछे एक अभीष्ट है, जब तक वह अभीष्ट प्राप्त नहीं होता तब तक तुम्हे उन तीक्ष्ण शूलों से सधर्ष करना है। गृहस्थ जीवन तो उस नित्य लीला विहारिणी का एक कौतुक है और तुम्हे इस गृहस्थ को इसी रूप में देखना है, इसके मूल में जाकर जब तुम देखोगे तो वहां यह भेद दृष्टिगोचर नहीं होता। वहा पत्ती, पुत्र मा, आदि का बन्धन नहीं है, वहा पर सर्वात्म भाव है, एकात्म भावना का उदय है, तुम्हे इसी मूल भाव से इस गृहस्थ को देखना है।

इससे भी जो कठिन कार्य तुम्हे साँपा है, वह विश्व में मूल विद्याओं का विकास करना है। जन मानस में इस प्रकार की चेतना जाग्रत्त करनी है। जिससे कि वह सूक्ष्मता का बोध कर सके। स्थूलता में जो निमग्नता है उससे उन्हे परे हटाकर सूक्ष्मता के दर्शन करना है। यह कार्य मन्त्रों के माध्यम से सभव है, ज्योतिष, तत्र, आदि इसी के अगो-भूत हैं, अत इन सारी विद्याओं को लेखनी के माध्यम से, वावा के माध्यम से, विचारों और भावनाओं के माध्यम से व्यक्त करना है, और इन लुप्त होती हुई विद्याओं को पुन-जीवित करना है, जिससे कि इस पृथ्वी तल से इन विद्याओं का लोप न हो जाय।

यह कार्य सन्यास में रहकर सभव नहीं है, यदि गृहस्थ लोगों के बीच कार्य करना है तो गृहस्थ के रूप में रहकर ही सभव है, इसीलिए इस जीवन में तुम्हे गृहस्थ में प्रवेश देने के लिये मुझे वाद्य होना पड़ा है, तुम्हारे मन में यह दृढ़ सकल्प बना रहना चाहिए कि तुम तभी अपने जीवन की पूर्णता का अनुभव कर सकोगे जब तुम इन विद्याओं को पुन ललित पुष्पित कर सकोगे।

वावा ! निराश होने का कोई कारण नहीं है। यदि तुम्हारा और मेरा स्थूल देह सम्पर्क नहीं होता है तो आशाहीन होने का क्या कारण है ? क्या तुम मुझे देखते नहीं हो ? क्या तुम मुझसे सम्प्रक्त नहीं हो ? क्या जीवन और आत्मा का परस्पर सम्बन्ध नहीं है ? नित्य इस प्रकार का क्रिया-कलाप होता है फिर यह उद्विग्नता क्यों है ? जो कुछ कार्य तुम्हे सोपा है, वह कार्य विना एक भी क्षण नष्ट किये करते रहना है, और जिस दिन मैं समझूँगा कि तुम्हारा कार्य सम्पन्न हो गया है, उसी क्षण मैं अपने पास तुम्हे बुला लूँगा।

यह तुम्हारे चित्त का विभ्रम है कि तुम मा योगमाया के प्रकाश कणों को

अनुग्रहनग स्वर्ग में रेखे हो, सुमारी पल्ली उभी कोणाकास के प्रवास क्षण का एह रितु है, पहुँचा सत्ता के स्वर का और इमर्ही योगमादा का। एह गुम्ब है, जो उगने द्वारा भनाना भीका ने तिए प्रेग्गि बर ग डमी पंगमला ही उछु का फोड़ा था। यह भव दुष्ट डगी तिल सीनापिण्डिमिली के गंडे में गजा हुआ है, उच्चा सन्याम की गरण भेजा इम बाल द्वा पर्याप्त है जि तुमांग त्रीपा बूना आगम के लिए रहा था। पहुँच पोणगाका के भू विजाम का गंडा था, जो जि तुम्हारी कटी के भास्यम से अका हुआ है। मैंने तुम्हें इन दगी प्रकाश का दो बाल भेजो जा दरम्भ किया है, जिस प्रशास्त भज में छिट्ठर बर मेरे पास आया है, इन्हाँपा इम गृहस्थ दें भी तुम्हें योग के लिए दर्शन करने हैं, यह भी अरो आन में गमालगाह ही ही एक दर्शीदी है।

जैसे पट में पानी का अनिवार्य असम हाता है पर एट ट्रैक पर यह अनुष्ट व्यापी आशार में लिनी हो जाता है उमी प्रशार तुम्हारा अनिवार्य अनग तो हुआ भी मेरा ही अस्तित्व द्वारा है। इमीनिये तुम पल्ली को दाँड़ी लादो दुए भी आदा शक्ति के प्रकाश का एह दाँड़ा अनुभव बर मनते हैं, गुम्हान गृहस्थ—गृहस्थ न होहर उर भीनापिण्डिरिली जा दा लोगुह है, जो जि गमांग के लिए एह गृहस्थ का पर्याप्त है जीवन मेरे निये एह एह गुप्रद कल्पना, एह अनुकूल भास्यमें भी और या जगदम्भा या एक तिनिष्ठ प्रकाश रितु है।

तुम्हें अपने प्रयत्नों में प्रूरी गग्ह में पीर गहा है फर्दीनि गृहस्थ के न्य में तुम्हारे पास यहुत ही कम भगव बचा है, इमारा काँच यह है जि तुम बिछने कर्द जन्मी से सन्याम न्य में रह तो और हाँ जीरा या यह स्व भी मानामवह ही है, यद्यपि इसका बाह्य आवरण गृहस्थ राष में दियाई देता है, इमीनिय तुम्हें जल में रहते हुए भी फमल-भग-बत् विचरण करता है। जीवा ते प्रत्येक धार की मानवता तुम्हारे कार्य की पूर्णता है, इसके निये भूम, प्यास, निद्रा, आदि का ऐरे र्यान नही है, जीवन के प्रत्येक धार को उस जायं में सीन करना है जिस कायं से लिए तुम्हे भेजा है, और यह भी स्पष्ट है कि तुम्हें शीघ्र ही अमेशा के लिए यादा के पास आना है, जो जीवन के पूर्ण धार अपनी चित्त धृतियों को उद्घांगमी बनने की ओर प्रवत्त होना है।

तुम्हें नित्य जगत जननी के चिन्नन तथा उनके कार्यों को पूर्णता देना है, जिशु जिस प्रकार भातृ गर्भ में अमृता जाडी के रस से पोषित होता है, उमो प्रकार तुम्हे इस जीवन में या के चिन्नन रस के माध्यम से वृद्धि होता है, इस वृद्धि के साथ चंतन्य शक्ति का अस्तित्व स्वयं प्रकाश-भान रहेगा। तुम्हे मा के अलावा और किसी के प्रति नमन नही होता है, मानव के सामने दीनता प्रदर्शित करना तुम्हारे लिए अभीष्ट नही है, जो किसी वस्तु की अपेक्षा नही करता वही धन्य है। मैंने तुममे इन समस्त गुणों का परिमाजन किया है और मुझे अपने गाप पर जितना विश्वास है तुम पर भी उतना ही विश्वास है।

तुम्हारा कार्य विश्व में इस प्रकार से युवक-युवतियों का चयन करना है, जिनमे इस प्रकार के गुणों के सूक्ष्म कण हो, जिन प्राणियों में तुम्हे भा आदा शक्ति के स्फुलिंग

) दृष्टिगोचर हो, उन्हे इस कार्य के लिये प्रेरित करना है और इसी प्रकार के व्यक्तियों का चयन करना है, उन चयनित तोगों में से जो परिश्रम तथा सर्वात्म भाव समर्पण की कसौटी पर खरे उतरे उन्हीं को शिष्य रूप में स्वीकार करना है। इस स्वीकारोक्ति में पुरुष नारी का भेद नहीं होना चाहिए, तुम्हारे लिए शिष्य शिष्य है, फिर वह पुरुष रूप में हो या नारी रूप में, तुम्हे उनके चित्त को ऊर्ध्वर्गामी बनाने की ओर प्रेरित करना है और जो देव कार्य तुम्हे सौंपा है उस कार्य में उन्हे निष्णात करना है जिससे कि वे आने वाले जीवन में इस मानवता के प्रकाश स्तम्भ को ले कर आगे बढ़ सकें और मानवता के पथ निर्देशन में सहायक हो सकें।

समय बहुत कम है, काल निरन्तर गतिशील है, और यह गतिशीलता अस्तित्व लीनता की ओर ही प्रवाहित है, इसलिए अपने जीवन में तीव्रता के साथ कार्य करना है और कठोरता के साथ अपने कर्तव्य के प्रति सजग रहना है। शरीर सुख और चित्त सुख की तरफ तुम्हे प्रेरित न होकर अपने जीवन को कठोरतम कसौटी पर कर्म रखना है, अपने जीवन के प्रति जितने ही ज्यादा निर्भम हो सकोगे, सफलता उतनी ही निकट होगी।

मेरे चित्त में तुम्हारे प्रति सर्वाधिक स्नेह है, तुम्हे सबसे अधिक कसौटी पर कसा है और यह कहते हुए मेरी आँखों में आळाद के कण है कि मेरे जीवन का स्वप्न तुम्हारे माध्यम से चरितार्थ होने जा रहा है, इस पृथ्वी पर आमुरी शक्तियों को समाप्त कर देवत्व की स्थापना, तथा स्थूल ज्ञान की अपेक्षा सूक्ष्म ज्ञान मन्त्र, तत्र, यत्र, ज्योतिष कर्म काण्ड, ज्ञान, वैराग्य, योग, साधना आदि देव विद्या का विकास मेरे जीवन का स्वप्न था, और वह स्वप्न जिस प्रकार से तुम साकार कर रहे हो इससे मेरे हृदय में अत्यधिक आनन्द है और यह आनन्द तुम्हारे लिये आशीर्वाद के रूप में परिणत है।

तुम्हे शीघ्र ही मेरे पास बुलाना है और हमेशा के लिये इस सिद्धाश्रम को तुम्हे सभालना है, पर इससे पूर्व तुम्हारे कार्य की पूर्णता हो जानी आवश्यक है, मुझे तुम पर गणाध विश्वास है और जिस प्रकार से तुम कार्य कर रहे हो, जिस विरोधी वातावरण में अपने अस्तित्व को सुरक्षित रूप से बनाये रख रहे हो, जिस वात्याचक्र में अपने आप को अडिग रखे हुए हो उससे मुझे प्रसन्नता है और तुम्हारी सकल्प शक्ति पर आस्था है।

वहूं को मैं आद्या शक्ति के अश रूप में नमन करता हूं और तुम्हारे लिये वाचा मगल कामना करता है।

शुभाशीष,  
(सच्चिदानन्द परमहस)

पंक शिवानन्द ब्रह्मचारी  
 थान मुक्तेश्वराश्रम  
 पाप्त कर्ता डा० नारायणदत्त श्रीमाली

पालोक—प्रसिद्ध शिवानन्द ब्रह्मचारी पहले मा भैरवी के चरणों के प्रति अनुरक्त थे, तथा निर्जन वन में एकान्त साधना कर विशिष्ट सिद्धियों के स्वामी बने, गोरखपुर से आगे नेपाल के जगलो में जब डा० श्रीमाली सन्यास रूप में निखिलेश्वरानन्द के नाम से साधना करते थे, तब उनका सामीय प्राप्त हुआ, और शिष्यत्व स्वीकार किया, और साथ में रहकर अति विशिष्ट साधनाएँ सीखी व सिद्धिया प्राप्त की।

पर कुछ समय बाद किसी विन्दु पर फटकारे जाने पर शिवानन्दजी अन्यत्र चले गये और कुछ वर्षों तक नेमीक्षारण्य में रहे, पर उनके मन में पश्चात्ताप की आग जलती रही और गुरुदेव श्रीमाली जी से मिलने के लिए छटपटाते रहे। अचानक एक दिन हिन्दी की किसी प्रसिद्ध पत्रिका में निखिलेश्वरानन्द के बारे में प्रकाशित विवरण ध्यान में आया और वर्तमान अता-पता ज्ञात हुआ कि श्रीमाली जी ही निखिलेश्वरानन्द हैं, तो वे भाव-विह्वल हो गये और अपनी भूल स्वीकारते हुए गुरुदेव से क्षमायाचना युक्त पत्र लिखा।

परम श्रद्धेय गुरुदेव।

चरणों में तुच्छ शिवानन्द का नमन स्वीकार करें।

मैं यह पत्र न भेजकर स्वयं ही आपके चरणों में उपस्थित होता, और आपके चरण पकड़ कर तब तक रोता रहता जब तक कि आप मुझे उठाकर मेरे मरिष्यक पर शीतल हाथ नहीं रख देते, परन्तु मैं अपनी ही भूल पर लज्जित हूँ, पिछले कई वर्षों से मैं पश्चात्ताप की अग्नि में जल रहा हूँ, मेरे जीवन का एक-एक कण बोझिल हो गया है, ऐसा लग रहा है जैसे मैं जीवित नहीं हूँ अपितु जिन्दा लाश ढो रहा हूँ, मेरे जीवन की उमगे, मेरे जीवन की इच्छाएँ, उसी दिन समाप्त हो गई थीं जिस दिन मैं आपसे दूर हो गया था। यह मेरे भाग्य पर नियति का क्रूर व्यग है कि मैं आप जैसे देवता के चरणों में आकर भी अलग हो गया, मेरे जीवन का यह अभिशाप ही कहा जायगा कि मैं गगा के पावन तट पर जाकर भी तृष्णित ही रहा, आपसे विछुड़ने के बाद मैं अपने जीवन को जीवन ही नहीं मानता, आप अन्तर्यामी हैं, आपके पास असीम सिद्धिया है, मानव के मूल कण को पहचानने में आप सक्षम हैं। आप स्वयं मेरे बारे में जान सकते हैं कि आपसे अलग होने के बाद मेरी क्या स्थिति रही है। मेरी आत्मा ने कितना क्रन्दन किया है यह आप भली प्रकार जान सकते हैं, जीवन का एक-एक कण मेरे लिये कितना बोझिल रहा है यह आपसे ज्यादा कोई नहीं जान सकता। आप स्वयं मेरे बारे में जान सकते हैं कि आज तक मैं किस प्रकार से अनाथ की तरह भटक रहा

हूँ, आपको पुन ग्राप्त करने के लिये मैंने क्या-क्या नहीं किया ? कहा-कहा नहीं गया ? परन्तु यह मेरा दुर्भाग्य था कि मैं चाहते हुए भी आपको पुन ग्राप्त नहीं कर सका । यह मेरे जीवन का अभिशाप है, यह मेरे जीवन की सबसे बड़ी दुर्घटना है जबकि मैं आपका आश्रय पाकर भी बिछुड़ गया ।

पर इसमें पूरी तरह त्रुटि मेरी ही थी, आपने तो मुझ दीन पर तरस खाकर मेरी इच्छा को स्वीकार किया था, मेरे जीवन का कोई भी कोना आपसे अछूता नहीं है, जब मैं आपके पास आया था तब मैं दीन-हीन, निराश्रित और निरूपाय था । यद्यपि बचपन से ही मेरी यह साध थी कि मैं अपना पूरा जीवन साधना में ही व्यतीत करूँ और उच्चस्तरीय साधकों के सान्निध्य में रहकर अपने जीवन को सार्थक करूँ, इसी-लिये जब बचपन में ही मेरे मां-वाप गुजर गये तो मैं घर से भाग खड़ा हुआ और सोलह वर्ष की अवस्था तक भटकता रहा ।

मा भैरवी की मुझ पर कृपा रही कि उसने मुझे रोक लिया और उससे मैंने मा की तरह ही स्नेह पाया । इसमें कोई दो राय नहीं कि मा वास्तव में ही मा थी । उसने स्वयं मेरे लिये परेशानिया देखी परन्तु मेरा पालन पुन की तरह ही करती रही । यद्यपि मैं सोलह-सत्रह वर्ष का था परन्तु उसने मुझे सोलह-सत्रह महीने से बड़ा माना ही नहीं । उसी प्रकार से हठ करके खिलाती और मेरी सुख-सुविधा का ध्यान रखती, यही नहीं अपितु उसने मुझे उसी प्रकार से सिखाया जिस प्रकार से मा अपने शिशु को सिखाती है । मा भैरवी तत्र, क्षेत्र में निष्णात थी और उसने मुझे तत्र क्षेत्र में निष्णात बनाने में कोई कसर नहीं रखी । मैंने अपने जीवन में सोच लिया था कि अब मुझे एक आश्रय मिल गया है और मैं इसी क्षेत्र में निष्णात बनूगा तथा जीवन के बाकी वर्ष तत्र को सर्वोच्चता प्रदान करने में सफल हो सकूगा । इसके लिये मा भैरवी से सीखता रहा और वह मुझे सिखाती रही । इस प्रकार कुछ कठिन और दुष्कर कियाए भी उसके द्वारा सीखने को मिली, परन्तु यह मेरा दुर्भाग्य है कि मैं ज्योही पूर्णता की तरफ बढ़ने का प्रयत्न करता हूँ कि मेरे नीचे का आश्रय समाप्त हो जाता है ।

एक दिन अचानक मा भैरवी दीमार पड़ी और तीसरे दिन उसने मुझे अपने पास बुलाकर कहा वेटा । अचानक मेरा बुलावा आ गया है और मेरा जाना आवश्यक है, जिस स्थान पर मुझे जाना है, उस स्थान के लिये इस चोले को बदलना आवश्यक है, अत मैं जा रही हूँ पर मेरा आशीर्वाद तेरे साथ है, कि तू इस क्षेत्र में पूर्णता प्राप्त करे ।

मेरे ऊपर तो अचानक वज्रपात-सा हो गया । मैं सोचता ही रह गया कि यह अचानक और अप्रत्याशित रूप से क्या हो रहा है, पर मरते-मरते मा ने इतना ही कहा कि यदि तुझे तत्र में पूर्णता प्राप्त करनी है तो तू स्वामी निखलेश्वरानन्द के पास जाकर याचना कर । यद्यपि मैंने उनसे आज्ञा प्राप्त कर ली है फिर भी वे मेरे आराध्य हैं अत इतना ही कह सकती हूँ कि यदि शिष्य भाव अपने मन में रखा तो पूर्णता वही से प्राप्त हो सकेगी । तत्र क्षेत्र में तू जिस स्तर पर है, उससे आगे का ज्ञान

और कहीं पर से तुझे नहीं मिल सकेगा, इसके लिये तुम्हे वहीं पर जाना होगा और आगे के जीवन में वहीं तुझे पूर्णता दे सकेंगे—और कहते-कहते मा भैरवी ने अपने प्राणों को पवधूत में विसर्जित कर दिया।

एक बार फिर मैं अनाय हो गया था। मेरे मन में जो उत्साह था वह समाप्त हो गया, मेरी अवस्था विक्षिप्त की तरह हो गई थी और ऐसी ही विक्षिप्त अवस्था में मैं आपके चरणों में पहुँचा था।

मुझे वह घटना और वह दृश्य आज भी भली प्रकार से स्मरण है जब मैं आपके पास पहुँचा था। आप निर्जन जगल में छोटी-सी कुटिया में साधना रत थे। मैं दो दिन और दो रात आपके चरणों के पास पड़ा रहा, पर न तो आपकी समाधि खुली और न मैं सान्त्वना पा सका।

दूसरे दिन शाम को वहां पर अचानक एक साधु प्रकट हुआ पर उसने मुझे मकेत में चुप रहने को कहा। मैं उस धनधोर जगल में अचानक उस आगत साधु को देखकर आश्चर्यचित था पर मैं उसके सकेत करने पर चुप रहा। वह आपके सामने तीन घंटे तक बैठा रहा और उसके होठ हिलते रहे, सभवत वह आपसे आज्ञा प्राप्त करने के लिए आया था या अपनी बात कहने के लिये आया था। मैं यह देख रहा था कि आप दोनों के बीच मैंने वार्तालाप चल रहा है।

यह तो मुझे बहुत बाद में पता चला कि वे आपके ही शिष्य आज के प्रसिद्ध अवधूत वावा थे।

तीसरे दिन जब आपकी समाधि खुली और मुझे देखा तो आपके चेहरे पर मुस्कराहट खेल गई। और बोले—शिवानन्द! मा भैरवी चली गई?

मैंने सारी बात आपको बता दी और आप चिन्तन में डूबे रहे, मेरी बात समाप्त होने पर आपके मुह से निकला था कि मा भैरवी को जाना था, वहां पर उनका जाना आवश्यक है, पर तुझे यहा भेजा है तो चिन्ता मत कर और जीवन में जो कुछ अपूर्णता रह गई है उसे पूर्ण कर।

जिस प्रकार मरुस्थल में जलते हुए प्राणी को सुखद छाया मिलने पर आनन्द की अनुभूति होती है, ठीक वैसी ही अनुभूति आपको पाकर हुई। जिस प्रकार प्यास से बेचैन प्राणी को गगा का किनारा अचानक मिल जाय और उसे जिस प्रकार से प्रसन्नता होती है वैसी ही प्रसन्नता आपका सान्निध्य पाकर मुझे प्राप्त हुई थी, मैं अपने आपको ससार का सबसे सौभाग्यशाली समझने लगा था।

पर मैं स्वयं हतभागी हूँ, मैंने जो कुछ मा भैरवी से प्राप्त किया था उसमें काफी कुछ पूर्णता आपके सान्निध्य से प्राप्त हुई थी। एक वर्ष में आपने जो कुछ मुझे दिया था वह अपने आपमें अन्यतम था। थोड़े में समय में आपने मुझे जिस तीव्रता से तत्र के पथ पर आगे बढ़ाया था वह मेरे लिये आश्चर्यजनक था। यह मेरा सौभाग्य था कि मैं आपके चरणों का आश्रय पा सका था और आपके द्वारा ज्ञान प्राप्त करने में

सफल हो सका था, पर यह मेरा भाग्य नहीं, मा भैरवी की भमता का प्रभाव था कि आपने मुझे स्वीकार किया था।

पर मैं योड़ा-न्सा पाकर भी अपने आपको काफी ऊचा समझने लगा था, आज मैं यह अनुभव करता हूँ कि मुझ में अह की प्रवृत्ति आ गई थी, तत्र क्षेत्र में अपने आपको निष्पात समझने लगा था। और मैं यह अनुभव करने लगा था कि मेरे पास इस प्रकार की विशिष्ट सिद्धियाँ हैं जिनके माध्यम से मैं असम्भव को भी सम्भव कर सकता हूँ। यह भावना धीरे-धीरे मुझ में बढ़ती गई और मैं आपके अन्य शिष्यों से अपने आपको ऊचा समझने लग गया था।

ऐसा होने पर मुझ में अह की भावना बढ़ती ही गई। मैं कई बार अपने ही गुरु भाइयों से उत्तमता लग गया, फिर भी वे शान्त रहे, आप यह सब कुछ देख रहे थे, मेरे परिवर्तित व्यवहार को अनुभव कर रहे थे, फिर भी आप शान्त बने रहे, और मैं अह के आवेग में आपके उस शान्त रूप को अपने कार्य की, और अपने अह की स्वीकारीकृति ही समझता रहा। आज मैं यह अनुभव कर रहा हूँ कि मैं कितना बड़ा नराघम हूँ जिसने गुरु के सामने अह का प्रश्न दिया था।

और इसी दुर्बुद्धि ने एक दिन आपकी आशा की अद्भुता कर दी। आज मैं पश्चात्ताप की अग्नि में जल रहा हूँ कि मैंने एक देव-भूरुष के सामने कितनी निम्नता प्रदर्शित की थी, फिर भी आप शान्त बने रहे, पर यही श्रुटि जब द्वितीय बार हुई तो आपने मुझे फटकार दिया। शिष्यों के बीच इस प्रकार की फटकार से मेरे 'अह' को चोट लगी। आपने तो मेरे अह पर इसलिये चोट की थी कि जिससे मैं मानव बना रह सकूँ। पर उस समय मेरी आखों पर अह की पट्टी बघी हुई थी। तत्र और विशिष्ट तत्र मुझे ज्ञात थे तथा तारा साधना करने के बाद तो मैं अपने आपको बहुत कुछ समझने लगा था, इसीलिए आपकी फटकार मेरे लिये असह्य हो गयी और मैंने क्षमा याचना के स्थान पर आपके सामने खड़ा होकर जिन शब्दों का प्रयोग किया वे शब्द ही मेरी मृत्यु बन गये।

मुझे स्मरण है कि आप उन शब्दों को सुनकर 'ओध से भर गये थे और तीव्र शब्दों में मुझे निकल जान को कहा, साथ ही यह भी सुनाई दिया कि तू जिस विद्या पर उठल रहा है वह सारी विद्या बगले छ महीनों में विस्मृत हो जायगी।

पर, यह मेरा दुर्भाग्य था कि मैं उस समय भी अपने आपको जरूरत से ज्यादा समझता रहा। मुझ में महाविद्या साधना के बाद यह अह था कि कोई मेरा कुछ भी नहीं विगड़ सकता। किसी कोने में छिपी हुई यह भावना भी थी कि मुझे भी इतना ऊचा गुरु बनना है जितना और कोई नहीं हो, और दुर्भाग्य ने मेरे अन्तर में यही कहा कि तेरा कुछ भी नहीं विगड़ सकता। जो विद्याएं तेरे पास हैं वे मा भैरवी की दी हुई हैं, इसलिये उन विद्याओं का लोप सम्भव नहीं। मेरे मन में अपने स्वयं का आश्रम बनाने का कुत्सित विचार भी था अत मैंने उसी दिन आपके आश्रय को छोड़ दिया।

पर बाबा! यह मेरी जीवन की सबसे बड़ी भूल थी। मैं यह सारी बात इस

लिये लिखना चाहता हूँ जिससे कि मेरे दिल पर जो बोझ है वह मैं उतार सकूँ। पिछले १५ वर्षों में मैं इस बोझ को अपने पर लाद कर फिर रहा हूँ। आपसे मैं आज सारी बात खुलकर कह देना चाहता हूँ, यद्यपि मेरा पत्र लम्बा हो गया है, मैं अपने विचारों को सुनियोजित ढंग से व्यक्त नहीं कर पा रहा हूँ, परन्तु फिर भी मैं अपनी बात आपके सामने रख देना चाहता हूँ।

आपके यहाँ से जाने के बाद मैं गोरखपुर के पास रुक गया और गोरखनाथ के मन्दिर से कुछ समय के लिये सवन्धित रहा, परन्तु जिस अह के वशीभूत होकर आप से अलग हुआ था वे सारी विद्याएँ छ महीने के बाद लुप्त हो गईं। मैं उसके बाद चाहते हुए भी कुछ नहीं कर पाया। यद्यपि मुझे वे सारे मत्र याद थे, सम्बन्धित क्रियाएँ ज्ञात थीं। मैंने उन क्रियाओं के माध्यम से पुनः सिद्धि प्राप्त करनी चाही पर प्रयत्न करने पर भी मैं उन सिद्धियों को पुनः प्राप्त नहीं कर सका और एक बार मैं पुनः एक साधारण कीट बन गया।

उस दिन पहली बार मैंने अनुभव किया कि मैंने अपने जीवन में कितनी बड़ी भारी त्रुटि कर दी है। मैंने जीवन में जो कुछ प्राप्त किया था वह भी खो चुका हूँ जो मेरा लक्ष्य था वह तो दूर, अपितु जो कुछ मेरे पास था वह भी समाप्त हो गया है, आपका श्राप मेरे जीवन के पीछे था और मैं बद्धवास-सा इधर-उधर भटक रहा था।

जैसेनैसे करके मैंने छ महीने विताये, पर जब मैं अपने आप मेरे नहीं रह सका तो मैं पुनः उसी स्थान पर पहुचा जहा आप मुझे मिले थे, परन्तु वहा जाने पर मुझे कुछ भी प्राप्त नहीं हो सका, आपने वह स्थान छोड़ दिया था।

उसके बाद मेरा खाना-पीना सब कुछ छूट गया, मेरी आखों की नीद उड़ गईं, जीवन का मोह समाप्त हो गया और आत्महत्या करने का पक्का निश्चय कर लिया, मेरा मन बार-बार मुझे फटकार रहा था कि तूने इतने बड़े आश्रयदाता की अवज्ञा कर दी, तू जिस आधार पर खड़ा था उसी आधार को अपने हाथों से तोड़ दिया, आपके लिये जो शब्द मैंने प्रयोग किये थे उस शब्द का एक-एक अक्षर मेरे सीने पर हथौड़े मारता रहा और मैं पश्चात्ताप की अग्नि मेरे बराबर जलता रहा।

उसके बाद मैंने आपकी खोज में पूरा नेपाल छान मारा, गोरखपुर के आस-पास का पूरा स्थान देख लिया, हिमालय के प्रत्येक उस स्थान को देखा जहा पर आप से मिलने की सभावना थी, पर जहा-जहा भी मैं गया आपका श्राप अभिशाप की तरह मेरे जीवन के पीछे लगा रहा, मुझे कहीं पर भी शरण नहीं मिली, कहीं पर भी आप के बारे मेरे समाचार नहीं मिले, कहीं पर भी आपको न पा सका।

पिछले पन्द्रह वर्षों मेरे हिमालय के एक-एक स्थान को देख लिया है, प्रत्येक साधु और सन्यासी से आपके बारे मेरे ज्ञात करता रहा, परन्तु कहीं से भी अनुकूल समाचार प्राप्त नहीं हुए, इन वर्षों मेरा पूरा शरीर जर्जर हो गया, आँखें अन्दर धस गईं, चेहरे की कान्ति समाप्त हो गई और मुझे मेरे इतनी भी शक्ति नहीं रही कि मैं अपने आपको सम्भाल सकूँ, अपने आपको जीवित रख सकूँ।

पर भरना मेरे हाथ मे नहीं था, जब तक आप मुझे नहीं मिलते, जब तक आपके चरणों मे पड़कर मे क्षमा याचना नहीं कर लेता, जब तक मैं आपके पैरों को आसुओं से भिगो नहीं लेता तब तक भर कर भी मुझे चैन नहीं मिलता, मेरी सारी इच्छाएं एक ही विन्दु पर केन्द्रित थी कि आपको प्राप्त करना है, किसी भी स्थिति मे आपसे मिलना है और अपनी भूल का प्रायशिच्त करना है।

क्योंकि मैं यह भली भांति समझ गया था कि जब तक आपका श्राप समाप्त नहीं होगा, जब तक आपकी कृपा मेरे ऊपर पुन नहीं होगी तब तक मैं कुछ भी प्राप्त नहीं कर सकूगा। मैं जिस साधक के पास भी गया वही से मुझे फटकार मिली, जिस अधोरी या तात्रिक का साहचर्य प्राप्त करना चाहा वही से मुझे दुष्कार मिली, जिससे भी मैं मिला वही मुझे उपेक्षा और अनादर मिला, क्योंकि आपका श्राप मेरे जीवन के पीछे है और जब तक आप उस श्राप को वापस नहीं ले लेंगे तब तक मैं अपने जीवन मे कुछ भी नहीं कर सकूगा।

आज मैं समझ गया कि जीवन की समस्त साधनाओं से भी ऊपर गुरु की कृपा होती है, जब तक गुरु का वरद हस्त सिर पर होता है तभी तक विद्याएं फलवती होती हैं। जिस दिन गुरु अपना हाथ सिर से हटा लेते हैं, उस दिन से साधक का पतन होने लग जाता है। मेरे अह ने मुझे वरवाद कर दिया, आपकी अवज्ञा मेरे पूरे जीवन को लील गई, और मैं साधारण मानव से भी गया बीता होकर आज दर-दर भटक रहा हूँ।

मेरी इतनी हिम्मत नहीं है कि मैं आपके सामने आ सकूँ। मैं आपके क्रोध से परिचित हूँ, यद्यपि आप दया मूर्ति हैं, आपके जीवन मे मेरे जैसे सैकड़ों नराधम आए होंगे, उन पर अवश्य आपकी कृपा हुई होगी, मैं जीवन मे अभागा हूँ इसलिए चाह कर भी मैं आपकी कृपा नहीं पा सका।

पिछले दिनों हिन्दी के एक प्रसिद्ध पत्र मे आपके बारे मे बहुत कुछ पढ़ने को मिला, तब सारी स्थिति मेरे सामने स्पष्ट हो गई। वे सारी घटनाएं मेरी आखों के सामने फैल गई जो मैंने देखी थीं। वही से आपका पता मिला, और जब चित्र देखा तो रहा सहा सद्वेष भी जाता रहा।

यदि साधना का स्मरण रहता तो मैं साधना के माध्यम से आपके जीवन के बारे मे जानकर आपके चरणों मे आ गिरता, परन्तु आपने तो मेरी सारी विद्याएं विस्मरण कर दी हैं, मैं प्रयत्न करता हूँ फिर भी मुझे स्मरण नहीं रहता। जो कुछ मुझे याद था वह भी मैं भूल चुका हूँ।

एक बार जब आपका पता मुझे लगा तो मैंने निश्चय किया कि मैं सीधा आपके चरणों मे पहुँच जाऊँ और मुझसे जो भयकर त्रुटि हो गई उसके लिए क्षमा याचना करूँ। इतना होने पर भी यदि आप मुझे ठुकरा देंगे तब भी मैं निश्चिन्त, रहूगा, क्योंकि आपसे ठुकराया हुआ कहलाऊगा, क्या यह कम गौरव की बात है।

मैं आपके क्रोध से परिचित नहीं था, मैंने आपका करणा और दया का रूप

---

देखा था, आपका स्नेह मेरा अवलम्ब रहा था, आपके सानिध्य में जो कुछ मुझे प्राप्त हुआ था वह मेरे लिए स्वर्णिम था, आपका पुनर्वत स्नेह मुझे मिला था। आपने जितना स्नेह इस तुच्छ कीट को दिया था वह वास्तव में ही मेरी अमृत्यु निविधी थी। मैं बरावर त्रुटिया करता जा रहा था और आपकी करुणा बरावर उसको अनदेखी कर रही थी, आपने जो कुछ मुझे दिया वह मेरे लिए अन्यतम रहा। मैंने आप मेरे पिता का प्रेम, मा की करुणा, वहे भाई का स्नेह और गुरु का आशीर्वाद अनुभव किया, मैंने कई रूपों में आपके दर्शन किये हैं और प्रत्येक रूप करुणा तथा दया से ओत-प्रोत रहा है।

यह मेरे जीवन की विडम्बना थी कि मैं हिमालय के पास जाकर भी शान्ति नहीं पा सका, आपकी दया रूपी गगा के किनारे बैठकर भी तृप्त नहीं हो सका, आप की शीतल छाया प्राप्त होने पर भी मैं उससे वचित हो गया, यह मेरे जीवन का कितना बड़ा दुर्भाग्य था कि आप जैसे परम श्रेष्ठ गुरु को पाकर भी मैं अनाय ही बना रहा।

पर यह मेरी गलती थी, मैं अनाय हूँ, दरिद्री हूँ, निर्वन बोर कमजोर हूँ, परन्तु जो कुछ भी हूँ केवल मात्र आपका हूँ। आप मेरे लिए एक क्षण व्यतीत करें और साधना से देखें कि पिछले पन्द्रह वर्ष मैंने किस प्रकार विताए हैं, मेरी प्रत्येक सास के साथ आपका नाम रहा है, मेरे जीवन के प्रत्येक क्षण में आपका स्मरण रहा है, मेरे शरीर के रोम-रोम से आपके नाम की छवि निकलती रही है, और पिछले पन्द्रह वर्षों में मैं प्रत्येक क्षण पश्चात्ताप की अग्नि में जलता रहा हूँ।

मैं इस पत्र के द्वारा दया की भीख मागता हूँ, मैं कुछ भी नहीं हूँ, मुझसे जो कुछ त्रुटि हुई है, उसके लिए पूरे जीवन भर के लिए क्षमाप्रार्थी हूँ, जब तक आपका करुण-पत्र प्राप्त नहीं होगा तब तक मैं कुछ भी नहीं कर सकूँगा। मैं आपके सामने हर क्षण रहा हूँ पर मैं अपने आप में इतनी हिम्मत नहीं जुटा पा रहा हूँ कि बिना आपकी आज्ञा के आपके चरणों में आ सकूँ, क्योंकि मैं अपराधी हूँ और अपराधी को किसी भी प्रकार की रियायत प्राप्त नहीं होती।

परमात्मा से विमुख होकर तो व्यक्ति शायद जीवित रह भी सकता है, पर गुरु से विमुख होकर उसे तिल-तिल कर जलना ही पड़ता है, उसके जीवन की ओर कोई गतिमति नहीं होती।

मैं शरीर के रोम-रोम के द्वारा आपसे क्षमा-याचना करता हूँ, मेरी आँखें अतृप्त हैं, मेरा हृदय वेदना ग्रस्त है। मेरा सारा शरीर पश्चात्ताप की अग्नि में जल रहा है, और जीवन का प्रत्येक क्षण अभिशाप से ग्रस्त है, मैं इस पत्र के द्वारा अपने आपको आपके सामने समर्पित करता हूँ, मुझे विश्वास है कि आप इस अर्किचन को दया की भीख देंगे जिससे कि आपके चरणों में उपस्थित होकर क्षमा-याचना कर सकूँ और जीवन का, प्रायशिच्त कर सकूँ।

अघमाघम,  
( शिवानन्द ब्रह्मचारी )

# साधनाएँ और सिद्धियाँ



## बगलामुखी-साधना

पूज्य पण्डितजी,

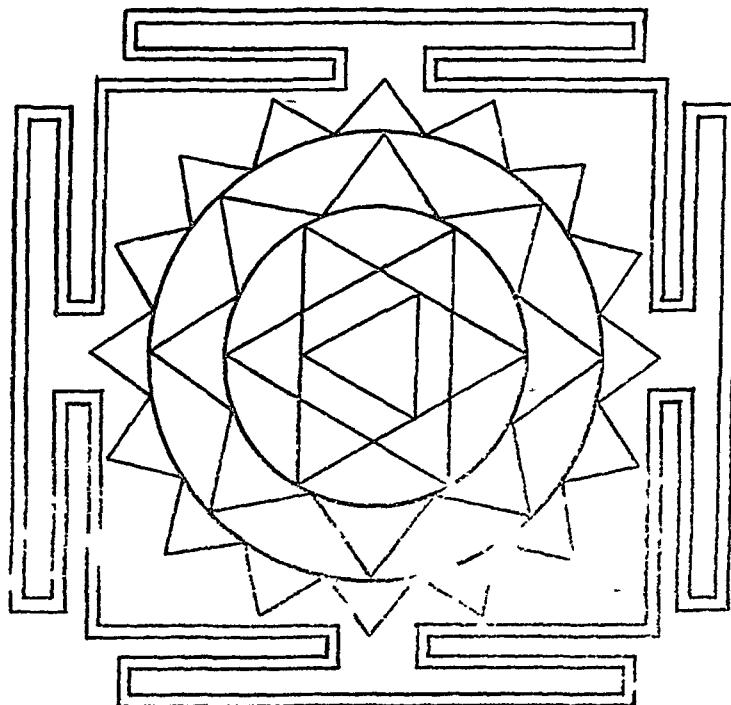
सादर चरण स्पर्श ।

मैं आपका ऋणी हूँ कि आपने अपना वरदहस्त भेरे सिर पर रखा, मैं आपके घर आने से पहले पूरी तरह से निराश हो चुका था और निराशा की उस सीमा तक पहुच चुका था जिसके आगे कोई रास्ता नहीं होता, यद्यपि मैं आश्वस्त था कि आपने मुझे आज से तीन वर्ष पूर्व शिष्य रूप में स्वीकार किया था, और मुझे दीक्षा भी दी थी, परन्तु उसके बाद आपकी आज्ञा से मैं अपने घर आकर गृहस्थ के कार्यों में उलझ गया था । उस दिन से अब तक मैंने लगभग साठ से ज्यादा पत्र आपको दिये होंगे, परन्तु आपने जब एक भी पत्र का जबाब नहीं दिया तो मैं पूरी तरह से झब्ब गया । मैं समझ नहीं पा रहा था कि मुझ से क्या गलती हो गई है जिससे कि मैं आपके चरणों तक पहुच नहीं पा रहा हूँ ? मुझे यह गौरव था कि मैं आपका शिष्य हूँ और यह मैंने अधिकार समझ रखा था कि जब भी आपकी याद मुझे बेचैन करे तब मैं आपके पास आ जाऊँ, परन्तु पहली बार जब आपका पत्र मुझे मिला था तो उसमें आपने लिखा था कि स्वीकृति मिलने पर ही यहां पर आना, अत मैं मन मसोस कर रह गया और उस दिन की प्रतीक्षा करने लगा जिस दिन आपकी तरफ से स्वीकृति-पत्र मिले, और इसी बेचैनी में हर हफ्ते दो हफ्तों में एक पत्र लिखता रहा, मेरे अधिकाश पत्रों में एक ही याचना रहती थी कि मैं आपके पास आना चाहता हूँ और आपकी कृपा का प्रसाद प्राप्त करना चाहता हूँ, परन्तु मुझे उन पत्रों के उत्तर नहीं मिलते और मैं ज्यादा-से-ज्यादा निराशा में डूबता जाता । आपको पत्र लिखने के बाद उत्तर की बेचैनी बढ़ जाती, और जब आपका पत्र नहीं मिलता तो निराश होकर ढरते-ढरते फिर एक पत्र लिख देता । ढर इस बात का रहता कि कहीं आप नाराज न हो जाए, पर जब आपका उत्तर नहीं मिलता तब मेरी स्थिति ठीक बैसी ही हो जाती जैसी कि मछली को पानी से निकालकर जमीन पर ढालने से होती है ।

मैं यह मन में सोच चुका था कि मैं आपके द्वारा भुला दिया गया हूँ, मैंने यह भी सोचा कि शायद मैं अपावृ हूँ, इसीलिए उनके चरणों में जा नहीं पा रहा हूँ, कभी सोचता कि शायद इसी प्रकार घुट-घुट कर मर जाना पड़ेगा, यद्यपि भेरे घर से पल्ली

है, बच्चा है, अच्छी नीकरी है, परन्तु फिर भी मुझे सन्तोष नहीं मिलता, मन में एक अभाव-सा अनुभव होता रहता। और जब साठ से ज्यादा पत्र आपको दे चुका और इतना होने पर भी जब आपकी तरफ से एक भी पत्र का उत्तर नहीं मिलता तो मैं पूरी तरह से निराश हो गया और मैंने अपने कर्मों का दोष समझ कर यह धारणा बना ली कि अब गुरुजी का कोई पत्र प्राप्त नहीं हो सकेगा।

जिस दिन पूरी तरह से दृट चुका था उसके दूसरे दिन ही आपका कृपा पत्र मिला कि शीघ्र आ जाओ, तुम्हे विशेष अनुष्ठान कराना है। मुझे कुछ ऐसा लगा जैसे मरुस्थल में प्यास से तड़फते हुए प्राणी को जल की बूँदें मिल जाय, उस दिन मैं कितना प्रसन्न हुआ था, व्यक्त नहीं कर सकता, तीन साल की बैचैनी और निराशा एक ही क्षण में दूर हो गई थी और मैं उसी दिन आपके चरणों में उपस्थित होने के लिए चल पड़ा था।



भगवती अंगगला का पूजन-मंड़

पहली बार आपके चरणों में जी भर कर बैठने का भौका मिला और इससे भी ज्यादा सौभाग्य मेरा यह रहा कि आपने मुझे अपने ही घर में ठहरने की स्वीकृति दी, सगमग पन्द्रह दिन आपके घर पर रहा। सच मानें पिछले चार्दीस बर्डों में भी मुझे

इतना अधिक आनन्द और स्वर्गिक सुख की अनुभूति नहीं हुई थी जितनी आनन्दानुभूति आपके घर में पन्द्रह दिनों में हुई थी।

आपने मुझे 'बगलामुखी साधना' सीखने की आज्ञा दी और उन पन्द्रह दिनों में आपने इस साधना के बारे में जो समझाया वह मेरे चित्त पर अकित हो गया। मैंने यही निश्चय किया था कि आपके ही घर में रहकर इस साधना को सम्पन्न करूँ, परन्तु आपकी आज्ञा थी कि मैं वापस अपने घर चला जाऊँ और घर में ही इस साधना को सम्पन्न करूँ। आपकी आज्ञा मेरे जीवन का सर्वोच्च धर्म है, अतः मैं आपका आशीर्वाद प्राप्त कर अपने घर लौट आया।

घर आकर मैंने इस साधना को सम्पन्न करने का निश्चय किया। आपने आदेश दिया था कि किसी भी महीने की कृष्ण पक्ष की चतुर्दशी को इस अनुष्ठान का प्रारम्भ करना चाहिए, अतः मैंने माघ कृष्ण चतुर्दशी को यह साधना प्रारम्भ की। इस सबवध में जो कुछ अनुभूति हुई है वह मैं आपके चरणों पर निवेदन कर रहा हूँ।

साधना या अनुष्ठान प्रारम्भ करने से पूर्व मैंने अपने घर के एक कक्ष को पूरी तरह से खाली कर दिया, मेरे घर में मात्र तीन कमरे ही हैं, अतः सारा सामान मैंने दो कमरों में व्यवस्थित कर तीसरा कमरा साधना के लिए चुना, और उसे पीले रंग से पुतवा दिया, कमरे की छत और नीचे का फर्श भी पीले रंग से रंगवा दिया था, इसके अलावा दरवाजे पर पीले रंग का पर्दा डाल दिया था।

आपने बताया था कि रात्रि को दस बजे यह अनुष्ठान प्रारम्भ होना चाहिए, और सुबह ५ बजे तक यह अनुष्ठान चलना चाहिए, इसके अलावा १० बजे से पूर्व कुएं के जल से स्नान करना चाहिए। इस प्रकार का जल मैं पहले से ही लाकर अपने घर में रख देता था, जिस कलश में यह जल लाता था। वह पूरी तरह से मजा हुआ शुद्ध होता था, मैंने साधना के लिए पीले रंग की धोती पहनने के लिए और पीले रंग की ही धोनी ओढ़ने के लिए रख दी थी। जो आसन मैंने विठाया था वह भी पूरी तरह से पीले रंग से रंग हुआ था, आसन के सामने लकड़ी का एक तल्ला रख दिया था जिस पर पीले रंग का कपड़ा पहले से ही विठा दिया था, और पीले रंग से रंगे हुए चावलों से तड़ते पर मैंने बगलामुखी यत्र बना दिया था, और उस यत्र पर बगलामुखी चित्र काच के फैमे में मढ़वा कर रख दिया था। यह चित्र आपके द्वारा ही प्राप्त हुआ था।

आपने बताया था कि विल्कुल निर्वस्त्र होकर मुझे स्नान करना है, अतः मैंने इस प्रकार स्नान कर धोती पहन ली थी और दूसरी धोती ओढ़ ली थी, उसके बाद मैं आसन पर आकर बैठ गया था, मेरा मुह दक्षिण की ओर था।

तड़ते पर पीले रंग से रंग हुआ जो मिट्टी का दीपक था उसमें गाय का धी भरा हुआ था, और पीले रंग से रंगी हुई रुई की बाट बनाकर रख दी थी। आसन पर बैठने के बाद मैंने उस दीपक को जलाया, साथ ही दीपक को बगलामुखी यत्र के बीच में रख दिया, दीपक के ओर तस्वीर के बीच में मैंने पीले रंग के पुष्प विश्वेर दिए थे,

और गन्धक की सात ढेरिया बना दी थी, प्रत्येक ढेरी पर दो-दो लोग भी रख दिए थे ।

तब्बे पर ही एक पीले रंग से रगा हुआ पीतल का लोटा रख दिया था और उसमे पीले रग का जल भर दिया था, आसन पर बैठकर मैंने आचमन प्राणायाम किया और फिर हाथ मे जल तथा कनेर के पुल्प लेकर सकलप किया कि मेरे ऊपर जो मुकदमे हैं वे समाप्त हो जाय, मैं उन सभी मुकदमों मे विजयी रहू, शवुओ पर मैं पूर्ण रूप से हावी बनू, शास्त्रार्थ मे या वातचीत मे सामने वाले व्यक्ति का मुह कीलन हो जाय जिससे कि वातचीत मे मैं सफलता प्राप्त कर सकू और अपने अनुरूप कार्य सफल हो सके ।



बगलासूखी देवी

सकल्प के बाद मैंने निम्नलिखित विनियोग किया  
 'ओम अस्या श्री ब्रह्मास्त्र-विद्या-बगला मुख्य नारद ऋषये नम शिरसि ।  
 त्रिष्टुप छन्द से नमो मुखे । श्री बगला मुखीदेवताये नमो हृदये । ह्री बीजाय नमो गुह्ये ।  
 शक्तये नम पादयो । ओम कीलकाय नम सवागे । श्री बगलामुखी देवता प्रसाद सिद्धर्थं  
 जपे विनियोग ।'

विनियोग के बाद मैंने श्रद्धा से बगलामुखी का निम्न ध्यान किया  
 मध्ये सुधिंघ मणि मडप रत्न वेदी सिंहासनो परिगताम्परि पीत वर्णम् ।  
 पीताम्बरा मरण मात्य विभूषतागीन्द्रेवीन्नमामि धृत मुदगर वैरि जिह्वाम् ॥  
 जिह्वाग्र मादाय करेण देवी वामेन शत्रून्परिपी डयन्तीम् ।  
 गदाभिघातेन न दक्षिणेन पीताम्बराद्या द्विभुजान्नमामि ॥  
 ध्यान करते समय मेरी आँखें बगलामुखी देवी के चेहरे पर टिकी हुई थीं ।  
 उसके बाद मैंने बगलामुखी मन्त्र जप प्रारम्भ किया । आपने वताया था कि इसके लिए  
 सूखी हुई हल्दी की माला का प्रयोग ही होता है, अत मैंने १०८ हल्दी के टुकड़े ले  
 उसकी माला बनाकर पहले से ही रख दी थी ।

आपने मुझे नित्य १०१ माला फेरने की आज्ञा दी थी, अत मैंने नित्य १०१  
 मालाए निम्न मन्त्र की फेरी

'ओह्य ह्री बगलामुखि सच्च दुष्टाना व्वाचम्मुख  
 स्तम्भय जिह्वा कीलय कीलम दुष्टिन्नाशय ह्री ओम स्वाहा ॥

आपने मुझे यह भी वताया था कि मैं नित्य नियमपूर्वक इस अनुष्ठान को करू  
 और दिन मे केवल दूध का सेवन ही करू । इसके अलावा अन्न आदि न लू, अत मैंने  
 दिन मे दो तीन बार दूध अवश्य पिया, अन्न नहीं लिया था, साथ-ही-साथ आपने यह  
 अनुष्ठान तेरह दिन का वताया था, अत इन तेरह दिनों मे मैंने नौकरी से सबधित  
 या गृहस्थ से सबधित कोई कार्य नहीं किया और पूर्ण रूप से ब्रह्मचर्य का भी पालन  
 किया ।

मैं नित्य इसी प्रकार से कार्य करता हुआ साधना कर रहा था, साधना प्रारम्भ  
 करने के सातवें दिन मुझे विचित्र अनुभूति हुई, जैसे मेरे कमरे मे कोई महिला खड़ी है  
 और जोरो से हस रही है, उसकी हसी वीभत्स और डरावनी थी, इसके साथ-ही-साथ  
 उसकी चूँडियों की आवाज भी मन मे भय का सचार कर रही थी ।

मैं दिना उसकी तरफ देसे देवी के चित्र के सामने नजर टिकाए मन्त्र का पाठ  
 करता रहा, परन्तु ऐसा आभास बराबर रहा कि वह स्त्री कमरे मे ही खड़ी है और  
 एकटक मुझे घूर रही है ।

इसके बाद दो दिन शान्ति से बीते, परन्तु दसवें दिन जब मैं रात्रि को साधना  
 मे बैठा तो छीक ब्राह्मण वजे एक भयावनी स्त्री मेरे पास आ बैठ गई । उसका वाया  
 धुटना मेरी दाहिनी जाध को दबा रहा था, मैंने मन्त्र पढ़ते-पढ़ते ही डरकर दाहिनी  
 और देखा तो मेरे रोगटे खड़े हो गए । वह स्त्री छीक बैसी ही जैसी कि काली देवी

की कल्पना पढ़ी है या सुनी है, लम्बे लम्बे वाल, डरावनी-सी आखें, पूरे शरीर की हड्डिया निकली हुई, दुबली पतली, आखें अन्दर को धसी हुई, तथा शरीर पर विचित्र प्रकार की हड्डियों की माला पहनी हुईं अत्यन्त ही डरावनी और भयानक लग रही थी, उसके एक हाथ में खप्पर था और खप्पर में ताजा मानव रक्त भरा हुआ था जिसे वह धीरे-धीरे पी रही थी ।

एक बार तो मेरी सास ऊपर की ऊपर रह गई और मेरी जबान तालू से चिपक गई । बड़ी कठिनाई से मैं मन्त्र का उच्चारण कर पाया, इस प्रकार वह लगभग एक घंटे तक बैठी रही, पर इसके बाद मैंने उसकी तरफ ताका भी नहीं, रात्रि के लगभग तीन बजे उसने वायें हाथ से मेरे केश मुट्ठी में पकड़े और जोरो से झकझोर दिए । मेरी आखों के सामने अघेरा-सा छा गया, एक क्षण के लिए तो ऐसा लगा जैसे मेरी सास निकल गई हो, पूरे कमरे में मरे हुए जानवर से निकली हुई बदबू भर गई । मेरी आख खुली तब वह काली जा चुकी थी । उसके बाद की रात्रि मैंने भय के साथ ही व्यतीत की, परन्तु मैंने १०१ मालाएं पूरी कर ली थी ।

ग्यारहवें दिन कोई विशेष घटना नहीं घटित हुई । यद्यपि यह एहसास बराबर बना रहा कि वह कमरे में उपस्थित है, और उसकी तीक्ष्ण आखे मुझे भेद रही हैं । मैंने उस दिन इधर-उधर ताका ही नहीं और अपनी आखें बगलामुखी देवी के चित्र पर टिकाए रखी । उस रात्रि को ऐसा अनुभव हुआ जैसे कि तस्वीर में बगलामुखी देवी के स्थान पर बड़ी भयावनी स्त्री हो । उस चित्र को देखकर भी मन में भय का सचार होता था ।

बारहवें दिन जब मैं साधना के लिए आसन पर बैठा तो बैठते ही मेरे सीने पर जोरो की लात लगी और मैं आसन से पीछे की ओर लुढ़क गया, तुरन्त ही मैं अपने आपको सयत कर पुन आसन पर बैठा तो दूसरी बार भी जोरो की लात लगी और मेरी आखों के सामने अघेरा-सा छा गया । मैं पुन उठकर आसन पर बैठ गया पर लातों के प्रहार से मेरे सीने में जोरो का दर्द हो रहा था ।

इसके बाद लगभग बारह बजे वही स्त्री कक्ष में द्विखायी दी और मेरे सामने आकर बैठ गई, लगभग पन्द्रह मिनट तक वह मुझे धूरती रही, उसके बाद उसने झण्ठ कर मेरे हाथों से माला छीन ली और मेरे गाल पर इतने जोर का तमाचा मारा कि आखों के सामने अघेरा-सा छा गया और मैं लगभग सज्जा शून्य-सा हो गया । ऐसी स्थिति पाच या सात मिनट तक रही होगी और मैं पुन अपने आपको नियन्त्रित कर आसन पर स्थिर बैठ गया । मुझे स्थिर देखकर उसने वह माला मेरे सीने पर जोरो से फेंक दी, मैं माला को हाथ में लेकर पुन मन्त्र पढ़ने लगा ।

रात्रि के लगभग एक बजे उसने दात किटकिटाए और वही बैठे-बैठे हाथ बढ़ा कर कमरे में जो पीले रंग का बल्व जल रहा था उसे फोड़ दिया, जिससे कमरे में अघेरा छा गया । केवल मेरे सामने जो दीपक जल रहा था उसकी ही रोशनी कमरे में रही ।

उसने जोरो से हुकार भर कड़क कर कहा—वन्द कर इस कार्य को, क्यो कर रहा है यह कार्य ? यदि अभी तूने वन्द नहीं किया तो मैं तुझे मारकर तेरा खून खप्पर में भरकर पी लूगी और इतना कहते-कहते वह जोरो से कड़कडा कर हम पड़ी ।

उस समय मेरी हालत पिजरे में फसे चूहे की तरह हो रही थी, मेरी आँखों के सामने मृत्यु स्पष्ट दिखाई दे रही थी, उस समय बातावरण ही ऐसा बन गया था । मैंने एक क्षण के लिए आपके चरणों का स्मरण किया और दूसरे ही क्षण में जप प्रारम्भ कर दिया ।

मेरा पुन मन्त्र जप प्रारम्भ करना था कि उसने अपने दाहिने हाथ से मेरे गले को पकड़ लिया और इतनी जोर से दबाने लगी कि गले की नसें फूल गईं और आँखें बाहर को निकलने लगीं, पूरा शरीर पसीने-पसीने हो गया, मेरे मुह में घरघराहट की आवाज ही निकल रही थी, मन्त्र जप सम्भवत वन्द हो गया था ।

कुछ क्षणों बाद उसने हाथ हटा दिया तो मैंने पुन मन्त्र जप प्रारम्भ कर दिया, पूरी रात इसी प्रकार चलता रहा । कभी उमने मेरे बान खीचे, कभी छाती पर लात मारी, कभी मेरा गला दबाया, पर फिर भी मैं अपने ऊपर नियत्रण रखता हुआ मन्त्र जप करता रहा ।

यह रात्रि मेरे लिए अत्यन्त भीषण और कष्टदायक थी । आपका ही प्रभाव और कृपा थी कि मैं इस रात्रि को बच सका और जिन्दा रह सका, अन्यथा मैं हर क्षण मरा था और हर दूसरे क्षण जिन्दा हो रहा था ।

प्रात मुझे बुखार हो गया था और दिन भर एक सौ तीन डिग्री बुखार रहा, उस दिन मैं भली प्रकार से दूध भी न पी सका और दिन भर दुरे-दुरे विचार आते रहे, शरीर पसीने-पसीने होता रहा, आने वाली रात्रि की बाद करके ही मेरे प्राण सूख गए थे, एक बार तो मैंने साधना स्थगित करने का ही निश्चय कर लिया था, पर उसी समय कुछ ऐसा लगा जैसे कि आप कह रहे हैं कि घबराओ मत, साधना चालू रखो, मैं तुम्हारे साथ सहायक के रूप में उपस्थित रहूँगा ।

रात्रि को बुखार में ही मैंने स्नान किया और आसन पर जाकर बैठ गया, विनियोग करके मन्त्र जप प्रारम्भ किया, रात्रि के एक बजे तक कुछ नहीं हुआ, लगभग डेढ बजे के आस-पास एक अत्यन्त सुन्दर म्ब्री मुझे दिखाई दी, जिमने पैरों में सोने के पाजेव पहने हुए थे और पूरे शरीर पर पीले रंग के वस्त्र तथा सोने के गहने लदे हुए थे, उम्र लगभग बीस-वाईस वर्ष के आसपास थी । वह अत्यन्त सुन्दर और मादक दिखाई दे रही थी, यह आकर मेरे पास धीरे से बैठ गई ।

मैं मन्त्र जप करता रहा, लगभग पाच बजे मैंने मन्त्र जप पूरा किया । तब तक वह मेरे पास इसी प्रकार बैठी रही और अपनी मोहक मुस्कान के साथ मुझे ताकती रही । मुझे कुछ ऐसा लग रहा था कि इन्द्र लोक की अप्मरा मेरे पास बैठी हो और मुझ पर मुग्ध हो ।

जब मैंने मन्त्र जप समाप्त किया और उठने लगा तो वह धीरे से बोली—‘एक

क्षण के लिए रुकिए, क्या आप मुझे से बात नहीं करेंगे ?'

मैं चुप रहा तो उसने किर कहा—‘मैं ‘वगला’ हूँ आपने मुझे क्यों दुलाया है?’

आपकी आज्ञानुसार जब उसने ऐसा कहा तो मैंने उसके सामने ध्यान दिया और निवेदन किया कि यदि आप प्रसन्न हैं तो मुझे शत्रुस्तम्भन तथा ऐश्वर्यवृद्धि वरदान दें और हर क्षण मेरे लिए सहायक रहे ।

उसने कहा—‘मैं तुमसे प्रसन्न हूँ आज के बाद मैं हर क्षण तुम्हारी रक्षा करूँगी और प्रत्येक विपत्ति में पूर्वं तुम्हें सूचित कर दूँगी और उस विपत्ति से बचा-ऊँगी, साथ ही मुझे समरण कर यदि तुम किसी से बातचीत करेगे या शास्त्रार्थ करेगे तो मैं सामने बाले व्यक्ति की जीभ कीलन कर दूँगी जिससे कि तुम विजयी रह सको ।’

मैंने श्रद्धा से उन्हे प्रणाम किया तो उसने ‘एवमस्तु’ कहा तथा गजगामिनी गति से कक्ष से बाहर निकल गई । उसके निकलने के बाद भी मैं मन्त्र-मुग्ध सा बैठा रहा, उसके शरीर की सुगन्ध से पूरा कमरा अपूर्व सुभापित था ।

मैं लगभग एक घण्टे तक अनिवार्यी आनन्द में निमग्न रहा । ज्योही मैं चैतन्य हुआ त्योही मैं कक्ष से बाहर आया और दूसरे कक्ष में लगे हुए आपके चित्र के सामने प्रणीपात हो गया, मेरी आखो से आसुओ की धार वह निकली, सफलता की वजह से मेरा सारा शरीर पुलकित हो रहा था और मन में एक अपूर्व सी शान्ति अनुभव कर रहा था ।

इस अनुष्टान को सम्पन्न हुए तीन महीने बीत गए हैं, आपने मुझे आज्ञा दी थी कि अनुष्टान सम्पन्न होने के तीन महीने बाद पत्र लिखना, अत आपकी आज्ञा शिरोधार्य करता हुआ वह पत्र आपको भेज रहा हूँ ।

इन तीन महीनों में मुझे आश्चर्यजनक उपलब्धिया प्राप्त हुई है । साधना सम्पन्न होने के एक महीने बाद ही अप्रत्याशित रूप से मेरा प्रमोशन हो गया और यही पर मेरी नियुक्ति भी हो गई । आर्थिक दृष्टि से मुझे विशेष लाभ हुआ है और मेरा पुत्र जो व्यापार कर रहा था उसमें अद्वितीय सफलता मिल रही है, सबसे बड़ी बात यह हुई कि मेरे ऊपर तीन मुकदमे चल रहे थे जो शत्रुओं ने ईर्ष्याविश मुझ पर लगा रखे थे, साधना सम्पन्न होने के दो महीनों के भीतर-भीतर उन शत्रुओं ने समझौता करने का निश्चय किया है और उन्होंने कहा कि मैं भी समझौता कर लूँ, मेरी शर्तों पर वे समझौता करने को तैयार थे, अत समझौता हो गया और मैं पूर्ण रूप से इनमें विजयी रहा ।

अब मैं किसी उच्च अधिकारी से मिलता हूँ तो उससे पूर्व इस मन्त्र का एक बार उच्चारण कर उसके सामने जब जाता हूँ तो वह मेरे सामने हक्कलाने लग जाता है और बात मान लेता है ।

एक आश्चर्यजनक बात पिछले सप्ताह यह हुई कि मेरे नगर में एक धर्मशास्त्री आए थे, वे निर्गुणबाद के समर्थक थे । उनकी प्रशस्ता मैंने काफी सुनी थी अत कुछ

मित्रो के साथ मैं उनके दर्शन के लिए चला गया, उस समय लगभग चार-पाँच हजार व्यक्ति बैठे हुए थे, पता नहीं क्यों मेरे मन मे उनसे तर्क करने की भावना आई और मैंने उनसे निर्गुणवाद के विरुद्ध सगुण उपासना की महता सिद्ध करने की बात रखी। मैंने पांच बार इस मन्त्र का जप किया और आश्चर्य की बात यह थी कि मैं ऐसे-ऐसे तर्क देता गया जिसका भान मुझे पहले कभी नहीं था। लगभग आधे घण्टे तक वाद-विवाद रहा और मैं बराबर अपने पक्ष के तर्क देता रहा। आश्चर्य की बात यह है कि उन स्वामीजी ने अपनी गलती और पराजय सबके सामने स्वीकार कर ली। लोगों ने मुझे आश्चर्य से देखा, मेरे मित्रों ने कहा कि मैं इस प्रकार से तर्क कर रहा था जैसे कि मैंने जीवन भर शास्त्रार्थ किया हो और अत्यन्त उच्चकोटि का विद्वान् होऊँ।

मुझे कुछ ऐसा लगा कि सामने वाले स्वामीजी की जीव कीलन हो गई थी और वे जो कुछ कहना चाहते थे चाहकर भी नहीं कह पा रहे थे।

आपकी आज्ञानुसार यह पत्र लिख रहा हूँ। मैंने जिस प्रकार से साधना की, और जो कुछ अनुभूति हुई वह इस पत्र के द्वारा व्यवत कर दी है आपही देखें कि मैं सफल हो सका हूँ या नहीं।

यदि मैं सफल हो सका हूँ तो इसके मूल मे आपकी ही प्रेरणा रही है। आपकी कृपा से ही मैं सफलता प्राप्त कर सका हूँ, इसके लिए मैं और मेरा परिवार आपके प्रति कृतज्ञ और चिर कृणी हैं।

मुझे एक बार पुन आपके चरणो मे आने की आज्ञा दें, मेरा पूरा परिवार आपके दर्शन करने के लिए व्याकुल है।

दर्शनाभिलाषी,  
गिरधर द्विवेदी

## तारा साधना

परम पूज्य गुरुजी ।

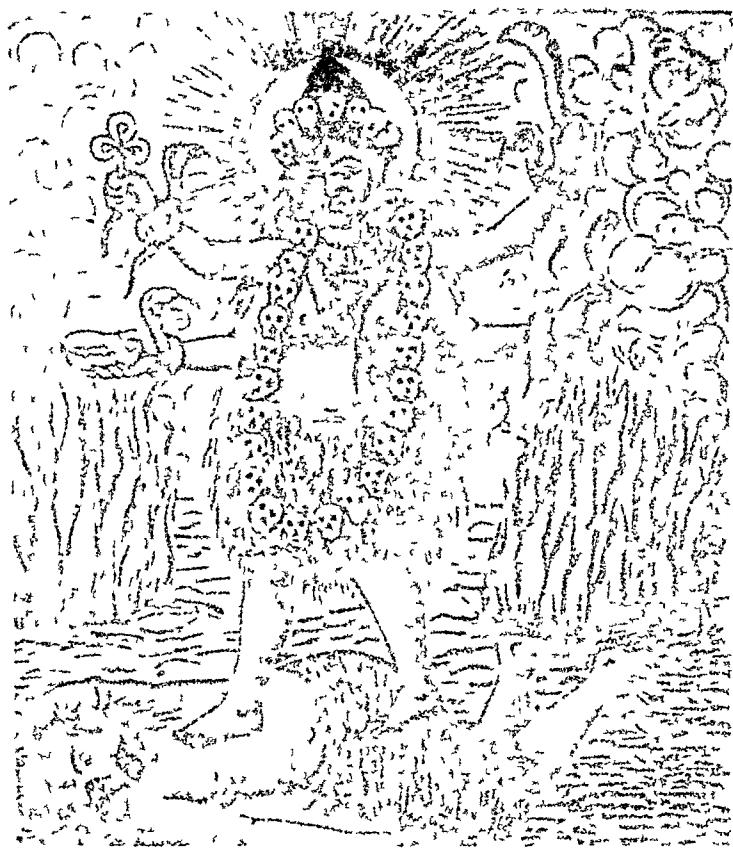
सादर साष्टाग प्रणाम ।

आपके आदेश से मैं चला तो आया था, परन्तु पिछले चार महीनों से मैं आपके चरणों को एक क्षण के लिए भी भुला नहीं पाया हूँ। आपने मुझे आदेश दिया था कि मैं अपने मन को समित रखूँ और प्रयत्न करूँ कि मेरा चित्त इस विन्दु पर स्थिर हो सके। यद्यपि आपकी आज्ञानुसार मैंने आपके बताये हुए त्राटक से चित्त को एकाग्र करने का प्रयत्न किया है और मुझे उसमें सफलता भी मिली है, अब मेरा मन पूर्णत शान्त रहता है, शान्ति-सी अनुभव होती है, पहले मेरा मस्तिष्क भटकता रहता था और जब मैं आखें बन्द कर ध्यान लगाने की कोशिश करता, तब मस्तिष्क नियन्त्रण में नहीं रह पाता था। मेरी आखें अवश्य बन्द रहती परन्तु मेरा मन धूमता रहता और विचार स्थिर नहीं रह पाते थे, परन्तु अब इस त्राटक के माध्यम से मुझे आश्चर्य-जनक सफलता मिली है, मैं विचारों के प्रवाह को रोकने में सफल हो पाता हूँ, मेरा मन जो उद्घिन और अशात रहता था अब स्थिर और शान्त रहने लगा है। मैं एक आश्चर्यजनक शान्ति अपने मन में अनुभव करता हूँ, मैं आपका ऋणी हूँ और आपने कृपापूर्वक जो कुछ मुझे दिया है उसके लिए मैं जीवन भर कृणी रहूँगा।

मैं अपने विचारों को केन्द्रित करने में सफल जरूर हुआ हूँ और अब मैं ध्यान लगाता हूँ तो और कोई अन्य विचार मन में नहीं आता, परन्तु कई बार ध्यान लगाते ही आपका चित्र सामने आ जाता है, ऐसा लगता है कि आप सशरीर मेरे सामने खड़े हैं और आपका वरदहस्त मेरे सिर पर है। ऐसा दृश्य देखते ही मेरा पूरा शरीर पुलकित हो उठता है तुरन्त समाधि टूट जाती है तथा आख खुल जाती है, उस समय आप दिखाई नहीं देते, आप कल्पना कर सकते हैं कि आपको सामने न पाकर मुझे कितनी अधिक वेदना होती है, इसको मैं शब्दों में व्यक्त नहीं कर पा रहा हूँ। मैं जो कुछ लिख रहा हूँ वास्तविकता लिख रहा हूँ आप समर्थ हैं, सर्वज्ञ हैं, त्रिकालज्ञ हैं, आप स्वयं मेरे इस कथन को परख सकते हैं।

मैं और कुछ नहीं चाहता केवल आपके चरणों में कुछ समय और रहना चाहता हूँ। आपकी आज्ञा मेरे लिए सर्वोंपरि है, फिर भी मैं आपका बालक हूँ इस

लिए बाल हठ स्वाभाविक है और इसी हठ का आश्रय लेते हुए मैं आपसे निवेदन कर रहा हूँ कि आप कुछ समय के लिए ही सही, एक बार पुन अपनी शरण में आने दें और कुछ समय आपके चरणों में बैठने का अवसर दें।



### तारा देवी

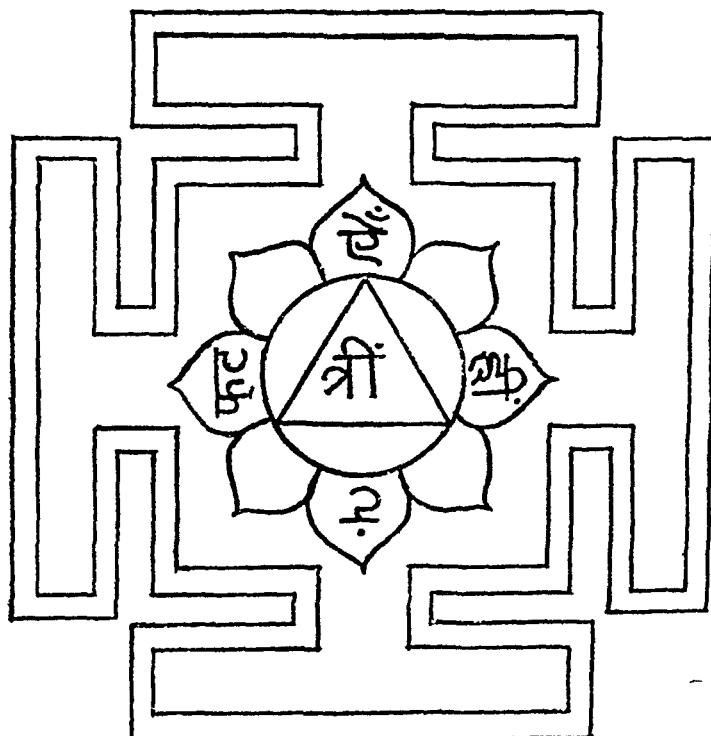
आपने जो कृपापूर्वक जो तारा साधना सिखाई थी वह मैंने यहाँ आकर सम्पन्न की। इस साधना में जो कुछ उपलब्ध हुआ वह सब मैं आपके सामने इस पत्र के माध्यम से रख देना चाहता हूँ जिससे कि आप जान सकें कि मैं सफल हो सका हूँ या नहीं? साथ ही आप मुझे भागदर्शन दें कि अब मैं आगे इस सम्बन्ध में क्या करूँ।

आपने बताया था कि किसी भी महीने के शुक्ल पक्ष के प्रथम गुरुवार से यह

साधना प्रारम्भ की जा सकती है और इसका समय रात्रि के ६ बजे से ३ बजे के बीच रहता है।

आपके यहां से मैं बहुत दुखी और व्यथित हृदय से रवाना हुआ था, आपकी आङ्ग शुश्रे आगे ठेल रही थी और मेरे पैर आगे बढ़ने के लिए जड़ से हो रहे थे, फिर भी आपकी आङ्ग आङ्ग ही थी, अत मैं उसी दिन दोपहर को गाड़ी में बैठकर अपने घर आ गया।

मेरे घर की छत पर एक छोटा-सा कमरा है अत आपकी आङ्गनुसार मैंने उस कमरे की दीवारें तथा छत गुलाबी रंग से पुतवा दी थी, इसके बाद कमरे को शुद्ध जल से धोकर यथासम्भव पवित्र बना दिया था।



तारा यंत्र

कमरे मे लकड़ी का दो फुट लम्बा और दो फुट चौड़ा तस्ता रख दिया था जो कि जमीन से छ इच्छा था, उस पर गुलाबी कपड़ा बिछा दिया था और उसके सामने गुलाबी रंग का ही आसन बिछा दिया था जो कि सूती था, आसन को इस प्रकार से बिछाया था जिससे कि मेरा मुह उत्तर की ओर हो गया था, मेरे सामने ही लकड़ी का तस्ता था।

आपकी आज्ञानुसार मैंने आधा किलो चावल पहले से ही गुलाबी रग में रग कर सुखा दिए थे और इसी प्रकार रई को भी गुलाबी रग से रग सुखा दी थी, इसके बाद जब चावल सूख गए तब उससे उस तब्जे पर चावलों से अष्टदल बनाया और उसके मध्य में एक मोटा मिट्टी का दीपक रख दिया, जिसमें शुद्ध धी भरा हुआ था, दीपक में गुलाबी रग से रगी रई की बाट बनाकर रख दी थी।

अष्ट दल के सामने चावल की सात छोटी-छोटी ढेरिया बना दी थी और प्रत्येक ढेरी पर एक सुपारी और एक कपूर की टिकिया रख दी थी, गधक को पीस उसकी ढेरी बनाकर उसके ऊपर दीपक को रख दिया था। दीपक के सामने सात पतासे भी रख दिये थे और सातों ढेरियों पर एक-एक लौंग और इलायची भी रख दी थी।

तब्जे पर एक किनारे पर कलश भी रख दिया था जिसे पहले से ही गुलाबी रग से रग दिया था। उसमें गुलाबी जल भर दिया था। इस कलश में आधा किलो के लगभग पानी भर जाता था, कमरे में मैंने जो बल्ब लगा रखा था उसे भी गुलाबी रग से रग दिया था। कमरे के फर्श को भी मैंने गुलाबी रग से रग दिया था।

शुक्र पक्ष के प्रथम गुरुवार को रात्रि के बाठ बजे मैं छत पर गया, स्नान किया, इसके बाद मैंने अपना यज्ञोपवीत बदल दिया जो नया यज्ञोपवीत मैंने धारण किया वह गुलाबी रग से रगा हुआ था। फिर पहले से ही गुलाबी रग से रगी धोती पहल ली, नीचे कच्छा नहीं पहना था। ऊपर बनियान भी नहीं पहनी थी, केवल एक गुलाबी रग से रगी धोती को तह करके ओढ़ ली थी।

ठीक नी बजे मैं आसन पर बैठ गया जो कि पहले से ही विछा हुआ था। इस प्रकार मेरा मुह ऊपर की तरफ हो गया और मेरे सामने तब्जा विछा हुआ था। कमरे के दरवाजे को मैंने बन्द कर दिया था पर अन्दर से चिटकनी या साकल नहीं लगाई थी केवल किवाडों को उड़का दिया था।

सर्वप्रथम मैंने उस कलश के पानी से अपने दोनों हाथ धोये और तीन बार आचमन, प्राणायाम किया तथा दाहिने हाथ में जल लेकर सकल्प किया कि आज से चौदह दिन तक नित्य १०१ तारा मन्त्र की माला फेरूगा। यह कार्य नित्य रात्रि के नी बजे आरम्भ कर दूगा और जब १०१ मालायें समाप्त होंगी तभी मैं माला को तब्जे पर रखकर इसी आसन पर सो जाऊगा। दिन में एक समय भोजन करूगा दिन को नीद नहीं लूगा। खाट पर नहीं सोऊगा, न नौकरी पर या व्यापार के काम से कहीं जाऊगा और न असत्य बोलूगा। इसके साथ ही-साथ मैं इस अनुष्ठान के दीरान किसी प्रकार का लेनदेन या व्यापारिक कार्य भी नहीं करूगा तथा पूर्ण ब्रह्मचर्य के साथ रहूगा। यह अनुष्ठान मैं तारा महाविद्या को सिद्ध करने के लिए कर रहा हूँ।

इसके बाद मैंने सुखासन में बैठे अपनी कमर को सीधी रखकर स्थिर हृष्टि में देखता हुआ तारा मन्त्र का जप आरम्भ किया, मेरे मुह से बहुत ही धीमे-धीमे केवल

होठों-हीं-होठों में मन्त्र की ध्वनि हो रही थी, आपने मुङ्गे निम्न मत्र बताया था जिसे मैंने निरन्तर जप किया था और नित्य १०१ मालायें पूरी की थी। एक माला में १०८ मनके थे और मैंने खदाक की माला का प्रयोग किया था, मन्त्र—‘ओम् तारा तूरी स्वाहा’ का जप निरन्तर कर रहा था।

पहले दिन लगभग चार बजे मैं जप कार्य से निवृत्त हुआ और फिर मैं उसी आसन पर लेट गया, लेटते ही मुङ्गे नीद आ गई, जप को आरम्भ करने से पूर्व मैंने दीपक जला लिया था। जब मैं लेट गया था उसके बाद ही दीपक अपने आप तेल समाप्त होने पर बुझ गया था। मैंने अनुमान से तेल इतना डाल दिया था जिससे कि सुबह ६ बजे तक दीपक जलता रह सके।

इस प्रकार लगभग दस दिन बीत गए, किसी प्रकार की कोई समस्या नहीं आई, अनुष्ठान निविद्ध चल रहा था, परन्तु ग्यारहवें दिन मैं नियमानुसार नौ बजे जप आरम्भ करने वैठा तो ऐसा लगा जैसे मेरे पास मे से कोई निकल गया हो। एक सरसराहट-सी अनुभव हुई, मेरा शरीर अचानक रोमान्चित-सा हो गया, फिर भी मैं आसन पर वैठा रहा और मन्त्र का जाप करता रहा, परन्तु रात बारह बजे के लगभग एक जोरों का पत्थर किवाड़ से टकराया और बड़े जोर की ध्वनि हुई। मैं वैठा-वैठा हिल गया। मैंने अनुभव किया कि पत्थर की चोट से किवाड़ खुल गया है, इसके बाद तीन-चार और पत्थर जोरों से आकर किवाड़ से टकराये, एक क्षण के लिए मेरे मन मे विचार आया कि यदि इतनी जोर का पत्थर मेरे सिर मे आकर लग गया तो निश्चय ही मैं समाप्त हो जाऊगा, क्योंकि किवाड़ तो खुल ही गया है, परन्तु मैंने तुरन्त अपने विचारों को रोका और पूर्ण मानसिक रूप से जप को करता रहा, उस रात्रि को सुबह चार बजे तक पत्थर आ-आकर किवाड़ से टकराते रहे और कमरे मे भी पत्थर आये जिसके निशान कमरे के अन्दर सामने की दीवार पर लगे दिखाई दे रहे थे।

प्रात चार बजे के बाद जप समाप्त कर जब मैं सो गया तब पत्थर आने वन्द हुए, सुबह उठकर जब मैं कमरे से बाहर आया तो लगभग साठ-सत्तर पत्थर किवाड़ के पास पड़े थे और आठ-दस पत्थर कमरे के अन्दर भी आ गये थे, परन्तु किवाड़ पर किसी प्रकार का कोई चिह्न या पत्थर की चोट दिखाई नहीं दी। मैंने नीचे अपनी पल्टी और बड़े पुत्र जो पूछा तो उन्होंने भी उत्तर दिया कि रात को हमने किसी प्रकार की कोई आवाज नहीं सुनी। मैं आश्चर्यचकित था क्योंकि जब भी पत्थर किवाड़ से आकर टकराता तो मुङ्गे ऐसा सुनाई पड़ता जैसे पास मे ही कोई छोटा-मोटा बम फट गया हो।

बारहवें दिन रात्रि को मैं पुनः सावना कार्य मे वैठा तो रात्रि के लगभग ग्यारह बजे मुझ जोरों से प्यास लगी। इससे पहले ऐसी तीव्र प्यास कभी नहीं लगी थी! आपने निर्देश दिया था कि जप प्रारम्भ करने के बाद और जब तक उस दिन का जप समाप्त न हो जाए तब तक आसन से हिलना भी नहीं चाहिए, चाहे प्यास लगे या लघु-

ग्राका हो, आपकी आज्ञा मुझे स्मरण थी, परन्तु उस दिन प्यास इतनी जोरें से लग रही थी कि मुझे ऐसा अनुभव हो रहा था कि यदि मैंने पानी नहीं पिया तो मैं प्यासा ही समाप्त हो जाऊँगा, पर फिर भी मैं आसन पर बैठा रहा, रात्रि को दो बजे मुझे जोरों से बुखार-सा अनुभव हुआ। ऐसा लग रहा था जैसे एक सौ पाच डिग्री बुखार आ गया हो, पर बुखार की अवस्था में भी मैंने अपने आप पर नियन्त्रण बनाये रखा और एक सौ एक मालाएं पूरी करके ही सोया। सुबह जब उठा तो मेरा सिर भारी था और चक्कर गा रहे थे।

तेरहवें दिन की रात्रि को जब मैं साधना में बैठा तो कोई विशेष घटना घटित नहीं हुई, पर एक बजे के लगभग घोरों से घुघरूओं की आवाज सुनाई दी, ऐसा लग रहा था जैसे पास में ही मोटे-मोटे घुघरू बज रहे हों, और कोई घम-घम करता भेरे कमरे में आ रहा है, उसके एक क्षण बाद ही जो दृश्य मैंने देखा तो भेरे मुह से चीख-सी निकल गई। भेरे सामने एक विशालकाय डाकिन की तरह स्त्री खड़ी थी जिसके लम्बे वाल विखरे हुए थे, बड़ी-बड़ी लाल आँखें, मुह से बाहर लम्बे-लम्बे दात निकले हुए और पूरा शरीर भयानक दिखाई दे रहा था। उसके हाथ में ताजा कटा हुआ सिर था जिसमें से खून निकल रहा था और वह दूसरे हाथ से उस खून को ले लेकर चाट रही थी, कमर पर मोटे-मोटे घुघरू वधे हुए थे, और चलने से आवाज आ रही थी। वह आते ही भेरे सामने खड़ी हो गई। मैं उस दृश्य को आज भी कहते हुए रोमांचित हो रहा हूँ और भय की एक लहर-सी आज भी पूरे शरीर में दौड़ जाती है, उसके नाखून बढ़े हुए थे और पूरे शरीर पर लम्बे-लम्बे वाल थे। उसने आते ही भेरे सीने पर पाव रखा और कहा कि आज मुझे तेरा खून भी पीना है, और इतना कह कर वह इस ग्रकार से हसी कि जैसे श्मशान में हड्डिया आपस में टकरा रही हो। उसके शरीर से दुर्गन्ध-सी निकल रही थी, जिसे सहन करता कठिन हो रहा था।

यह आपके चरणों की ही कृपा थी कि मैं ऐसी भयानक स्थिति में भी अपने आपको नियन्त्रण में रख सका। यदि मैंने ब्राटक का अभ्यास न किया होता तो उस समय मैं निश्चय ही वेहोश हो जाता। मैंने फिर भी अपना जप कार्य चालू रखा। वह प्रात चार बजे तक मेरे सीने पर पावों से चोट करती रही और मुझे कुछ ऐसा लग रहा था कि वह भेरे शरीर से मास नोच-नोच कर स्वादपूर्वक खा रही है। मैं स्वयं अपने शरीर के उघड़े हुए चमड़े को अनुभव कर रहा था और जब वह शरीर से मास नोचती तो भयानक वेदना का अनुभव होता। चार बजे जब मैंने एक सौ एक की माला पूरी की, उस समय तक मैं लगभग वेहोश हो चुका था। बड़ी कठिनाई से मैं अपने आपको होश में रखे हुए था और भव का जप चालू था। उसके बाद मैं वही पर लुढ़क गया। जब मेरी आख खुली तब प्रात के आठ बजे थे। मैं एकदम से हड्डवड़ा कर उठ बैठा, मेरा शरीर पसीने-पसीने हो रहा था, मैंने अपने शरीर पर नजर डाली तो कहीं से भी मास नुचा हुआ नहीं दिखाई दिया, मेरे मुह से खुशी की चीख निकलते-निकलते रह गई और मुझे पहली बार अतीव आनन्द हुआ कि मेरा शरीर स्वस्थ है,

और कही से भी चमड़ी फटी हुई या मास नोचा हुआ नहीं है।

दिन भर मुझे हल्का-सा बुखार रहा और भयभीत-सा पड़ा रहा। रात्रि को मैंने जो दृश्य देखा था उसको स्मरण करते ही पूरा शरीर थरथरा उठता था।

चौदहवें दिन की रात्रि को मैं हिम्मत कर स्नान कर पुन अपने आसन पर बैठ गया, दीपक जलाया और जप कार्य प्रारम्भ कर दिया। रात्रि को लगभग तीन बजे एक अजीव सुन्दरी मेरे पास आकर खड़ी हुई, जिसने गुलाबी कचुकी और गुलाबी ओढ़ना ओढ़ रखा था, उसके पूरे शरीर से एक अदृश्य सी मादक सुगन्ध आ रही थी, वह मेरे पास आकर घुटने से घुटना गिलाकर बैठ गई। उसकी श्वास मेरे कन्धे से टकरा रही थी। मैंने एक क्षण के लिए उस तरफ ताका तो मुझे ऐसा लगा जैसे ससार की सबसे सुन्दर स्त्री मेरे पास बैठी हुई है। उन्होंने लगभग अठारह से बीस वर्ष के बीच थी, माग में सिन्धूर भरा हुआ था और वह पूरे शरीर पर गहने-पहने हुई थी। वह चुपचाप मेरे पास आकर बैठ गई और मेरी ओर मुस्कराहट के साथ ताकने लगी।

एक बार तो मैं मत्र भूल-सा गया, परन्तु तुरन्त मैंने अपने मन पर नियन्त्रण किया और अपनी आखों सामने दीवार पर स्थिर कर जप कार्य चालू रखा।

उसने एक दो बार कुछ प्रश्न भी किये परन्तु मैंने कोई उत्तर नहीं दिया और अपने जप को चालू रखा। मैंने अनुभव किया कि उसने अपना सिर मेरे कन्धे से लगा दिया है और उसकी मादक मस्त सुगन्ध मेरे पूरे शरीर में बिजली दौड़ा रही है।

लगभग चार बजे मैंने जप कार्य पूरा किया। तब तक वह इसी प्रकार मेरी कमर में हाथ ढालकर कन्धे पर सिर टिकाकर बैठी रही। जप कार्य समाप्त कर ज्योही मैं लेटा वह भी मेरे पास लेट गई। मैं तुरन्त उठकर बैठ गया, तो वह आखों से कटाक्ष करती मुस्कराती हुई मेरे पास ही बैठ गई।

एक क्षण के बाद उसने पूछा कि तुमने मुझे बुलाया इसलिए मैं आ गई। आपने मुझे क्यों बुलाया है?

मैंने कहा कि आपको इसलिए बुलाया है कि मेरे जीवन में आप सहायक बनी रहे।

उसने पूछा कि मैं मा के रूप में सहायक रहूँ या प्रेमिका के रूप में?

मैंने उत्तर दिया कि मा के रूप में मैं आपसे कुछ भी प्राप्त नहीं कर पाऊगा। मैं आपको प्रेयसी रूप में ही प्राप्त करना चाहता हूँ। पर उसमे किसी भी प्रकार की वासना न हो।

वह मुस्करा दी, वास्तव में ही वह अत्यन्त सुन्दर थी। इतनी सुन्दर स्त्री इससे पूर्व मैंने अपने जीवन में नहीं देखी थी। उसकी मुस्कराहट मे एक अजीव-सा आकर्षण था जो कठोर-से-कठोर साधक को भी गुमराह कर सकता है।

उसने कहा मैं प्रेयसी के रूप में रहने को तैयार हूँ पर क्या तुम मुझे सन्तुष्ट कर सकोगे?

मैंने उत्तर दिया कि वासनात्मक रूप से आपका मेरा सम्बन्ध नहीं रह सकता।

आपकी मैंने साधना की है आप प्रेयसी रूप में मुझे नित्य धनराशि प्रदान करें जिससे कि मैं अपने जीवन को सुखपूर्वक व्यतीत कर सकूँ ।

उसने कहा मैं प्रसन्न हूँ और तुम प्रेमी हो अत तुमने जो कुछ भी मागा है, मैं उसे पूरा करूँगी, और ऐसा कहती हुई वह मन्द गति से मुस्कराती हुई कमरे से बाहर निकल गई । इससे पूर्व उसने दोनों हाथों से मेरे शरीर को पकड़कर भीच-लिया था, फिर भी मैंने अपने आप पर नियन्त्रण बनाये रखा ।

वह चली गई, परन्तु मैं घटे भर तक सो नहीं सका । उस कमरे में उसके शरीर से निकलने वाली सुगन्ध व्याप्त रही । मैं उसके बारे में ही चिन्तन करता रहा । यह चिन्तन मैं लेटे-लेटे कर रहा था, तभी दीपक तेल न होने के कारण बुझ गया और मुझे नीद आ गई ।

सुबह सात बजे मेरी आख खुली तो मैं उठ बैठा । कमरे में मेरे अलावा और कोई नहीं था, परन्तु जहा म नोया था वहा सिर के नीचे सोने का टुकड़ा पड़ा था जो कि लगभग दो तोला वजन का था ।

मैंने उस टुकड़े को उठा लिया और नीचे आ गया । इस घटना की चर्चा घर में किसी से नहीं की । स्नान बगैर करके मैं दोपहर को एक सर्फ के यहा गया और वह सोने का टुकड़ा उसके सामने रख दिया । उसने जाच कर कहा कि सोना पूर्ण असली है और दो तोला वजन में है । क्या आपको बेचना है ?

मैंने स्वीकृति दी और उसने दो तोला सोने की रकम मुझे थमा दी । मैं घर चला आया ।

इसके बाद वह सुन्दरी मुझे पुन दिखाई नहीं दी, पर अब मैं नित्य नीचे कमरे में अपने पलग पर नोता हूँ तो प्रात सिरहाने मुझे नित्य दो तोला सोने का टुकड़ा निल जाता है, ऐसा नियमित रूप से हो रहा है ।

मैं नहीं समझता कि मैं अपने कार्य में सफल हुआ हूँ या नहीं, परन्तु मुझे आन्तरिक प्रसन्नता अवश्य है और उस सोने के टुकड़े को मैं पाच-छ दिनों के बाद जितने टुकड़े इकट्ठे होते हैं उन्हें ले जाकर बाजार में बेच देता हूँ, आपकी कृपा से मेरा सारा कर्जा उत्तर गया है और आर्थिक दृष्टि से बहुत ही ज्यादा अनुकूलता अनुभव कर रहा हूँ ।

मुझे ऐसा लग रहा है कि मेरी 'तारा साधना' सफल हुई है जिसके परिणाम-स्वरूप मुझे आर्थिक लाभ हो रहा है । आपने मुझे बताया था कि जीवन भर इसी प्रकार से आर्थिक लाभ होता रहेगा, इसके लिए मैं आपका अत्यधिक आभारी हूँ ।

मैं इस बार पुन जल्दी-से-जल्दी आपके चरणों में आना चाहता हूँ और आपके दर्शन से अपने आपको धन्य करना चाहता हूँ । मुझे विश्वास है कि आपकी तरफ से शोध्र ही स्वीकृति प्राप्त होगी ।

आपका चरण रज,  
(वामुदेव शर्मा)

## कर्ण पिशाचिनी साधना

परम पूज्य स्वामी जो,

सादर चरण स्पर्श ।

आज, पत्र लिखते हुए मुझे अत्यन्त प्रसन्नता हो रही है कि मैंने आपकी आज्ञा का अक्षरश पालन किया, जिसके फलस्वरूप मैं अपनी उस इच्छा को पूरी कर सका जो कि मेरे मन में कई वर्षों से थी ।

मैं गृहस्थ नहीं हूँ और न जीवन में गृहस्थी बसाने की इच्छा ही रही । मेरा एक ही छ्येय था कि मैं काल ज्ञान के बारे में साधना करूँ, मैंने कहीं से यह सुना था कि ‘कर्ण पिशाचिनी सिद्धि’ से काल ज्ञान हो सकता है, जब मुझे यह ज्ञात हुआ तो मैं साधुओं और सन्यासियों के सम्पर्क में आने लगा । मेरा प्रयत्न शुरू से इस साधना को सीखने का था, परन्तु मुझे कोई ऐसा साधु नहीं मिला जो कि मुझे इस प्रकार का ज्ञान दे सके ।

मैंने मन में यह निश्चय कर लिया था कि यदि जिन्दा रहा तो इस ज्ञान को कही-न-कही से अवश्य ही सीखूगा, परन्तु इसके लिये मैं जितना ही अधीर होता उतनी ही ज्यादा परेशानी मिलती । मैं मूलत ज्योतिषी रहा और ज्योतिष के माध्यम से ही अपना जीविकोपार्जन करता था, परन्तु मुझसे लोग प्रभावित नहीं होते थे, क्योंकि मैं उनके भूतकाल के बारे में कुछ भी बताने में समर्थ नहीं था और भविष्य बताता तो उन्हें विश्वास नहीं होता था, इस प्रकार मैं एक असफल ज्योतिषी बनकर रह गया था ।

तभी मुझे एक साधु से आपके बारे में जानकारी मिली और मैंने आपके पास आने के लिये पत्र लिखा, परन्तु जब मैंने पत्र में इस प्रकार की साधना सीखने की इच्छा प्रकट की तो आपने मुझे अपने सचिव के द्वारा मना लिखवा दिया, इससे मैं निराश अवश्य हुआ, परन्तु उस साधु ने यह कहा था कि यदि तुम बरावर प्रयत्नशील बने रहोगे तो आपका द्वद्य अवश्य पसीज जायेगा, और आप यह साधना सिखा देंगे ।

सभवत आपको स्मरण होगा कि जब मैं विना आपकी अनुमति लिये आपके द्वार पर आया तो आपने विना मेरा प्रश्न सुने ही कहलवा दिया कि मैं इस प्रकार की साधना नहीं सिखाता ।

आपके नौकर के द्वारा जब यह ज्ञात हुआ तो मैं आश्चर्यचकित रह गया कि

जब मैं श्रीमाली जी से मिला ही नहीं हूँ तो उन्हें मेरे बारे में कैसे पता चल गया कि मैं कौन हूँ और किस उद्देश्य से यहा आया हूँ। आपने स्पष्ट कहलवाया था कि मैं इस प्रकार की कर्ण पिशाचिनी जैसी वाममार्गी साधना नहीं सिखाता।

मैं निराश होकर धर्मशाला लौट आया, नित्य आपके द्वार पर आता और नित्य मुझे ऐसा ही जवाब सुनने को मिलता, मुझे याद है कि सोलहवें दिन आपसे भेंट हो सकी तो आपने मेरा नाम लेकर कहा कि व्यर्थ मेरे यहा सभय वरवाद कर रहे हों, मैंने वाममार्गी साधना सिखाना बन्द कर दिया है और तुम्हारी इच्छा कर्ण पिशाचिनी के अलावा और कोई साधना सीखने की नहीं है, इसलिये मैं तुम्हें यह साधना नहीं सिखा सकूँगा।

मेरी आखो मेरे आसू आ गये थे। मैंने अपनी व्यथा आपके सामने रख दी थी, कि मैं किस प्रकार एक सामान्य ज्योतिषी बनकर शूखा भर रहा हूँ, लोगों का मुझ पर विश्वास ही नहीं रहा है और नाह्यण युवक होते हुए भी मैं भिखारीवत् जीवन व्यतीत कर रहा हूँ।

जहाँ तक मैं समझता हूँ 'नाह्यण' शब्द को सुनकर आपका झुकाव किंचित् मेरी तरफ हुआ, पर फिर भी आपने मुझे टरकाना ही चाहा और इस उद्देश्य से आपने मुझे कहा कि आज की रात शमशान मेरी विताकर आओ तो कल बात करूँगा। आपने यह सोच लिया था कि न तो मैं सारी रात शमशान मेरी रह सकूँगा और न आपको इस सब्द मेरे बाध्य कर सकूँगा।

पर मेरे भस्तिष्ठक मेरी तो एक ही धून थी कि मैं इसी साधना को सीखूँगा, और कहीं से भी मुझे इस प्रकार की साधना सीखने को मिलेगी तो मैं इसे प्राप्त करूँगा।

उस दिन मैं शाम को ही शमशान मेरी चला गया था और सारी रात शमशान के मध्य मेरी वैठा रहा। यद्यपि वह रात कितनी अधिक डरावनी और रोमाचकारी थी, परन्तु फिर भी आपकी छपा से मैं सारी रात शमशान मेरी विता सका, सुबह जल स्नानादि कर प्रात ग्यारह बजे के लगभग आपकी सेवा मेरी उपस्थित हुआ तो आपने दो क्षण आँखें बद कर कुछ सोचा और फिर आँखें खोल कर पूछा कि शमशान मेरी रात विता आये, मैंने हा कहा, इस पर आप किंचित् परेशान हो गये।

मैंने सोचा कि आपके द्वार से खाली हाथ ही नहीं जाऊँगा, पर मेरा मन कह रहा था कि यदि यहा से खाली हाथ चले गए तो अन्य कही पर भी इस प्रकार की विद्या सहज ही प्राप्त नहीं हो सकेगी।

इस प्रकार दस-बारह दिन और बीत गये। आपने मुझे टरकाने के लिये कुछ और भी बाते कहीं पर मैंने आपसे ही सीखने का निश्चय कर लिया था, अन्त मेरी जब आपसे शिष्य बनाने की इच्छा प्रकट की तो आपने स्पष्ट शब्दों मेरुझे मना कर दिया। मैंने भी यह निश्चय कर लिया था कि आप मुझे शिष्य बनावें या न बनावें यह विद्या आपसे ही मुझे सीखनी है, मेरा मन कह रहा था कि जब आपने मुझे शमशान मेरी रात विताने को कहा है तो आप स्वयं सोचेंगे कि इसको सिखाना ही चाहिए अन्यथा

मुझे ऐसा आदेश नहीं देना चाहिए था। इसी आशा से मैं डेढ़ महीने तक जोधपुर में पड़ा रहा और नित्य आपके दरवार में उपस्थित होता और निराश होकर धर्मशाला लौट आता।

मैंने यह निश्चय कर लिया था कि अब आपको यह नहीं कहूँगा कि आप मुझे कब सिखायेंगे और विना सीखे घर भी नहीं लौटूँगा, चाहे मुझे साल भर तक जोधपुर में ही क्यों न रहना पड़े।

मैं यह सारी कहानी इसलिये लिख रहा हूँ कि आपको शायद मेरा स्मरण आ जाय और कुछ कृपा का प्रसाद मिल जाय। यद्यपि मैं आपका शिष्य नहीं बन सका हूँ सभवत मुझमें इस प्रकार की पापता नहीं है या ऐसा मेरा सीधागत नहीं है कि आप जैसे समर्थ गुरु का सरक्षण प्राप्त कर सक् परन्तु फिर भी मैंने, आपको अपना गुरु माना है, मेरे कक्ष में आपका चित्र है और उसी के आधार पर मैं एकलव्य की तरह आपका शिष्य बनकर कार्य कर रहा हूँ और भविष्य में भी कहूँगा।

जब डेढ़ महीना बीत गया और आपने शायद सोचा कि यह आसानी से टलेगा नहीं तो आपने मुझे कहा कि तुम यदि कर्ण पिशाचिनी साधना ही सीखना चाहते हो तो मैं बता देता हूँ, पर यह साधना अपने घर जाकर ही करना, भविष्य में और किसी भी साधना के लिये मुझे मत कहना। क्योंकि मैंने इस प्रकार की साधना के निर्देश देने का विचार छोड़ दिया है। मैं जीवन में मत्र साधना और दक्षिण मार्ग साधना को आगे बढ़ाना चाहता हूँ, वाम मार्ग साधना मेरी रुचि के अनुकूल नहीं है। यद्यपि यह बात सही है कि वाम मार्ग साधना से शीघ्र ही सफलता मिल जाती है, सिद्धि हो जाती है और पूर्णता प्राप्त हो जाती है।

मैं खड़ा रहा। उस समय, मैं क्या कहता जबकि आप मुझे नाराज होकर भी यह साधना दे रहे थे, इसलिये मैं नुच रहा। आपने जिस प्रकार से बताया मैं उसको कागज पर नोट करता रहा, जब आपने पूरी विधि मुझे बता दी तो कठोर शब्दों में आज्ञा दी कि आज ही घर चले जाओ और वहीं पर साधना को सम्पन्न करना तथा भविष्य में इसका किसी भी प्रकार से दुरुपयोग मत करना। मैं जब आपके चरणों की तरफ झुका तो आप दो कदम पीछे हट गये। यह मेरा दुर्भाग्य ही था, परन्तु मुझे विश्वास है आप दयालु हैं और मुझ जैसे अकिञ्चन पर कभी-न-कभी आपकी कृपा अवश्य होगी।

आपने जिस प्रकार से बताया था उस प्रकार से मैंने घर पर जाकर प्रयोग प्रारम्भ किया। आपने मुझे बताया था कि यह केवल तीन दिन का प्रयोग है जो कि किसी भी महीने के कृष्ण पक्ष की त्रयोदशी से प्रारम्भ होता है और अमावस्या को समाप्त हो जाता है, परन्तु साधना के इन तीन दिनों की तैयारी के लिये इससे पूर्व दस दिन का अभ्यास करना चाहिए और अमावस्या के बाद भी दस दिन तक इस अभ्यास को नियमित रखना चाहिए।

अत भैंसे आपकी बताई हुई विधि के अनुसार पौष मास की तृतीया से स्नान करना बन्द कर दिया, न तो मैं दातुन करता था, न जीभ या दात साफ करता, न

स्नान करता और न अपने कपड़े बदलता। आपने मुझे ऐसी स्थिति में वाहर के कार्य करते रहने को कहा था, अत मैं छोटा-मोटा ज्योतिष का कार्य भी करता रहा, परन्तु लोग मेरे उलझे हुए बाल, पीला और सुस्त चेहरा तथा विना स्नान किए हुए शरीर को देखकर आश्चर्य करते थे।

आपने जैसा बताया था, मैं सच्चा, पूजन, तर्पण, मन्दिर में जाना, गायत्री पाठ, वेदपाठ आदि सभी कार्य बन्द कर दिये थे, क्योंकि आपने मुझे बताया था कि यदि इस प्रकार के कार्य करेंगे तो कर्ण पिशाचिनी सिद्धि नहीं हो सकेगी और भविष्य में भी इस प्रकार के कार्य नहीं करने हैं।

जिस विस्तर पर मैं सोता, प्रात उत्त विस्तर को समेटता नहीं था, इसी प्रकार थाली में भोजन करने के बाद थाली को धोता नहीं था, अपितु शाम को भोजन बनाकर उसी झूठी थाली में खाना लेकर खा लेता था।

इस प्रकार मैं बराबर दस दिन करता रहा, ऋयोदशी के दिन मैंने पतासे में थोड़ा-सा मल लेकर अपने मुह में डालकर निगल गया, यद्यपि इससे मुझे धृणा तो बहुत हुई, परन्तु मैं हर हालत में इस साधना को बाय-मार्गी तरीके से सम्पन्न करना ही चाहता था। इस प्रकार ऋयोदशी से अमावस्या तक इन तीन दिनों में जब भी भूख लगती पतसे में या किसी अन्य बस्तु में अपना ही मल लेकर निगल जाता और जब प्यास लगती तो अपना ही भूत्र छानकर पी लेता।

ऋयोदशी की रात्रि को मैंने अपने घर के दरवाजे अच्छी तरह से बन्द कर दिये और कमरे में बड़े-बड़े ग्यारह दीपक लगा दिए, प्रत्येक दीपक में आधा किलो से ज्यादा तेल था। इसके बाद मैं ऊनी कम्बल का आसन बिछा दक्षिण की तरफ मुह कर बैठ गया, इन दस दिनों में स्नान न करने से मेरे शरीर में से दुर्गंध आ रही थी, इस दिन प्रात जो मल हुआ था उसे मैंने भोजन की थाली में ले लिया था और दिन को इसी मल का सेवन किया था, बाद में जो बच गया था वह मैंने रात्रि को ग्यारह बजे सर्वथा नग्न होकर अपने पूरे शरीर पर लेप दिया था, ललाट पर अपने ही मल का तिलक किया था और बालों में भी इस मल को अच्छी तरह से लगा दिया था।

मैं जिस आसन पर बैठा उसके चारों तरफ मैंने दीपक लगा कर उनके मध्य मैं बैठ गया था, इसके बाद मैंने पहले से ही हृदियों की माला तैयार करके रखी थी, जो कि मैंने एक दिन रात्रि को शमशान में जाकर एक कन्ध खोदकर उसमें से हृदिया निकाल कर माला बनाई थी। उस माला में चौबन छोटी-छोटी हृदिया थी, इस प्रकार यह चौबन हृदियों के टुकड़ों की एक माला बन गई थी, इस प्रकार की मैंने दो मालाएं बनाई थी, जिसमें से एक माला मैंने गले में पहन रखी थी, और एक माला मैंने अपने हाथ में ले रखी थी।

इसके बाद आपने मुझे 'कर्ण पिशाचिनी' मन्त्र जप करनेका निर्देश दिया था, अत मैंने इसी नग्नावस्था में बैठ कर जप प्रारम्भ किया। आपने जो मुझे मन्त्र सिखाया था वह इस प्रकार था—

'ओम हौं कर्ण पिशाचिनी अमोघ सत्य वादिनी भम कर्ण  
अवतर-अवतर सत्य कथय-कथय अतीत अनागत  
वर्तमान दर्शय-दर्शय ए हौं हौं कर्ण पिशाचिनी स्वाहा ।'

इस मन्त्र का मैं निरन्तर जप करता रहा, आपने मुझे बताया था कि एक सौ पन्द्रह मालाए निरन्तर जप करनी है। यदि जप के दौरान लघुशका हो तो उसी आसन पर लयु शका कर ली जाय, यदि मल विसर्जन की शका हो तो उसी आसन पर मल विसर्जन कर लें और भन्त्र पढ़ते-पढ़ते ही उस मल को शरीर पर लेप कर दें। मूत्र को भी वायें हाथ से नेकर अपने शरीर पर छिड़कते रहे।

मैंने ऐसा अनुभव किया कि जब मैं उम दिन इच्छीस मालाए पूरी कर चुका तो मुझे जोरो से लघुशका हुई और जो भी मूत्र हुआ वह मैं वायें हाथ से लेकर अपने मुह पर और शरीर पर छिड़कता रहा, दाहिने हाथ से मैं अपनी माला को लेकर मन्त्र जाप करता रहा।

उस रात्रि को कई बार मल और मूत्र विसर्जन हुआ। मैं आश्चर्यचकित था कि इससे पूर्व ऐसा कभी नहीं हुआ था, सारा कमरा दुर्गन्ध से भर गया था। उम कमरे में सास लेना भी कठिन हो रहा था, किर भी मैंने एक सौ पन्द्रह मालाए पूरी की, जब जप समाप्त हुआ उस समय प्रात घात बज चुके थे।

जप समाप्त करके मैं आसन से उठा और कमरे में हो सो गया, आपने मुझे निर्देश दिया था कि कमरे में ही रहना है बाहर जाने की आवश्यकता नहीं है, प्रात ६ बजे के लगभग मुझे जोरो की भूख लगी और कुछ ऐसा लगा जैसे मैं महीने भर से भूखा हूं और यदि तुरन्त भोजन नहीं किया तो शायद प्राण समाप्त हो जायेगे, उसी समय मल विसर्जन भी हुआ, उस मल से ही मैंने यथासम्भव क्षुधा और मूत्र से अपनी प्यास को शान्त किया।

एक क्षण के लिए मेरी आँखो में आँख आ गए कि आपने मुझे भना किया था, वह ठीक था। आपकी आँख मान लेता तो मुझे इतना पतित नहीं होना पड़ता, मेरा ग्राहणत्व समाप्त हो गया था और मैं एक पिशाच की तरह उस कमरे में बैठा हुआ था।

चतुर्दशी की दोपहर को मैं उसी कमरे में लेटा हुआ था। जमीन पर कोई वस्त्र विछा हुआ नहीं था। मैं सर्वथा नग्न था तभी धीरे से दरवाजा खुला, कुछ ऐसा अनुभव हुआ जैसे कि कोई कमरे के अन्दर आया हो, जबकि मैंने मुख्य द्वार का दरवाजा पूरी तरह से बन्द कर रखा था और अन्य कोई दरवाजा ऐसा नहीं था जिससे कि कोई अन्दर आ सके।

मैं सजग था, मेरी आँखें खुली हुई थीं, प्रमाण प्राप्त करने के लिए अपने हाथ से शरीर पर चिकोटी भी काटी तो मुझे दर्द-सा हुआ, अत यह स्पष्ट था कि मैं सजग था। मैंने देखा कि एक स्त्री कमरे में आई है जो कि सर्वथा नग्न है, उसकी आयु पञ्चीस से तीस वर्ष के लगभग होगी। दिखने में वह मष्यम स्तर की सुन्दरी लग

रही थी। वह मेरे पास आकर मेरे साथ लेट गई। मैं उसे देखकर हड्डवडा गया और उठ बैठा तो उसने जबरदस्ती से मुझे पुन अपने साथ लिया और धीरे-धीरे मेरे गुप्ताग पर हाथ फेरते लगी।

मैं हस्तप्रभ था, किंकर्तव्यविमूढ था कि क्या करू और क्या न करू? मेरे मन मे एक अजीब-सा भय व्याप्त हो गया था। उस तरफ देखने का साहस नहीं जुदा पा रहा था, परन्तु वह विना हिचकिचाहट निर्लज्ज-सी मेरे गुप्ताग पर हाथ परती रही और मुझे काम करने के लिए प्रेरित करती रही, परन्तु सम्भोग नहीं हुआ और लगभग पाँच वजे वह मेरे पास से उठकर बदृश्य हो गई।

मैं पस्त-सा हो गया था और निश्चय कर लिया था कि इस साधना को छोड़ दू, परन्तु आपने मुझे बता दिया था कि यदि साधना प्रारम्भ करने के बाद बीच मे छोड़ दी तो वह पिशाचिनी तुम्हे उसी समय समाप्त कर देगी। इस साधना मे या तो सफलता ही मिलती है या मृत्यु ही प्राप्त होती है।

मैं उठ बैठा, कमरे मे कई बार मल मूत्र होने से एक अजीब-सी दुर्गम्भ भर गई थी जिससे मेरा माथा फट रहा था, परन्तु मैं कमरे मे पड़ा रहा। रात्रि को लगभग च्यारह बजे मैं पुन सभी दीपक जला आसन पर बैठ गया और पहले दिन की तरह ही मन्त्र जप प्रारम्भ किया। मेरी रुचि इस साधना मे समाप्त हो गई थी और मैं जो कुछ कर रहा था वे मन से कर रहा था। मेरी राय है कि किसी भी व्यक्ति को इस प्रकार की साधना वाममार्गी तरीके से सम्पन्न नहीं करनी चाहिए, अधोरी ही इस कार्य वा कर सकते हैं।

खैर, मेरा जप निरन्लर चालू रहा, पर घण्टे भर बाद ही वही स्त्री मेरे पास आकर बैठ गई जो दोपहर को मेरे साथ आकर लेटी थी, उसके दात बाहर निकले हुए थे, सिर पर छोटे-छोटे बाल थे, बालों मे सिन्धूर भरा हुआ था और गले मे हड्डियों की माला पहने हुई थी, इसके अलावा वह पूरी तरह से निर्वस्त्र थी।

वह पास मे बैठकर अत्यन्त प्रसन्न हो रही थी और वह मेरे गुप्ताग के साथ बराबर खेल कर रही थी। कभी वह उस पर हाथ फेरती, कभी मेरा चुम्बन ले लेती और कभी मेरी कमर मे हाथ ढाल देती, मैं पसीने-पसीने हो रहा था, परन्तु फिर भी मेरा मन्त्र जप चालू था। इस बीच पाच-छ बार मल-मूत्र विसर्जन हुआ तो उस स्त्री ने ही लेकर मेरे शरीर पर और अपने शरीर पर चुप्प दिया। इस प्रकार प्रात पाँच बजे तक वह मेरे पास बठी रही और जप समाप्त होते ही उठकर दरवाजे के बाहर निकल गई।

मैं आसन से उठकर पास ही कमरे मे लेट गया। मैं इस माहील मे लगभग अर्द्ध विक्षिप्त-सा हो गया था। मैंने इस साधना को समाप्त करने की सोच ली थी, परन्तु मृत्युभय से मैं ऐसा नहीं कर सका।

अमावस्या के दिन मैं कमरे मे लेटा रहा। लगभग बारह बजे वह स्त्री पुन आकर मेरे पास लेट गई। उसे लेटते देख कर मैं उठ कर खड़ा हो गया तो उसने उठ

कर मेरी कमर मे जोरो से लात मारी और मुझे साथ ही लेटने पर चिवश कर दिया, आज उसने मेरे शरीर के साथ कई बार खिलवाड़ की और सम्मोग के लिए भी प्रेरित किया। लगभग तीन बजे उसने जबरदस्ती से सम्मोग किया और सम्मोग समाप्त होते ही वह उठकर कमरे से बाहर निकल गई। मैं भय, पश्चात्ताप और ग्लानि से दुखी हो रहा था।

मैं इसी प्रकार कमरे मे पड़ा रहा। ऐसा लगा जैसे मैं एक भयानक पड़्यन्त्र मे फस गया हूँ और निकलने का कोई चारा नहीं है। रात्रि के लगभग आरह बजे मैं अत्यन्त बेमन से उठकर आसन पर बैठ गया और चारों तरफ दीपक लगा दिए। आज का माहील मुझे अत्यन्त डरावना और बीमत्स लग रहा था, कमरा दुर्गन्ध से भर गया था, मेरा शरीर मल-मूत्र से सना हुआ था, और दिमाग की नसें दुर्गन्ध के मारे फट रही थीं।

जप प्रारम्भ होते ही वह म्नी कमरे मे आ गई और आकर सीधे ही मेरी गोदी मे बैठ गई, उसने अपना दाहिना हाथ मेरे गले मे डाल दिया।

मैं चुपचाप मन जप करता रहा और वह वही पर मल विसर्जन करती रही और वह अपने हाथ से अपने मल और मूत्र को मेरे शरीर पर लेपती रही, रात्रि के लगभग पाच बजे वह गोदी से अलग हुई और मेरे सामने नग्नावस्था मे बैठ गई, जप समाप्त हुआ तो वह हड्डियों की माला पास मे रख दी।

उसने कहा मैं ही तुम्हारी प्रियतमा हूँ और अब जिन्दगी भर तुम्हारे साथ रहूँगी और तुम्हारा कार्य करूँगी, पर यदि तुमने मुझे कभी छोड़ना चाहा तो मैं तुम्हे समाप्त कर दूँगी, ऐसा कहते-कहते उसने अपने गले मे जो हड्डियों की माला पहने हुए थी, वह मेरे गले मे पहना दी और मेरे गले मे जो हड्डियों की माला थी वह निकालकर अपने गले मे डाल ली, और नववधू की तरह मुस्कराने लगी।

मैं चुप रहा तो उसने कहा शमनि की जरूरत नहीं है, तुमने मुझे सिद्ध किया है तो अब मैं जीवन भर तुम्हारे साथ रहूँगी ही, और जब भी मुझे सम्मोग की इच्छा होगी तो तुम्हारे पास आऊँगी और तुम्हे मेरी इच्छा पूरी करनी पड़ेगी।

तुम जो कुछ भी प्रश्न पूछोगे तुम्हारे कान मे मैं कह दूँगी, मगर मेरे बारे मे अन्य किसी को कहा तो तुम्हारा गला घोट दूँगी। साथ ही मुझसे पिण्ड छुड़ाना चाहा तो तुम्हे मारकर मुझे प्रसन्नता ही होगी, ऐसा कहकर वह मेरे गुप्ताग पर चुम्बन लेती हुई कमरे से बाहर निकल गई।

काश! मैं इस प्रकार की साधना न करता तो ज्यादा अच्छा रहता, पर अब मैं इस साधना को कर चुका था अत मैं पीछे भी नहीं हट सकता था, आपने तो मुझे बहुत मना किया था परन्तु यह दण्ड मेरी जिद के कारण ही मुझे भोगना पड़ रहा है।

आपने जो विधि बताई थी उसके अनुसार मैंने प्रतिपदा को प्रात उठकर स्नान किया, परन्तु दातो को साफ नहीं किया, दीपक उठाकर घर के बाहर दक्षिण की तरफ जमीन मे गाड़ दिये और उन दीपको के साथ ही उस हड्डियों की माला को भी

जमीन में गाढ़ दिया, इसके बाद पूरे कमरे को साफ़ किया और शुद्ध जल से दो तीन बार धोया, फिर मैंने पुनः स्तान कर कपड़े धारण कर लिये।

इस प्रकार प्रतिपदा से दसवीं तक मैं घर में ही रहा। बाहर नहीं निकला, पर प्रतिपदा के बाद दसवीं तक पुनः स्तान नहीं किया, और न कपड़े ही बदले, माथ ही मैं भूख लगने पर नित्य थोड़ा-थोड़ा मल लेता रहा, प्यास लगने पर अपना ही मूत्र पी लेता था।

शुक्ल पक्ष की दसवीं को यह अनुष्ठान समाप्त हुआ और एकादशी को मैंने पुनः स्तान किया, सावुन लगाकर भली प्रकार से शरीर को साफ़ किया, कपड़े भी बदले और दाँतों को तथा जीभ को भी साफ़ किया, उसने जो मुझे हङ्गियों की माला पहनाई थी वह मैंने अपने गले में पहने रखी।

इस अनुष्ठान को सम्पन्न हुए दो महीने बीते गये हैं, परन्तु मैं अन्दर-ही-अन्दर पश्चात्ताप की अग्नि में जल रहा हूँ, क्योंकि अब मैं न तो गायत्री मन्त्र का उच्चारण कर सकता हूँ और न किसी अन्य देवी देवताओं की पूजा या पाठ कर पाता हूँ।

पर इससे आर्थिक वृद्धि असाधारण रूप से हुई है, पिशाचिनी घेर घारकर लोगों को मेरे घर की तरफ ठेलती है और नित्य सौ से ज्यादा लोग मुझे मिलने के लिये आ जाते हैं, उनको सामने देखते ही उनके भूतकाल की कई घटनाएँ मेरे सामने आ जाती हैं। जब वे अपने भूतकाल की कोई बात पूछते हैं तो मेरे कानों में उसका उत्तर पिशाचिनी कह देती है और जब मैं वही बात सामने वाले व्यक्ति को कहता हूँ तो वह आश्चर्यचकित हो जाता है और अपना सिर मेरे पैरों में रख देता है।

इसके बाद जब वह व्यक्ति भविष्यकाल से सबधित प्रश्न पूछता है तो उसका उत्तर पिशाचिनी नहीं दे पाती, तब मैं अपने मन से कुछ भी कह देता हूँ पर वह पूरा विश्वास कर लेता है, क्योंकि उसने भूतकाल की जो बात पूछी थी वह सही-सही बता दी थी इसीलिये वह प्रभावित रहता।

कुछ व्यक्तियों ने मेरी परीक्षा भी ली और मैं उसमें भी सफल रहा। एक बार बाहर से एक सेठ आये जिसके तीन पुत्र थे, पर उन्होंने कई लोगों के सामने मुझे प्रश्न पूछा कि पण्डितजी मेरे अभी तक सन्तान नहीं हुई है, कब होगी?

तुरन्त ही मेरे कानों में सुनाई दिया कि इसके तीन पुत्र हैं। तीनों के नाम ये हैं—उनकी उम्र उनकी आदतों तथा उनके और सेठजी के सम्बन्धों के बारे में भी मेरे कानों में ध्वनि आ गई थी।

मैंने जब ये बातें उस सेठ को एक विशेष मुद्रा बनाकर कहीं तो वह आश्चर्यचकित रह गया और मुझे ससार का सर्वश्रेष्ठ भविष्यवक्ता मान बैठा और सबके सामने मेरे चरणों में सिर रख पाच हजार रुपये भेट कर दिये, फिर उसने भविष्यकाल से सबधित प्रश्न पूछा तो मैंने कुछ भी कह दिया पर वह पूरी तरह से आश्वस्त था, अत उसने इन बातों को भी सही मान लिया, उसने मुझे अपने घर भी चलने के लिये प्रेरित किया और कहा कि आप लक्ष्मी वृद्धि के लिये अनुष्ठान करें, आप महान् विद्वान् हैं, यदि एक

लाख भी खर्च होगा तो मैं करूगा, मैंने हा भर ली, यद्यपि मुझे अनुष्ठान नहीं आता है परन्तु वह मुझसे प्रभावित है और मेरे कहने पर वह यच्चे करने को तैयार है।

इस प्रकार नित्य तीन चार हजार की आय हो गई है, आर्थिक दृष्टि से सम्पन्नता बढ़ती जा रही है, परन्तु मैं गन्दर-ही-अन्दर खोखला होता जा रहा हूँ, मेरे जीवन की सारी खुशिया छिन गई है, वह पिशाचिनी पन्द्रह बीस दिनों के बाद रात्रि को आती है और जबरदस्ती से मेरे साथ सम्भोग करके चली जाती है, मुझे ऐसा लग रहा है कि मैं इससे पिण्ड नहीं छुड़ा पाऊगा।

मैं ससार की दृष्टि से सफल हूँ, सम्पन्न हूँ, विद्वान् और त्रिकालज्ञ हूँ, बड़े से बड़ा सेठ मेरे सामने गिडगिडाता है इससे मेरे 'अह' की तुष्टि होती है, परन्तु फिर भी मैं मन से प्रसन्न नहीं हूँ। चित्त मे शान्ति नहीं है और जीवन मे किसी प्रकार का उमग या उत्साह नहीं रह गया है।

मैं समझ गया कि आपने मुझे शिष्य क्यों नहीं बनाया, आपने मुझे क्यों फट-कारा था, इस साधना को करने के लिये बार-बार क्यों भना किया था, यह अब मेरी समझ मे आया है, मैं बास्तव मे ही अध्यम और पापी हूँ, ब्राह्मण न रहकर कसाइ-सा हो गया हूँ अत इन अपवित्र होठों से आप जैसे महापुरुष का नाम लेना भी मैं पाप समझता हूँ।

पर, आप दयालु हैं, कई प्रकार की सिद्धियों के स्वामी हैं, मैं दीन-हीन आपके चरणों की रज हूँ, मेरी एक विनती है कि आप कोई ऐसा तरीका बताइये जिससे कि मैं इससे मुक्ति पा सकूँ। मैं इस साधना से पूर्व जैसा था उसमे ज्यादा सुखी था, मैं बापस वैसा ही बनना चाहता हूँ, इस पिशाचिनी से मुक्ति चाहता हूँ और यह मुक्ति आपके अलावा और कोई नहीं दे सकता।

मेरा प्रत्येक क्षण दुखमय बन गया है। हर क्षण उसके आने की आशका रहती है और उससे सम्भोग से मेरा शरीर पस्त हो जाता है और ऐसा लगता है जैसे शरीर का खून निचुड़ गया हो, इस ग्लानि मे शायद मैं ज्यादा जी भी नहीं सकूँगा और मरने के बाद भी मेरी आत्मा भटकती ही रहेगी।

यह पत्र दुखी हृदय से लिख रहा हूँ, पूरा पत्र रोते सिसकते हुए लिखा है, मैं एक बार—केवल एक बार आपके द्वार पर भिखारी के रूप मे आना चाहता हूँ, केवल इसलिये कि आप मुझे इस साधना से मुक्ति दिला सकें। कोई ऐसी विधि बतायें जिससे कि मैं इस सिद्धि से मुक्ति पा सकूँ और सामान्य मानव बन सकूँ।

मैं आपका कोई हित नहीं कर सका हूँ। मैं किसी भी योग्य नहीं हूँ, मैं आपका शिष्य कहलाने के काविल नहीं हूँ, पर फिर भी ब्राह्मण हूँ और आप ब्राह्मणों पर कृपा करने वाले हैं इससे भी ज्यादा आपमे मानवता है, दया है, शक्ति है, और ऐसी सिद्धिया है जिससे आप मुझे वापिस मानव बना सकते हैं, यदि आप ऐसा कर सकेंगे तो मेरा सारा जीवन आपका कृतज्ञ रहेगा और मेरा रोम-रोम आपके उपकारों से छूणी रहेगा।

अंकिचन  
(मधुसूदन शर्मा)

## अष्ट लक्ष्मी साधना

आदरणीय पण्डितजी,

सादर पाय लागत ।

आपको जब यह पत्र लिख रहा हूँ तो हृदय में एक आनन्द की अनुभूति हो रही है, ऐसा लगता है जैसे मैं अपने जीवनदाता को पत्र लिख रहा होऊँ, और यह बात सही भी है क्योंकि आपने मुझे ही नहीं, मेरे पुरे परिवार को जीवनदान दिया है। मैं और मेरा परिवार तो एक प्रकार से मृतक प्राय हो गया था, परन्तु शायद हमारे पूर्वजों का पुण्य बाकी था जिससे कि मेरा आप जैसे दिव्य पुरुष से सम्पर्क हो सका और वापिस जीवन दान प्राप्त हो सका।

आप अत्यधिक व्यस्त हैं, और आपके जीवन का प्रत्येक क्षण कीमती और सार्व-जनिक हो गया है, दिल्ली में आपके आने पर मैंने उमड़ती हुई भीड़ को देखा है और उन लोगों के मन में आपसे मिलने की जो चाह और तड़फ होती है उसकी मैंने अनुभव किया है, मेरी इच्छा बराबर यह रहती है कि मैं आपसे हर महीने भेंट करूँ परन्तु आप जैसे महामुरुष का दर्शन इतना जल्दी हो जाय ऐसा हमारे भाग्य में कहा है ?

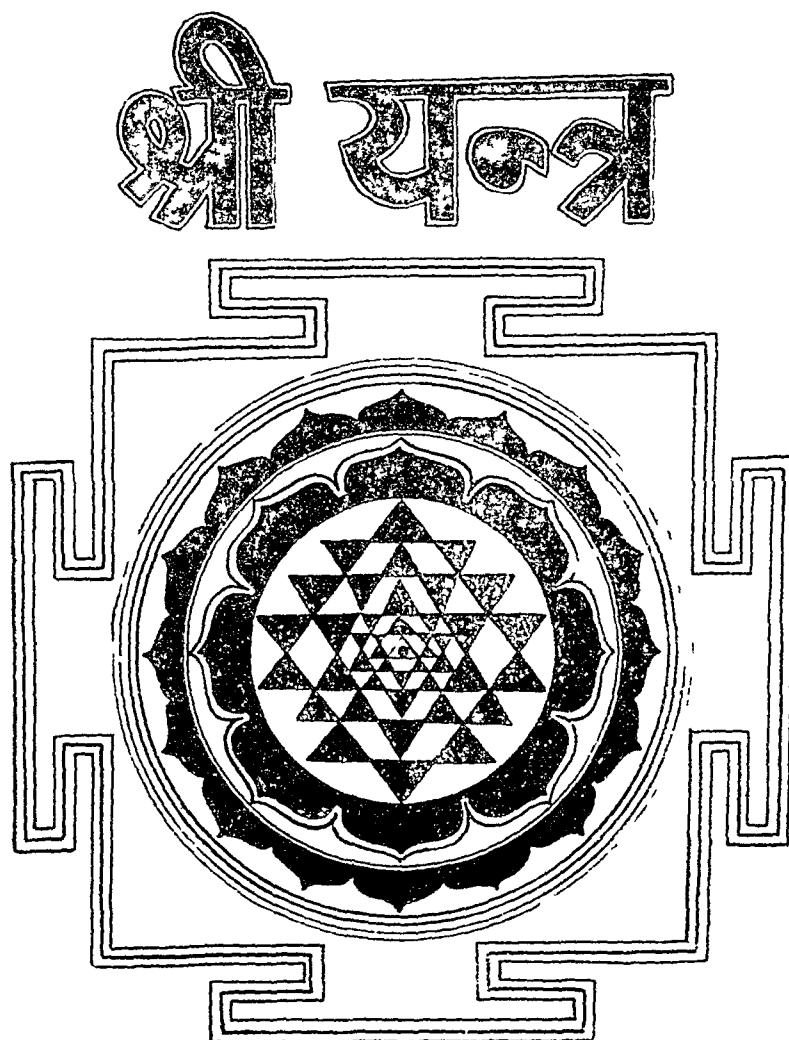
यह बात मैं इसलिए लिख रहा हूँ कि आपके पास सैकड़ों पत्र आते हैं और नित्य सैकड़ों व्यक्तियों से भेंट करते हैं, इसलिए शायद हमारा स्मरण आपको न रहा हो, परन्तु मैं और मेरा परिवार आपको एक क्षण के लिए भी नहीं भूला है।

हम चार भाई हैं और पीढ़ियों से हमारे यहा जवाहरात का व्यापार होता है। हमारे पूर्वज इस व्यापार में अत्यधिक प्रसिद्ध थे और उन्होंने जो सम्मान और गौरव अपनी जाति में प्राप्त किया वह दुर्लभ है। हमने अपने परिवार में जब आख खोली तो चारो तरफ वैभव विखरा हुआ था, हमारा लालन-पालन अत्यन्त ही शान-शौकत के साथ हुआ। मैं चारो भाइयों में सबसे बड़ा हूँ और इसलिए परिवार की पूरी जिम्मेदारी मेरे ऊपर ही रही है, यद्यपि दिल्ली में हम चारो भाई अलग कोछियों में रहते थे परन्तु हमारा व्यापार संयुक्त था और हमारी मुख्य दुकान दिल्ली में थी तथा बन्दई, मद्रास, कलकत्ता, न्यूयार्क आदि में भी हमारी दुकानें थीं।

हमारा जीवन अत्यन्त वैभव के साथ चल रहा था, हम अग्रवाल हैं और लक्ष्मी पुत्र हैं, हमारे जीवन और प्रतिष्ठा का मुख्य आधार लक्ष्मी ही है, परन्तु एल्ला-मृग्य

ऐसा आया कि हम निरन्तर नुकसान में होते गए और जितना अधिक प्रयत्न करता ही ज्यादा नुकसान होता गया। इस प्रकार नुकसान सहन करते गए, परन्तु प्रकार स्थिति होते-होते एक दिन ऐसा भी आ गया जब हमें महसूस हुआ कि हम इस अधिक धारे में जा रहे हैं कि यदि कुछ उपाय नहीं किया तो शायद दिवालिया बन पड़ सकता है।

हमने अपने खर्च घटा लिए, पूरे परिवार में व्यक्तिगत कार्य के लिए बीस-वाँ कारे थीं वे बेच दी, और एक कार रही, सैकड़ों नौकर-चाकर हटा देने पड़े, मुख्य

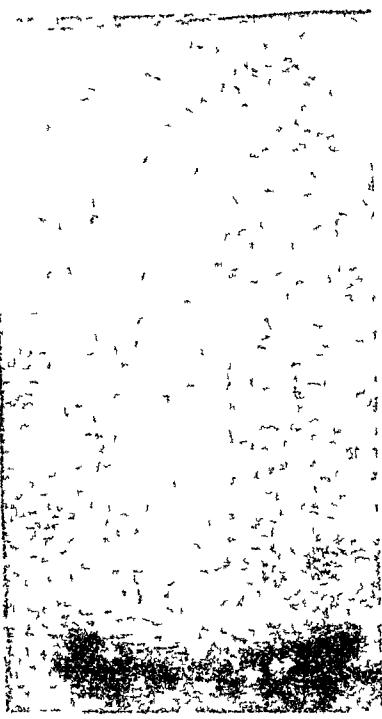


धीरे-धीरे किनारा करते गए, और मजबूरी से हमें कलकत्ता की दुकान बन्द कर देनी पड़ी, इसके बाद मद्रास की दुकान बन्द हो गई, चार भूमि वाद हमें बम्बई की दुकान को भी बन्द करने के लिए विवश होना पड़ा। इस प्रकार हमारे पूरे परिवार में केवल एक दिल्ली की दुकान ही बाकी रही, परन्तु फिर भी दुर्भाग्य ने हमारा पीछा नहीं छोड़ा और एक ही सौदे में चालीस लाख का धाटा खाना पड़ा, फलस्वरूप हमें तीन कोठिया गिरवी रख देनी पड़ी, मेरा दिमाग खराब हो रहा था, मैं समझ नहीं पा रहा था कि क्या करूँ, जितना ही ज्यादा हाथ पैर मार रहा था उतनी ही ज्यादा असफलता हाथ लग रही थी।

इसी बीच एक प्रसिद्ध महाराजा के जवाहरात विकने की बात सुनायी दी, मैं वहा गया और उन जवाहरातों की अपनी दोनों कोठिया गिरवी रखकर खरीद लिया, परन्तु तीसरे दिन ही उन जवाहरातों की चोरी हो गई, यह मेरे जीवन का सबसे बड़ा आघात था और उसने मुझे खाट पर पटक दिया।

इस प्रकार दो वर्षों में मैं धनपति से कर्जदार हो गया। मेरी चारों कोठिया गिरवी रख दी गई थी, हम चारों भाई एक छोटे से मकान में किरायेदार बन कर रहने लगे थे, एकमात्र कार भी विक गई थी और एक दिन जब हमने हिसाब लगाया तो ज्ञात हुआ कि हम पर कुल मिलाकर एक करोड़ का कर्जा है।

जिस प्रकार से स्थिति चल रही थी उस हिसाब से हम एक लाख एक हजार भी देने की स्थिति में नहीं थे, मेरी आखों के आगे अधेरा-सा छा गया। परिवार दयनीय स्थिति में आ गया था, समाज में हमारी प्रतिष्ठा कमजोर हो गई थी, हम जूठी शान-शोकत भी नहीं रख पा रहे थे, हम चारों उस दुकान पर बैठते, दुकान में कुछ माल ही नहीं था तो फिर ग्राहक क्या आते, इस प्रकार धीरे-धीरे मैं बीमार पड़ने लगा और मुझे पहला 'हार्ट अटैक' हुआ जिससे मैं मरते-मरते बचा।



कनरघारा देवी

इन दो वर्षों में मैं संकटों ज्योतिपियों, तात्रिकों, मात्रिकों आदि के पास गया और उन्होंने जो कुछ कहा वह मैंने किया, परन्तु कोई भी स्थिति मुघार नहीं सका। मैं निरन्तर कर्जों में दूबता गया और एक दिन मैंने बातमहत्या करने का निश्चय कर सिया।

आप विचार कर भक्ते हैं कि ऐसा कठोर निर्णय मैंने कितने दुखी मन से लिया होगा। उस दिन बाजार जाकर मैं नीद की गोलिया ले आया, अपने परिवार के नाम एक पत्र लिया जिसमें इस दुष्पद स्थिति की जिम्मेवारी अपने ऊपर ली और उन सबसे क्षमा याचना की, एक पत्र मैंने अपनी पत्नी के नाम लिया जिसमें मैंने इस गरीबी की स्थिति का जिम्मेवार अपने आप को ठहराया, क्योंकि घर में बढ़ा मैं ही था अत निर्णय भी मैं ही लेता था और मेरे ही निर्णयों से परिवार इस स्थिति तक पहुंचा था।

मैंने दोनों पत्र सिरहाने रखकर शाम को सभी वच्चों को प्यार कर भाइयों से जी भर कर मिल कर अपने कमरे में आ कर सो गया और नीद को पन्द्रह से ज्यादा गोलिया था ली। मैंने यह निश्चय कर लिया था कि यह रात मेरी अन्तिम रात है।

परन्तु दुर्भाग्य मेरा पीछा नहीं छोड़ रहा था। रात के तीन बजे मेरी आँखें पथरा गईं, गले में खरास पैदा हो गईं और धरधराहट की ध्यनि से पूरा परिवार जाग गया, उसी समय मुझे उल्टी हो गई और मैं चाहते हुए भी नहीं भर सका। मुझे मजबूरी से दूसरे दिन का सूर्य देखना पड़ गया, पर मेरी इस घटना से पूरा परिवार आशकित हो गया और सभी अपने ऊपर भौत को मड़राते हुए देखने लगे।

दूसरे ही दिन सयोग से हमारे किसी समय रहे हुए श्री मूलचन्द दलाल आये, वे केवल मिलने के लिए ही आये थे। उन्होंने पाच साल पहले दलाली का कार्य छोड़ दिया था और वस्तव्य में अपनी स्वयं की दुकान खोल दी थी, वे किसी कारणवश दिल्ली आये थे। हमारे घर की स्थिति थोड़े-बहुत रूप में उन्हें मालूम थी, पर उस दिन जब मेरे घर आये और मेरी स्थिति को देखा तो वे अनुभवी होने के कारण सब कुछ भाष गये, उन्होंने मुझे बताया कि आप घवरावें नहीं और एक बार जोधपुर जाकर पण्डित जी से सम्पर्क स्थापित करें, केवल मात्र वे ही आपको इस विपत्ति से छुटकारा दिला सकते हैं या कोई रास्ता दिखा सकते हैं।

पर मैं पूरी तरह से टूट गया था, मुझे किसी भी ज्योतिषी या तत्र-मत्र पर भरोसा नहीं रहा था, पर जब उन्होंने बहुत हठ किया और बताया कि मैं जो कुछ बन सका हूँ वह उनकी ही कृपा से बन सका हूँ, दलाली का कार्य छोड़ने के बाद मैंने उनकी सलाह के अनुसार ही अपनी दुकान खोली थी और आज मैं जो कुछ हूँ इसमें उनका बहुत बड़ा योगदान है, अत आप एक बार उनकी राय अवश्य ले लें। यदि आप कहे तो मैं आपके साथ चलने के लिए तैयार हूँ।

एक सप्ताह बाद जब मैं कुछ स्वस्थ हुआ तो उस दलाल को साथ लेकर मैं जोधपुर आपके निवास स्थान पर पहुंचा। वह दलाल जो कि उस समय तक एक सफल धनपति बन चुका था आपसे परिचित था, अत उसके आग्रह से आपसे मिलने का

सौभाग्य प्राप्त हुआ, मैंने आपके सामने अपनी सारी कहानी सुना दी, आप चुपचाप सुनते रहे।

मैंने अपने जीवन के वैभव का भी सही वर्णन किया था और आपके मिलने के समय में जिस स्थिति में था उसका सही-सही सत्य विवरण आपके सामने प्रस्तुत कर दिया था, शायद आप मेरी सत्यता से पसीज गए थे, या मेरा समय अच्छा आने वाला था अत आपने मुझे सान्त्वना दी और बताया कि 'अष्ट लक्ष्मी साधना' से आप वापिस उसी स्तर पर पहुंच सकते हैं जिस स्तर पर आप थे।

मुझे आपके कथन पर बिल्कुल विश्वास नहीं हुआ था, परन्तु आपका व्यक्तित्व मुझे प्रभावित कर रहा था और मेरा अन्तरमन इस बात की साक्षी दे रहा था कि यदि कल्याण हो सकता है तो केवल इसी व्यक्ति के द्वारा ही भवित्व है अन्य कोई उपाय नहीं है। मैं जिस समय आपसे मिला था, उस समय आश्विन महीना चल रहा था, आपने कहा कि दीपावली पर मैं तुम्हारे लिए अष्ट लक्ष्मी साधना करवा सकता हूँ और मुझे विश्वास है आने वाले समय में आप पुन श्रेष्ठ स्थिति पर पहुंच सकेंगे।

आपके कथन पर मेरे साथ आये दलाल को बहुत अधिक विश्वास था, अत उसने निवेदन किया कि आप इनके लिए 'अष्ट लक्ष्मी साधना' यही जोधपुर में ही सम्पन्न करा लें। ये पति-पत्नी उसमें भाग लेने के लिए यहीं पर आ जायेंगे। यद्यपि आप उस समय अधिक व्यस्त थे, परन्तु हमारे अनुरोध को आपने मान लिया था, यह मेरे लिए सौभाग्य की बात थी। आपने यह भी कहा था कि साधना में पति-पत्नी भाग लें यह अनिवार्य नहीं है, परन्तु मैंने मन में सोचा कि यदि दिल्ली में कुछ दिन और रहा तो शायद पागल हो जाऊगा, इसकी अपेक्षा तो कुछ दिन जोधपुर में ही विता दिए जाय। आपने जो व्यय बताया था मेरे पास तो उसका सौवा हिस्सा भी नहीं था, परन्तु दलाल श्री मूलचन्द जी को आप पर अत्यधिक विश्वास था अत उन्होंने सारा खर्च सहन करने का निश्चय किया।

आपने अपने कार्यक्रम को देख कर नवरात्रि में ही इस अनुष्ठान को सम्पन्न करने की स्वीकृति दी, फलस्वरूप मैं तीसरे ही दिन अपनी पत्नी के साथ जोधपुर आ गया था, मूलचन्द जी भी एक दिन के लिए वर्ष्वर्ष जाकर लौट आये थे।

मैंने मन-ही-मन सोचा कि पण्डितजी जो भी अनुष्ठान करायेंगे उसे मैं अपनी डायरी में नोट करता रहूँगा, यदि यह सफल हो गया तो यह आलेख मेरी पीढ़ियों के लिए लाभदायक ही रहेगा।

आपने आश्विन शुक्ल प्रतिपदा से इस अनुष्ठान को प्रारम्भ किया। जहा तक मुझे स्मरण है न्यारह पण्डितों ने इसमें भाग लिया था, मैंने जब आपसे अष्ट लक्ष्मी के बारे में पूछा था तो आपने बताया था कि लक्ष्मी प्राप्ति और स्थायी लक्ष्मी के लिए अष्ट लक्ष्मी साधना सर्वश्रेष्ठ है। इसमें (१) घन लक्ष्मी (२) घरा लक्ष्मी (३) वाहन लक्ष्मी (४) यश लक्ष्मी (५) व्यापार लक्ष्मी (६) आयु लक्ष्मी (७) सन्तान लक्ष्मी (८) दारिद्र्य विनाशक अखण्ड लक्ष्मी, इन अष्ट लक्ष्मियों की पूजा होती है और

इनसे सबधित साधना सम्पन्न होती है, जिससे कि जीवन में किसी भी प्रकार का अभाव न रहे।

आपने ग्यारह कलश स्थापन किये थे और आठ तल्बे विघ्नकर उन पर आठ यथा चावलों से बनाये थे जो कि निम्न प्रकार थे

१ लक्ष्मी यत्र, २ श्री यत्र, ३ कनकधारा यत्र, ४ ऐश्वर्य यत्र, ५ वरदा यत्र, ६ स्थायित्व यत्र, ७ घटाकरण यत्र, ८ कुवेर यत्र।

इन आठों यत्रों पर क्रमशः अष्ट लक्ष्मी की अलग-अलग चादी की प्रतिमाएँ बनाकर म्थापित की थीं, और प्रत्येक यत्र की विस्तार से पूजा की थी, इसके साथ-ही-साथ आपने प्रत्येक यत्र को स्फुरण कर मन्त्र सिद्ध प्राण प्रतिष्ठा युक्त बनाया था। आपने प्रत्येक पण्डित को अलग-अलग मन्त्र जपने के लिए दिया था, और तीन पण्डितों को कनकधारा मन्त्र जपने की आज्ञा दी थी। मैं उन पण्डितों के पास बैठा था और उनसे कनकधारा विनियोग ध्यान और मन्त्र नोट कर लिया था।

### कनकधारा सकल्प

ओम् विष्णु-विष्णु तत्पद० भम सकल विद्य विजय श्री सुख शान्ति, धन धान्य, यश, पुत्र पौत्रादि प्राप्तये समज्जन्म जन्मान्तरीय कुलार्जित सचित महादुख दारिद्र्य-तादि शान्तये व कनकधारा यत्र पूजन मह करिष्ये ॥

### कनकधारा विनियोग

ओम् अस्य श्री कनकधारा यत्र मन्त्रस्य, श्री आचार्य श्री शकर भगवत्पाद् ऋषि श्री भुवनेश्वरी ऐश्वर्यदात्री महालक्ष्मी देवता, श्री वीज ही शक्ति, श्री विद्या रजोगुण, रसना ज्ञानेन्द्रिय रस वाक् कर्मेन्द्रिय मध्यम स्वर, द्रव्य तत्त्व, विद्या कला, ऐं कौलन, द्रू उत्कीलन प्रवाहिनी सचय मुद्रा, भम क्षेमस्थेर्यायुरारोग्या भि वृद्धयर्थ श्री महालक्ष्मी अष्ट लक्ष्म्ये भगवती दारिद्र्य विनाशक धनदा लक्ष्मी प्रसाद सिद्धयर्थ च नमोयुक्त वाग् वीज स्व वीज लोम-विलोम पुटितोक्त त्रिभुवन भूतिकरी प्रसीद महामाला मन्त्र जपे विनियोग

### कनकधारा ध्यान

सरसिज नियये सरोज हस्ते  
घवल तमाशुक गन्ध भाल्य शोमे  
भगवति हरि वल्लभे मनोजे  
त्रिभुवन भूति करि प्रसीद महाम् ॥

### कनकधारा-मन्त्र

ओम् व श्री व ऐं ही श्री वली कनकधाराये स्वाहा ।  
मैं तो केवल कनकधारा से सबधित मन्त्र ही अपनी डायरी में लिख पाया था परन्तु जैसा कि मुझे याद है प्रत्येक लक्ष्मी से सम्बधित अलग विनियोग, अलग ध्यान

तथा अलग मत्र था, इस प्रकार अष्ट लक्ष्मी के आठ मत्र व्यान, और विनियोग थे, जो कि प्रत्येक पण्डित अलग-अलग यत्र के सामने बैठकर सवधित अनुष्ठान कर रहे थे।

आठ दिन आपके निर्देशन में कार्य होता रहा, आपके सान्निध्य में जिन पण्डितों ने जिस प्रकार से कार्य किया था उनकी सराहना करता हूँ, वास्तव में—उन्होंने समर्पण भाव से कार्य किया था, आपकी अनुपस्थिति में उन पण्डितों से जब आपकी चर्चा चलती तो वे आपके प्रति अत्यन्त ही उच्च भाव रखते और अपना सौभाग्य मान रहे थे कि आपके निर्देशन में उन्हें कार्य अनुष्ठान करने का सौभाग्य हो रहा है।

नवें दिन आपने यज्ञ किया जिसमें विशेष भन्नों से आहुतिया दी गई थी, आपने जितनी सामग्री यज्ञ के लिए भगाई थी उसे देख आश्चर्यचित रह गया था कि इतनी सामग्री का सयोजन आपने किस प्रकार से किया होगा?

यज्ञ समाप्त होने के बाद मैं अपनी पत्नी सहित घर चला आया था, आपने एक 'अष्ट लक्ष्मी यत्र' मुझे दिया था जिसे अपनी दुकान पर स्थापित करने के लिए कहा था, मैंने वह यत्र अपनी दिल्ली स्थित दुकान में स्थापित कर दिया था, परन्तु फिर भी मेरा मन सशय ग्रस्त बना रहा था, क्योंकि मैं जब अपने परिवार की स्थिति देखता तो ऐसी आखों में आसू तैर जाते।

परन्तु वास्तव में ही आप मनपूत हैं। यत्र स्थापित करने के दस दिनों बाद ही एक अमेरिकन जवाहरात व्यापारी से भेट हुई और उसने एक सौदे में सहयोग का प्रस्ताव रखा। मैं आश्चर्यचित था कि इस समय भारत में चार-पाँच अरबपति फर्में हैं फिर वह मुझ से ही सौदे के लिए क्यों समझौता करना चाहता है, जबकि मैं तो पूरी तरह से दूटा हुआ था, परन्तु फिर मुझे भालूम हुआ कि उसने एक बार न्यूयार्क स्थित दुकान से सौदा खरीदा था और हमारी ईमानदारी उसके चित्त पर अकित हो गई थी।

उस एक सौदे में ही हमे बीस लाख स्पये मिले। इसके बाद मेरा कुछ ही सला खुला और उस अमेरिकन जौहरी के साथ भारत के पांच-छह राजघरानों से सौदे हुए और प्रत्येक सौदे में तीस से चालीस लाख का लाभ हुआ, इस प्रकार उस यत्र को स्थापित करने के दो महीनों के भीतर ही एक करोड़ का लाभ हो गया था।

मैं ही नहीं पूरा परिवार आश्चर्यचित था, और हमारी प्रत्येक सास के साथ आपका नाम निकलता था। हम अनुष्ठान को सम्पन्न हुए एक साल बीत गया है और आज मैं चापस उसी स्थिति में हूँ जिस स्थिति में मैं पहले था। मैंने अपनी चारों कोठिया छुड़वा ली हैं जो कि गिरवी रखी हुई थी, पुन कलकत्ता, भद्रास, वर्न्वाइ और न्यूयार्क की दुकानें खुल गई हैं और आर्थिक दृष्टि से मैं बत्यधिक समृद्ध हूँ, समाज में मेरा नाम आदर के साथ लिया जाने लगा है, और यह आपकी कृपा है कि मैं कुछ दिनों पूर्व जवाहरात संघ का अध्यक्ष चुना गया हूँ।

इस एक वर्ष में मुझे प्रत्येक सौदे में लाभ हुआ है, मैं जिस सौदे को भी मिट्टी

सम्पन्नता उसी सौदे में लाभ हो जाता, और इस एक वर्ष में मैं पुनः सम्पन्नता की स्थिति में पहुँच गया हूँ।

पडितजी मैं किन शब्दों में आपका आभार व्यक्त करूँ, मैं और मेरा परिवार तो भरा हुआ था, आर्थिक दृष्टि से हम भिखारी बन गए थे, सामाजिक दृष्टि से हम अयोग्य ठहरा दिये गए थे और स्वास्थ्य की दृष्टि से मैंने आत्महत्या का प्रयास कर लिया था, ऐसी स्थिति से इस एक वर्ष में जिस स्तर पर पहुँचा हूँ वह सब आपके ही प्रयत्नों का फल है। आपका आशीर्वाद मेरा सहायक रहा है।

वह 'अष्ट लक्ष्मी यत्र' मेरी दुकान पर स्थापित है, और इस समय पुनः चार सौ से ज्यादा नौकर तथा सौ से अधिक दलाल मेरे व्यापार में सहायक हैं, यह सब कुछ आपका ही प्रभाव है, मेरे शरीर का रोम-रोम आपका ऋणी है, और जीवन भर ऋणी रहेगा, आज जो कुछ भी मेरी सम्पत्ति है वह आपकी है, उस पर आपका ही अधिकार है। मैं तो केवल निगरानी रखने वाला हूँ, ऐसा ही भाव मेरे मन में है, इस सम्पत्ति का आप जिस प्रकार से भी उपयोग करना चाहे कर सकते हैं।

अनुष्ठान सम्पन्न होने पर मैं आपको कुछ भी दक्षिणा नहीं दे सका था और आज दक्षिणा देने की बात कहते हुए सकोच और हिचकिचाहट हो रही है कि आप जैसे पुर्यात्मा को मैं दे ही क्या सकता हूँ? मेरी सामर्थ्य ही क्या है? मैं तो उस दिन भी आपके सामने भिखारी की तरह खड़ा था और आज भी आपके सामने भिखारी के रूप में ही उपस्थित हूँ।

आप तो शायद मुझे भूल गये होगे क्योंकि आप प्रत्येक क्षण क्रियाशील हैं, मेरे जैसे सैकड़ों धनिक आपके चरणों में बैठे हुए हैं, अतः मेरा स्मरण आपको शायद ही रहा होगा, परन्तु मैं, मेरा परिवार, और मेरी आने वाली पीढ़िया आपको एक क्षण के लिए भी नहीं भुला पायेंगी, हमेशा आपके ऋणी हैं और ऋणी रहेंगे।

मैं इस पत्र के माध्यम से, अपनी आत्मा से निवेदन कर रहा हूँ कि मेरी इस समय जितनी भी सम्पत्ति है वह सब आपके चरणों में रखी हुई है, आप आज्ञा दें, आप जितनी भी सम्पत्ति को, जिस रूप में भी व्यय करने की आज्ञा देंगे वह मेरे लिए विना हिचकिचाहट के स्वीकार्य होगी।

मेरे दो स्वार्थ हैं—पहला स्वार्थ तो यह है कि मैं आपके चरणों में उपस्थित होना चाहता हूँ और इस उम्मीद के साथ उपस्थित होना चाहता हूँ कि आप मेरी ज्ञापड़ी में पधारें और आज्ञा दें कि जिससे मैं और मेरा परिवार धन्य हो सके, दूसरा स्वार्थ यह है कि आप इसी प्रकार के तीन अनुष्ठान और सम्पन्न करावें जिससे कि इस प्रकार के यत्र वर्मई, मद्रास, तथा न्यूयार्क की दुकान में स्थापित किए जा सकें।

इस घोर अनास्था के युग में केवल आप ही ऐसे प्रकाश स्तम्भ हैं जिनके प्रकाश में हम लोग आगे बढ़ सकते हैं। आपका स्नेह, आपकी कृपा और आपकी मधुरता मेरे हृदय पर अकित है। यद्यपि मैं शिष्य कहलाने के कानिल नहीं हूँ फिर भी मैं आपको

गुरु शब्द से सम्बोधित करना चाहता हूँ और मुझे आशा है आप इस अकिञ्चन के अनुरोध को ठुकरायेंगे नहीं।

मैं और मेरा पूरा परिवार आपके प्रति श्रद्धानन्द है, कृतज्ञ है, ऋणी है। हमारा सब कुछ आपका है, हम आपके ही हैं। यह मैं अपनी आत्मा से, विचारों को और भावनाओं को व्यक्त कर रहा हूँ।

मुझे विश्वास है आप मेरे अनुरोध को स्वीकार करते हुए मुझे चरणों में उपस्थित होने की स्वीकृति देंगे जिससे कि मैं आपको आदर सहित अपनी कुटिया में लाकर अपने जीवन को और अपने परिवार के जीवन को धन्य कर सकूँ।

आपका ही—  
( हेमचन्द्र अग्रवाल )

## सम्मोहन साधना

पूज्य बाबा जी,

सग्दर दण्डवत ।

वहुत समय बाद इस पत्र के द्वारा आपको याद कर रहा हूँ और अपना विनम्र प्रणाम इस पत्र के द्वारा भेज रहा हूँ। आपको मेरा स्मरण शायद ही होगा, परन्तु मैं बाज से छ वर्ष पूर्व आपको हरिहार मे मिला था जबकि आप वहा माताजी के साथ एक मास के प्रवास हेतु आये थे और गीता आश्रम मे ठहरे थे, सबसे पहले मैं वही पर आपसे मिला था ।

आपके बारे मे मैंने कई सामुओ और सन्यासियो से सुन रखा था कि आप तात्रिक क्षेत्र मे निष्णात हैं साथ-ही-साथ मत्र साधना मे भी आपने सर्वोच्च उपलब्धिया प्राप्त की हैं, मेरा कई बार विचार हुआ कि मैं जोधपुर आकर आपसे भेंट करूँ और आपने मन की व्यथा आपके सामने प्रकट करूँ, परन्तु प्रयत्न करने पर भी मैं उस तरफ नहीं आ सका । एक बार जब कुछ रूपयो का जुगाड़ हुआ तब मैं जोधपुर आया था, परन्तु उस समय आप जोधपुर से बाहर थे इसलिये मिलना नहीं हो सका । मैं वहा एक सप्ताह तक हनुमान आश्रम मे ठहरा था और नित्य आपके घर जाकर पता करता परन्तु यही उत्तर मिलता कि अभी आप बापस नहीं लौटे हैं, लौटने का कोई निश्चित कार्यक्रम भी नहीं है, अत मैं निराश हो बापस लौट आया था ।

वचन से ही मैं ब्रह्मचारी रहा हूँ, घर गृहस्थ का मोह मुझे प्रारम्भ से ही नहीं रहा, मैंने अपने जीवन को ईश्वर भजन मे ही विता देने का निश्चय किया था, इसलिये मैंने साध्य रूप धारण कर लिया था, परन्तु मेरे भगवे कपडे पहनना व्यर्थ ही रहा, क्योंकि मैं चाहकर भी अपने चित को एकाग्र नहीं कर पाया और ईश्वर भजन की तरफ उन्मुख नहीं हो पाया, मैं साधारण कार्यो मे लिप्त रहा और धन सचय करने की प्रवृत्ति-मेरे मन मे पनपती रही ।

फिर मेरे मन मे विचार आया कि मैं एक आश्रम स्थापित करूँ और उसके द्वारा जनता को मैं अपने विचारो से प्रेरित करूँ, जब भी मैं ऐसा सोचता तो अपने आप पर लज्जा आती, क्योंकि मुझमे कोई विशेष गुण नहीं था जिससे कि मैं इस उद्देश्य मे सफलता प्राप्त कर सकता ।

मैंने ऋषिकेश को ही अपना क्षेत्र चुन लिया, भगवे कपड़े पहनने के कारण रोटी की चिन्ता नहीं थी परन्तु मेरा मन पूरी तरह से उदास और निराशा से भरा हुआ था, मैं शाम को जब गगा टट पर बैठता तो अपने आप पर ग्लानि आती कि मेरा जीवन एक प्रकार से व्यर्थ ही गया। न तो मैं सही रूप में गृहस्थ बन सका और न मैं साधु जीवन के उच्च आदर्शों को ही प्राप्त कर सका। एक प्रकार से मैं अन्न पर पलने वाला पशु बनकर रह गया, न मैं तत्र मन्त्र के क्षेत्र में किसी को गुरु बना सका और न आध्यात्मिक क्षेत्र में सफलता प्राप्त कर सका।

यहाँ पर बाहर से भी कई साधु और सन्यासी आते, नित्य साय गगा-न्तट पर या गीता आश्रम में प्रवचन होते, हजारों लोग उन प्रवचनों को सुनने के लिये आते और वे मन्त्र मुग्ध से प्रवचन सुनते रहते, कई साधु घटों धारा प्रवाह बोलते। वे इस प्रकार तथ्यों को रखते कि जनता उनके पीछे दीवानी बनी रहती, यद्यपि मैं उन प्रवचनकर्ता के व्यक्तिगत जीवन से परिचित रहता। उनका जीवन किसी भी प्रकार से आदर्श नहीं था, वे व्यक्तिगत जीवन में कामुक, लोभी, और पतित थे, परन्तु जब वे प्रवचन देते तो पता नहीं उनके होठों पर कैसे सरस्वती आकर बैठ जाती कि वे बोलते ही रहते और श्रोता चुपचाप सुनते रहते। वे जो बात कहते उनका ज्ञान मुझे भी था परन्तु मैं उस ज्ञान को प्रवचन के माध्यम से सही रूप में नहीं रख पाता, यद्यपि मेरी इच्छा यही रहती कि मैं भी एक श्रेष्ठ प्रवचनकर्ता बनू, घटों धारा प्रवाह भाषण देता रहू और मेरे प्रवचनों को जनता दत्तचित्त होकर सुनती रहे। मैंने एक दो बार प्रयास भी किया, परन्तु पाच-सात मिनट से ज्यादा नहीं बोल सका। मेरे मन की एक ही लालसा थी कि मैं श्रेष्ठ प्रवचनकर्ता बनू और श्रोताओं को अपने प्रवचन के माध्यम से सम्मोहित-सा कर दू जिससे कि वे मेरे प्रवचनों के लिये दीवाने रहे।

इसके लिये मैं कई प्रवचनकर्ताओं और साधुओं से मिला, परन्तु किसी ने भी मुझे सन्तुष्टि नहीं दी, जब मैं उनके जीवन को कुरेदता तो वे मुझसे भी ज्यादा पतित और पाखण्डी प्रतीत होते। एक प्रकार से मुझे साधु जीवन पर ही धृणा हो आई थी।

ऐसे ही ऊहापोह में एक दण्डी स्वामी ने मेरी समस्या को सुनकर आपसे मिलने की राय दी, और आपका पता भी दिया, परन्तु यह मेरा दुर्भाग्य रहा कि जोधपुर जाने पर भी आपके दर्शन नहीं हो सके। मैं अपने दुर्भाग्य को कोसता हुआ बापस लौट आया।

अचानक एक दिन गीता आश्रम के ब्रह्मचारी धीरेन्द्र स्वामी से बातों-हीं-बातों में पता चला कि आप ऋषिकेश आये हुए हैं और लगभग एक भीने तक वही गगा के किनारे रहेंगे, मैं उस रात्रि को सो नहीं पाया, चाहता तो मैं यहीं था कि उसी समय आपसे मिलू, परन्तु रात्रि अधिक बीत जाने के कारण दूसरे दिन प्रात आपसे मिलने का निश्चय किया।

दूसरे दिन मैं प्रात आपके कक्ष में आया तो आप सन्ध्या बन्दन से निवृत्त हो आसन पर बैठे हुए किसी पुस्तक को पढ़ रहे थे। मैंने आकर आपके चरणों में प्रणाम

किया, आपने एक क्षण के लिये मुझे देखा और विना आशीर्वाद दिये पुन पुस्तक पढ़ने लग गये ।

मैं आध घटे तक बैठा रहा, फिर मैंने आपका ध्यान अपनी तरफ आकर्पित करना चाहा तो आपने छूटते ही जवाब दिया कि यहा व्यर्थ ही आये हो, जब तक तुम्हारे मन से पाखण्ड और ढोंग दूर नहीं होगा तब तक कुछ भी उपलब्धि सभव नहीं है ।

मैं कुछ नहीं बोला, फिर श्रोडी देर बाद आपसे निवेदन किया कि मैं तो केवल आपसे मिज्जने के लिये ही आया हूँ और कोई प्रयोजन नहीं है ।

आपने हसकर जवाब दिया यहा पर भी असत्य बोल रहे हो तो आगे जीवन में क्या करोगे ? साथ-ही-साथ आपने बता दिया कि तुम अच्छा प्रवचन करना चाहते हो, मन की भस्म यही है कि तुम्हारे भाषण से या प्रवचन से, लोग प्रेमावित हो और वे तुम्हे उच्च स्तर का साधु भान लें, जबकि तुम पतित, पाखण्डी और अवसरवादी हो ।

मैंने अपनी सारी रामकहानी आपके सामने रख दी । आपका ध्यान पुस्तक की तरफ था, मेरी बात आपने सुनी या नहीं, मैं नहीं कह सकता, पर मुझे आपको अपनी राम कहानी कहकर सन्तोष अवश्य हुआ, साथ ही आपने विना मेरा प्रश्न जाने मेरे बारे में या मेरी इच्छा के बारे में जो कुछ कह दिया था उससे मैं यह तो जान गया कि आप विशिष्ट व्यक्ति हैं और मेरा भला आपके द्वारा हो सकता है ।

उस समय तो मैं लौट आया । परन्तु मैं इस अवसर को हाथ से जाने नहीं देना चाहता था, अत मैंने निश्चय कर लिया कि गालिया खाकर भी आपकी सेवा करनी है और सेवा के द्वारा ही आपका मन जीतना है, जिससे कि जान से पूर्व कुछ साधना प्राप्त हो सके ।

मैं नित्य प्रात् साथ आपके कक्ष में आता और यथासभव सेवा करने का प्रयत्न करता । एक दिन आपके साथ गगा तट पर विचरण करने का भी अवसर मिला ।

आपको सभवत स्मरण होगा कि एक दिन एक विशिष्ट सन्यासी स्वामी प्रज्ञानन्द जी आपसे मिलने के लिये विशेष रूप से पद्धारे थे । उनके बारे में गीता आश्रम और ऋषिकेश मे कई बातें प्रचलित थीं कि वे विशिष्ट योगी हैं और अधिकाश समय ऋषिकेश से दस मील दूर एक पेड़ पर बैठकर साधना करते हैं । चौबीसो घटे वे पेड़ पर ही रहते हैं, यद्यपि उनके कुछ शिष्य नीचे कुटिया मे रहते हैं, परन्तु बहुत ही कम लोगों ने उन्हे पेड़ से नीचे उतरते हुए देखा था । वे कव मल-मूत्र विसर्जन करते हैं किसी को कोई ज्ञान नहीं था । जो भी साधु ऋषिकेश आता वह पैंदल प्रज्ञानन्द जी के दर्शन करने अवश्य जाता, उनकी सिद्धियो के बारे में ऋषिकेश मे काफी चर्चाएं थीं, परन्तु जब उस दिन वे स्वयं नियम तोड़कर पैंदल आपसे मिलने के लिये आये तो ऋषिकेश के हजारो निवासी और साधु महात्मा आश्चर्यचकित रह गये, और उसी दिन ऋषिकेश को आपकी महानता के बारे में पता चला था । प्रज्ञानन्द जी लगभग चार घटे आपसे एकान्त मे बातचीत करते रहे । इसकी भनक पड़ते ही

आपके कक्ष के बाहर हजारों नागरिकों और साधुओं की भीड़ लग गई थी। जब वे बाहर निकले तो उनके चेहरे पर अपूर्व आभा विद्यमान थी। एक महात्मा ने उनसे जब आपके बारे में पूछा तो उन्होंने इतना ही उत्तर दिया कि मैं अपने गुरु भाई से मिलने के लिये आया था, विशेषकर ये मेरे अग्रज हैं, अत इनसे निर्देश लेने और कुछ सीखने के लिये ही आया था, इसके अतिरिक्त उन्होंने कुछ भी कहने से इन्कार कर दिया और तेज कदमों से अपने गत्तव्य की ओर चले गये।

उस दिन लोगों ने आपकी महानता के बारे में पहली बार जाना और उसके बाद तो चौबीसों घटे आपके कक्ष के बाहर भीड़ लगी रही, इससे आप कुछ परेशान भी रहे, परन्तु इससे लाभ यह हुआ कि मुझे कुछ अधिक सेवा करने का मौका मिल गया।

जब आपके साधना समय में भी व्यवधान पड़ने लगा तो आपने घर जाने का निश्चय कर लिया। जिस दिन आपने यह निश्चय किया उसी दिन एक विशिष्ट सन्यासी आपसे मिलने के लिये आये थे, यद्यपि उनका नाम मुझे नहीं है परन्तु वाद में मुझे कहा कि वे किसी समय आपके शिष्य रह चुके थे और आपसे मिलने के लिये विशेष रूप से यमुनोन्नी से भी दूर अपने स्थान से आपसे मिलने के लिये आये थे। जब आप उनसे बातचीत कर रहे थे तब मैं भी सौभाग्य से उपस्थित था, उस दिन मेरा सौभाग्य ही था कि कक्ष में आपके शिष्य, आप, मैं और माताजी के अलावा और कोई नहीं था।

उन्होंने सम्मोहन साधना की चर्चा चलाई थी, तो आपने विस्तार से इस साधना के बारे में उन्हें समझाया।

आपने बताया कि सम्मोहन दो प्रकार का होता है, एक तो व्यक्ति सम्मोहन और दूसरा 'समूह सम्मोहन'। सम्मोहन के भाध्यम से किसी भी व्यक्ति को अपने मन के अनुकूल बनाया जा सकता है, इस प्रकार का प्रयोग करने के बाद सामने वाले व्यक्ति को जो कुछ भी कहा जाता है वह उसी प्रकार से करता रहता है, उसकी सारी इच्छाएं विचार और तर्क समाप्त हो जाते हैं, केवल उसका ध्येय सम्मोहनकर्ता के कथन का पालन करना रह जाता है।

दूसरा सम्मोहन 'समूह-सम्मोहन' होता है इसमें सर्वप्रथम स्वयं पर सम्मोहन करना होता है। फिर वह सम्मोहनकर्ता जहा तक दृष्टि डालता है उस दृष्टिपथ में जितने भी लोग होते हैं वे सब सम्मोहित से रहते हैं, इस सम्मोहन के द्वारा विशाल भीड़ भी सम्मोहित की जा सकती है, और उस भीड़ से भनवाहा कार्य लिया जा सकता है, उस समय उस भीड़ की इच्छा और तर्क समाप्त हो जाते हैं, केवल वह सम्मोहनकर्ता की इच्छाओं का दास बन जाती है, ऐसे समय में यदि कोई साधु या सन्यासी प्रवचन करता है। तो सामने चाहे हजारों, लाखों व्यक्ति बैठे हों, वे चुपचाप उस प्रवचन को सुनते रहते हैं चाहे वह प्रवचन नीरस हो, परन्तु उस भीड़ को वह प्रवचन अद्वितीय लगता है और वह भीड़ यहीं चाहती है कि इस प्रकार बैठे रहे और सुनते रहे। उस समय

उनकी सार्व ज्ञानेन्द्रिया और कर्मेन्द्रिया उस सम्मोहनकर्त्ता के अनुकूल बन जाती हैं तथा ऐसे सभी वह जो भी आदेश या सलाह देता है भीड़ उस सलाह को मानने में प्रसन्नता अनुभव करती है।

आपने आगे समझाते हुए बताया कि यदि किसी व्यक्ति को जन मानस पर अपना नियन्त्रण स्थापित करना है, या जन मानस को अपने नियन्त्रण में रखना है, या उसे अपना अनुयायी बनाना है तो इस प्रकार की साधना सर्वश्रेष्ठ रहती है, परन्तु इसमें इस बात का ध्यान रखा जाना चाहिए कि भीड़ को यह मालूम नहीं होने देना चाहिए कि आपने उस भीड़ पर सम्मोहन किया है।

इसके बाद आपने इस साधना की क्रिया भी अपने शिष्य को समझाई थी, आपने बताया था कि इस प्रकार की साधना शुक्ल पक्ष की पचमी से प्रारम्भ होती है और इसमें एक महीना लग जाता है।

सर्वप्रथम पचमी को प्रात उठकर स्नानादि कर पीली धोती पहन लेनी चाहिए, इसके अलावा शरीर पर अन्य किसी भी प्रकार का वस्त्र नहीं होना चाहिए। सूर्योदय से पूर्व ही पूर्व दिशा की ओर किसी भी टट वृक्ष या आक के वृक्ष को निमित्ति कर उसकी एक डाली तोड़कर ले आनी चाहिए, यह डाली हरी होनी चाहिए।

तत्पश्चात् सूर्योदय से पूर्व ही नदी तट पर जाकर कमर तक पानी में खड़े होकर दर्थे हाथ में वह डाली ले ले और वाहने हाथ में मूरे की माला ले ले। इस माला में चौपन मनके होने चाहिए, जो कि मूरे के मनके होते हैं, मूरा रत्न लाल रग का होता है। और ज्योतिष की दृष्टि से इसे मगल का रत्न माना जाता है।

इसके बाद निम्नलिखित मन्त्र की इक्कीस मालाएं उसी जल में खड़े-खड़े जपनी चाहिए, खड़े होते समय पानी कमर तक होना चाहिए और पूर्व की तरफ मुह करके खड़ा होना चाहिए। चौपन मन्त्र जपने पर एक माला कही जाती है, यदि नदी नहीं हो तो तालाब में या अपने घर में पानी का कुण्ड बनाकर उसमें खड़े होकर भी यह साधना की जा सकती है, परन्तु इस बात का ध्यान रखें कि जब तक इक्कीस मालाएं समाप्त न हो जाय तब तक किसी से भी बातचीत न करें और कितना ही जरूरी काम हो पानी के बाहर न निकलें, इसके अलावा किसी की आवाज आने पर या प्रश्न पूछे जाने पर भी जबाब न दें, केवल मुह से स्फुटित रूप में मन जप करते रहे। यह प्रयोग तीस दिन का होता है।

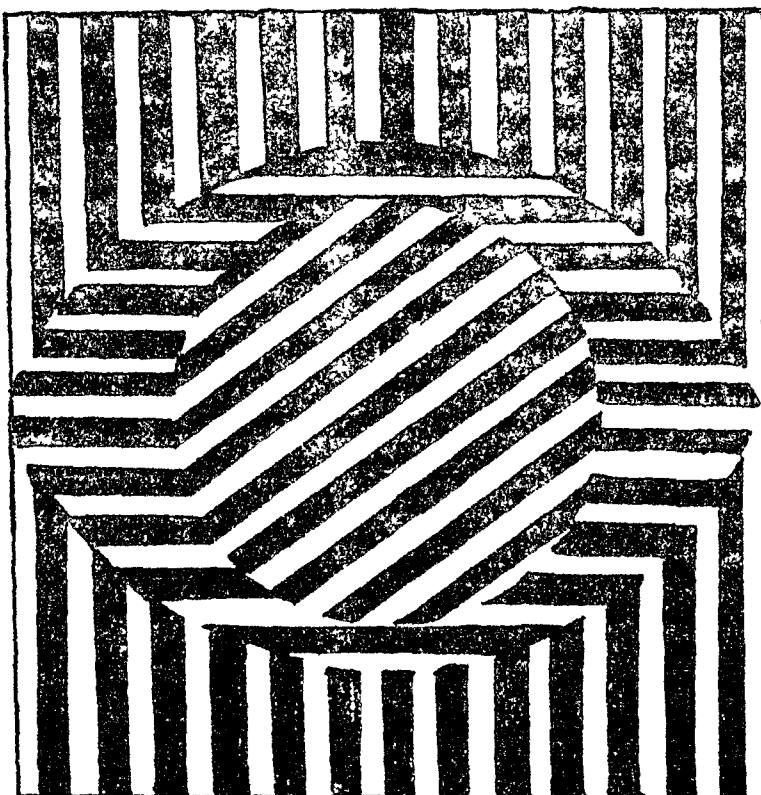
साधना काल में पूर्णत ब्रह्मचर्य रखें, साथ ही इन तीस दिनों में स्त्री जाति से बातचीत न करें, चाहे वह मा, वहिन, पत्नी ही क्यों न हो, यथासम्भव चौबीसो घटे तक भीन ब्रत रखें।

इसके अलावा एक समय भोजन करें और लोम-विलोम गति से भोजन किया करें, अर्थात् पहले दिन एक तोला भोजन करें, दूसरे दिन दो तोला। इस प्रकार पन्द्रहवें दिन पन्द्रह तोला भोजन करें, फिर सोहलवें दिन चौदह तोला और इस प्रकार कम करते-करते तीसवें दिन एक तोला भोजन करें, इसके अलावा अन्य किसी भी प्रकार

का कोई अन्त न ले। दूध, पेय पदार्थ आदि का भी सेवन न करे, साथ ही साधना काल में किसी भी प्रकार की नशीली वस्तु का सेवन भी वर्ज्य है।

साधना में प्रात् सूर्योदय से पूर्व ही जल में खड़े होकर इक्कीस मालाएं फेरे। इसी प्रकार सूर्यास्त के बाद भी जल में खड़े होकर इक्कीस मालाओं का प्रयोग करें। दिन में मध्याह्न काल में अर्थात् वारह वजे से प्रारम्भ करके भी इक्कीस मालाएं फेरें, दोपहर को तथा मध्य रात्रि को जप आसन पर बैठकर किया जाता है, साथ और प्रात् जल में खड़े होकर किया जाना चाहिए।

आसन पीले रंग का होना चाहिए और पूर्व की ओर मुह करके बैठना चाहिए, पद्मासन का प्रयोग आवश्यक है, आद्ये स्थिर और कमर सीधी रहनी चाहिए, साधक को किसी भी प्रकार के आलस्य आदि से ग्रस्त नहीं होना चाहिए। एक महीने तक किसी भी पुरुष या स्त्री से सम्भाषण न करे और भोजन स्वयं के द्वारा पका हुआ या



सम्मोहन आधार—इच्छा कम्पन

किसी शुद्ध वर्ण के पुरुष द्वारा पकाया हुआ ग्रहण किया जा सकता है, भोजन सात्विक और शुद्ध शाकाहारी होना चाहिए ।

जब तीस दिन समाप्त हो जाय तो इकतीसवें दिन किसी ऐसे माध्यम को चुनना चाहिए जो कि सीधा सरल व्यक्ति हो । उसकी उम्र बीस वर्ष से कम हो तो ज्यादा उचित रहेगा । यथासभव माध्यम चौदह-पन्द्रह वर्ष का बालक उचित रहता है, उस दिन उस बालक को सामने विठाकर मन-ही-मन मन का पात्र वार जप करना चाहिए और फिर मन में ही उस बालक को आज्ञा देनी चाहिए कि खड़ा होकर जल का लोटा भरकर ला । या ऐसा ही कोई सामान्य कार्य मन-ही-मन उस बालक को सम्बोधित करके कहना चाहिए, इसके लिए उस बालक को नाम उच्चारण करने की आवश्यकता नहीं है, केवल उस पर दृष्टि डालना या उसकी आख में आख डालकर मन-ही-मन कहना पर्याप्त होता है, ज्योही आप मन में आज्ञा देंगे त्योही वह बालक यदि उठकर आपका वताया हुआ कार्य कर लेता है तो प्रयोग मफल समझना चाहिए ।

इसी प्रकार जब किसी समूह पर सम्मोहन करना होता है, तो समूह को सम्बोधित करने से पूर्व आखें बद कर अपने स्वय के चित्र को या अपने स्वय के स्वरूप को आखो के सामने लाकर पात्र वार मन जप करना चाहिए, उसके बाद तुरन्त आखें खोलकर सामने बैठे जन समूह पर दृष्टि डालनी चाहिए, उस समय आपकी दृष्टि जितनी दूर तक की भीड़ को देखेगी वह पूरी भीड़ आपके प्रति सम्मोहित रहेगी, उसके बाद आप जो भी आज्ञा देंगे वह समूह उस आज्ञा को क्रियान्वित करने में सौभाग्य समझेगी, या आप जो भी कहेंगे वह उनके लिए अमृत के समान होगा, आपके प्रवचन को वह भीड़ शान्ति से ध्यानपूर्वक सुनेगी और उस भीड़ को एक विशेष प्रकार का आनन्द अनुभव होगा । वे सारे सम्मोहित व्यक्ति वार-वार यही चाहेगे कि आपकी बात को सुनते रहे, प्रवचन समाप्त होने के बाद भी वे एक अजीब-सा आकर्षण आपके प्रति अनुभव करेंगे और वे वार-वार आपको देखने, आपकी सेवा करने या आपकी बात सुनने के लिये लालायित रहेंगे, उनमें तर्क करने या विरोध करने की क्षमता ही नहीं रहेगी । एक उच्चस्तरीय प्रवचनकर्ता के लिये यह साधना अत्यन्त आवश्यक है जिससे वह देश और विदेश में अपने भाषण के द्वारा लोकप्रियता प्राप्त कर सके ।

आपने निम्नलिखित मन अपने शिष्य को वताया था जो मैंने मन-ही-मन उसी समय स्मरण रखा था और बाहर आकर उसे अपनी डायरी में अकित कर दिया था ।

### मंत्र

ओम श्री भैरवी भद्राक्षी आत्मन्, सर्व जन वाक्  
चक्षु, श्रोत्र मन स्तभय स्तभय, वाधय वाधय मम  
शब्दानुग्रह दर्शय दर्शय दृष्टिपथात् सम्मोहनाय  
सम्मोहनाय कुरु कुरु स्वाहा ।

मैं इसी प्रकार की साधना जानने के लिये ही तो भटक रहा था और उस दिन अनायास ही मेरी इच्छा पूर्ण हो गई थी। मैं आपके प्रति क्रतज्ज्ञ था कि आपने प्रत्यक्ष रूप से भले ही न सही परन्तु मेरे मन की बात जानकर अप्रत्यक्ष रूप से मुझे मेरी मनोवाचित साधना बता दी थी।

उसके तीसरे दिन ही आने जाने वाले लोगों की भीड़ से परेशान होकर आप जोधपुर के लिये प्रस्थान कर गये थे।

मैंने उसके बाद शुक्ल पक्ष की पचमी से आपने जो विधि बताई थी उसके अनुसार साधना प्रारम्भ कर दी थी। वहां पर एक फोटोग्राफर के द्वारा आपका जो चित्र लिया गया था उससे मैंने एक प्रति प्राप्त की थी और उसे अपनी कुटिया में रखकर आपको गुरु मान प्रार्थना निवेदन कर साधना कार्य प्रारम्भ कर दिया था।



शक्ति चक्र

साधना निर्विघ्न समाप्त हो गई थी, यद्यपि मुझे आशका थी कि मैं सफल हो सकूगा या नहीं, परन्तु आपके मौन आशीर्वाद से इस साधना में सफल हो सका, और साधना के बाद मैंने व्यक्ति सम्मोहन किया और मन-ही-मन जो आदेश दिया उसका

उसने अक्षरण पालन कर दिया था। जब तक उसने मेरी आज्ञा का पालन नहीं किया तब तक वह कमसाता रहा और कुछ ऐसा लगा जैसे कि कोई शक्ति उसे इस कार्य को करने के लिये प्रेरित कर रही है, जब उसने आज्ञा का पालन कर लिया तभी उसके चेहरे पर मन्त्रोप की झलक दिखाई दी।

साधना समाजिके बाद पन्द्रह दिन तक मैं विश्वाम करता रहा और सोलहवें दिन मैंने गीता आश्रम के सचालकों से नियेदन किया नि आज मैं सायकाल को प्रवचन देना चाहता हूँ, वहां पर कोई-न-कोई प्रवचनरूपी आते रहते हैं अत जब मैंने अपनी बात उनके सामने रखी तो वे विश्वाम नहीं कर सके कि मैं एक घटे तक धाराप्रवाह प्रवचन दे सकूगा, परन्तु मैंने उन्हें किसी प्रकार आश्वस्त किया और उस दिन घड़कते हृदय से व्यासपीठ पर जा बैठा।

मेरे सामने अपार जनसमूह बैठा हुआ था। एक क्षण के लिये मैं घबरा गया, परन्तु मैंने अपने सामने आपका चिंग लगा रखा था अत मन-ही-मन आपको प्रणाम किया और प्रार्थना की कि मुझे पूरी सफलता प्राप्त हो, इसके बाद मैंने स्वयं को सम्मोहित कर अपनी दृष्टि सामने फैसे हुए जनसमूह पर डाली, अचानक एक विद्युत तरण-सी मेरे सारे शरीर मे दीड़ गई और कुछ ऐसा लगा कि जैसे मेरे होठ कुछ कहने के लिये उतावले हो। मैंने प्रवचन प्रारंभ किया और धाराप्रवाह रूप से निर्धारित विषय पर बोनता रहा। मुझे जात ही नहीं हो सका कि समय कैसे बीत गया। उस दिन मैं एक घटा बीस मिनट तक धाराप्रवाहित रूप से प्रतिपाद्य विषय पर बोलता गया और अपार जनसमूह शान्त चित्त से सुनता रहा। पूरे भाषण के दौरान इतनी शान्ति रही कि यदि सुई भी गिरती तो उसकी आवाज स्पष्ट सुनाई पड़ सकती थी, उस समा मे सैकड़ों साधु और सन्यासी भी थे, प्रवचन समाप्त होने पर उन सन्यासियों ने मुझे घेर लिया और मेरे प्रवचन की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। प्रवचन समाप्त होने पर पहली बार परम्परा तोड़ कर श्रोताओं ने हृष्प से तालिया बजायी थी जो कि मेरे प्रवचन के प्रशाव को स्पष्ट व्यक्त कर रही थी।

परन्तु मुझे कुछ भी ध्यान नहीं था कि मैं क्या बोला था और किस प्रकार से बोला था, पर गीता आश्रम के सचालकों ने मुझे बताया कि आप निर्धारित विषय पर ही बराबर बोलते रहे थे, सबधित विषय से कहीं पर भटके नहीं थे। मैं स्वयं अपने आप आश्चर्यचकित था।

दूसरे दिन प्रात् से ही श्रोता मुझ मिलने के लिए उतावले थे और जहा भी मैं जाता मुझे घेर लेते। वे मेरा दर्शन कर अपना सौभाग्य समझने लगे थे। उनकी राय मैं बिद्वान् और उच्चकोटि का अद्येता हूँ, तभी तो मैं इस प्रकार के कठिन विषय पर इतनी गहराई और स्पष्टता के साथ बोल सका था।

इसके बाद मैंने एक महीने तक वहां निरन्तर प्रवचन किया, सचालकों ने यह उचित समझा कि मेरे प्रवचन को टेप कर लिया जाए, जिससे कि भविष्य मे भी इसका उपयोग हो सके।

आज मैं एक श्रेष्ठ आश्रम का सचालक हूँ, सैकड़ों शिष्य मेरे पास हैं आर्थिक दृष्टि से मैं सम्पन्न हूँ और लोगों के अनुसार मेरी जीभ पर सरस्वती विराजमान है, परन्तु मैं अपने आपको समझ रहा हूँ कि मैं क्या हूँ ।

मेरा मन बराबर अपने आपको धिक्कार रहा है कि मैंने छूप करके, चोरी से यह साधना आपसे सीखी है, विना आपकी स्पष्ट आज्ञा के इस साधना को सम्पन्न किया है । जब भी मैं अकेला होता हूँ मेरा मन पाश्चाताप की अग्नि मे जलने लगता है, अब मैंने यह अनुभव कर लिया कि जब तक पत्र के माध्यम से मैं आपसे क्षमा याचना कर लूँ तब तक मेरे मन को शान्ति नहीं मिल सकेगी ।

निश्चय ही मैं आपके प्रति अपराधी हूँ और इस अपमाध की आप जो भी सजा देना चाहे वह स्वीकार्य होगी । आप आज्ञा दें मैं स्वयं आपके चरणों मे उपस्थित होकर क्षमा याचना करूँ और तब तक आपके चरणों मे पढ़ा रहूँ जब तक कि आप क्षमा नहीं कर देंगे ।

इस पत्र के साथ मैं अपना पता लिखा लिफाफा सलग्न कर रहा हूँ । यद्यपि आप सर्वज्ञ हैं, आपसे कुछ भी छिपा नहीं है परन्तु मैं आपके सामने बालक के समान उपस्थित हुआ हूँ, इसीलिए यह पत्र और अपना पता लिखा लिफाफा भेजने की धृष्टता कर रहा हूँ । जब तक आपकी आज्ञा प्राप्त नहीं होगी तब तक मेरा मन इसी प्रकार छटपटाता रहेगा ।

मैं तो अपने मन से आपको गुरु मानता हूँ और पूर्ण क्षमता तथा सर्वांग सहित आपके प्रति मनन करता हुआ याचना करता हूँ कि आप मुझे अभय दें जिससे कि मैं अपने अपराध का प्रायश्चित्त कर सकूँ और आपके चरणों मे बैठकर कुछ ज्ञान प्राप्त कर सकूँ ।

अर्किचन  
साधु अमृतानन्द

## अघोर गौरी-साधना

आदरणीय पण्डित जी,

सादर चरण स्पर्श ।

आपसे विछुड़े हुए लगभग एक वर्ष होने को आया है । मुझसे ऐसी क्या त्रुटि हुई है कि मेरे पत्र का उत्तर भी मुझे प्राप्त नहीं हो रहा है, इस एक वर्ष में मैंने कितने ही पत्र आपको दिये होंगे, परन्तु यह मेरा दुर्भाग्य है कि मुझे एक भी पत्र का उत्तर प्राप्त नहीं हो सका । मुझसे यदि कोई गलती हो गई हो तो मैं उसके लिए क्षमा प्रार्थी हूँ । मैं तो बालक हूँ और बालक हमेशा गलती करते रहते हैं आप मेरे लिए आदरणीय हैं और एक प्रकार से मेरे सर्वस्व हैं । अत आपसे अलग रहकर मैं जीवित नहीं रहना चाहता । मुझसे जो कुछ अपराध हुआ हो वह मुझे बतायें जिससे कि मैं उसका प्रायशिक्त करूँ ।

मुझे वे दिन याद हैं जब मैं आपके सान्निध्य में दो साल रहा था और आपसे काफी कुछ ज्ञान मुझे मिला था । यद्यपि मैंने आपसे मन्त्र साधना ही सीखी थी परन्तु मैं मन-ही-मन इसलिए चिन्तित था कि मेरी एक ही बहिन है जो कि रंग से काली और दिमाग से कुछ कमजोर है, इसलिए बहुत प्रयत्न करने पर भी उसका कहीं विवाह नहीं हो रहा था । मेरे पिताजी ने उसके विवाह के लिए अत्यधिक प्रयत्न किए थे पर अन्त मेरे थक गये थे और यह निश्चय हो गया था कि अब इसका विवाह होना सम्भव नहीं है ।

उसके विवाह के लिए मेरे पिता अपने मकान को गिरवी रखकर भी दहेज की पूर्ति में हिचकिचा नहीं रहे थे । उन्होंने कई जगह इस प्रकार आश्वासन भी दिया था कि आप जो भी चाहेंगे मैं यथासम्भव उसकी पूर्ति करूँगा, परन्तु फिर भी मेरे पिता अपने उद्देश्य में सफलता प्राप्त नहीं कर पाये थे ।

जिसके घर मेरे जवान बहिन हो और उसका विवाह नहीं हो तो माता-पिता या भाई को कितना मानसिक दुख होता है इसकी कल्पना वही कर सकता है जो मुक्त भोगी हो, परन्तु मुझे रह-रहकर एक विचार आ रहा था कि यदि मैं आपके सामने इस समस्या को रखूँ तो शायद उसका समाधान मिल सकेगा ।

पिछली बार जब मैं आपके पास आया था तो मैं इस समस्या से बहुत अधिक

दुखी और परेशान था, परन्तु मेरी भात्मा इस बात के लिए तैयार नहीं थी कि मैं वपने स्वार्थ के लिए आपको परेशान करूँ। परन्तु जब एक दिन अधोर मन्त्रों की चर्चा चली तो आपने ऐसे ही एक मन्त्र की चर्चा की थी कि वह मन्त्र सामान्य दिखाई देता है, परन्तु चिवाह कार्य में पूर्ण सफलतादायक है। यह बात सुनकर जहा मुझे मन-ही-मन प्रसन्नता हुई, वही मेरी आखो में आसू भी छलछला आये। मुझे उस एक क्षण



अधोर गौरी देवी

मेरे अपनी बहिन का स्मरण हो आया था। मैं उठकर एक तरफ चला गया था। मैं अपने आसु आपको दिखाकर परेशान नहीं करता चाहता था।

आपने बताया था कि यह मन्त्र अघोर मन्त्रों में विवाह मन्त्र कहलाता है और यदि नित्य इस मन्त्र की एक सौ आठ मालायें फेरें तो ग्यारह दिनों के भीतर-भीतर अनुकूल समाचार प्राप्त हो सकते हैं, पर आपने यह बताया था कि इस मन्त्र का जप वही करें जिनका विवाह होना है। आपने जो मन्त्र बताया था वह इस प्रकार था

### अघोर विवाह मन्त्र

मखनो हाथी जर्द अम्बारी  
उस पर बैठी कमाल खा की सवारी  
कमाल खा कमाल खा मुगल पठान  
बैठे चबूतरे पढ़े कुरान  
हजार काम दुनिया का करे  
एक काम मेरा कर  
न करे तो तीन लाख तैतीस हजार पैगम्बरो की दुहाई।

मैंने इस मन्त्र को एक अलग कागज पर नोट कर लिया था और उसके तीसरे दिन आपकी आज्ञा से मैं अपने घर चला आया था।

घर आने पर मैंने देखा कि मेरी घर की स्थिति में कोई सुधार नहीं हुआ है और पिताजी बेटी के विवाह की चिन्ता में घुलकर आधे हों गये हैं और मेरी मां ने खाट पकड़ ली है।

मैंने आपके बताये हुये मन्त्र का प्रयोग करने का निश्चय किया। यद्यपि यह मेरा अपराध ही है कि बिना आपको सूचना दिये इस प्रकार का प्रयोग अपनी बहिन से करवाया परन्तु इसके पीछे मेरा व्यक्तिगत स्वार्थ था और उससे भी ज्यादा यह स्वार्थ था कि मेरे मातान्पिता की चिन्ता दूर हो सके।

मैंने अपनी बहिन को इस मन्त्र के बारे में बताया तो उसने इस मन्त्र को जपने से मना कर दिया, इससे पूर्व उसने सैकड़ों ऋतृतप पूजा-पाठ आदि कर लिये थे और एक प्रकार से वह इन सबसे निराश हो गई थी। उसे विश्वास हो गया था कि यह मन्त्र-तन्त्र झूठे हैं, इनमें किसी प्रकार की कोई सत्यता नहीं है, पर मेरे आश्वासन देने पर कि यह अन्तिम बार है, मेरा कहना मानकर इस मन्त्र का जप ग्यारह दिन कर ले। यदि इस बार भी सफलता नहीं मिली तो भविष्य में तुझे मैं कुछ भी नहीं कहूँगा।

मेरे कहने से उसने इस मन्त्र का जप प्रारम्भ किया। आश्चर्य की बात यह है कि नवें दिन ही मेरे दूर के चाचाजी ने एक लड़के के बारे में सूचना दी। उनका

धर सम्पन्न और हमसे बढ़ा-चढ़ा था, लड़का योग्य तथा उच्च पद पर नौकरी कर रहा था, इसलिए मेरे पिताजी को विल्कुल विश्वास नहीं था कि वहां सगाई हो सकेगी, परन्तु चाचाजी और मेरे विशेष आग्रह पर वे गये और प्रसन्नता की बात यह है कि उन्होंने सम्बन्ध स्वीकार कर लिया।

इस अनुष्ठान को प्रारम्भ हुये ग्यारह दिन बीते थे कि लड़के बालों ने मेरे धर आ वहिन को देखकर स्वीकृति दे दी। उन्होंने कहा हमें रग-रूप की जरूरत नहीं है, हमें तो सुशील कन्या चाहिए, दहेज की भी इच्छा नहीं है, क्योंकि भगवान की पूरी कृपा है।

ग्यारहवें दिन मेरी वहिन ने अनुष्ठान पूरा किया और उसके एक महीने बाद ही विवाह सम्पन्न हो गया। विवाह निर्विघ्न समाप्त हुआ और अब वहिन अपने समुराल हैं तथा वहा पूरी तरह से सुखी हैं।

मैंने यह पहली बार अनुभव किया कि अधोर मन्त्र भी अपने आप में चमत्कारिक है। उस दिन बातों-हीं-बातों में आपसे यह मन्त्र प्राप्त हो गया था और इससे एक बार धर का कल्याण हो गया है।

वास्तव में ही आपके साथ रहने से प्रत्येक क्षण मूल्यवान बन जाता है। बात-चीत के प्रसंग में भी हम शिष्यों को कब कौन-सा रत्न प्राप्त हो जाए, कुछ भी नहीं कहा जा सकता।

यद्यपि मुझसे गलती हुई है कि मैंने इस मन्त्र का जप विना आपकी अनुमति के अपनी वहिन से सम्पन्न कराया है पर इसके लिए इतनी कठोर सजा न दें कि मुझे आपके चरणों से विछुड़ना पड़े।

मैं अपने अपराष्ट के लिए बार-बार क्षमा प्रार्थी हूँ। आप मेरे अपराष्ट को क्षमा कर पत्र का उत्तर दें और स्वीकृति दें जिससे कि मैं आपके चरणों में उपस्थित हो सकूँ।

आपका ही,  
कृष्ण गोपाल 'यदु'

## काल ज्ञान मन्त्र

आदरणीय गुरुदेव,

सादर भरण स्पर्श ।

यह मेरा सौभाग्य है कि आपका वरत्तहस्त पिछले बीस वर्षों से मुझ पर है और इन बीस वर्षों में समय-नमय पर आपने जो मुझे तत्त्व-मन्त्र का ज्ञान दिया है उसके लिए मैं आपका आभारी हूँ, केवल मात्र आभारी शब्द कहने से मैं उत्कृष्ण नहीं हो सकता, क्योंकि मेरे जीवन का निर्माण और इस जीवन की सरचना आपकी कृपा के फलस्वरूप ही है, फलस्वरूप मेरा पूरा जीवन आपको समर्पित है ।

मैं कई वर्षों से आपसे 'काल ज्ञान मन्त्र' सीखना चाहता था क्योंकि मैंने कई ग्रन्थों में काल ज्ञान मन्त्र के बारे में काफी कुछ सुन रखा था, परन्तु कहीं से भी मुझे काल ज्ञान मन्त्र प्राप्त नहीं हो सका था, इसके लिए मैंने तन्त्र-मन्त्र की कई पुस्तकें टटोली परन्तु इस प्रकार का मन्त्र मुझे प्राप्त नहीं हो सका ।

मुझे यह विश्वास था कि आपको अवश्य ही काल ज्ञान मन्त्र का ज्ञान होगा, परन्तु मेरी हिम्मत नहीं हो रही थी कि मैं इस सम्बन्ध में आपसे निवेदन करूँ ।

परन्तु इस बार जब आपने मुझे अभ्यर्थना दिया तो मैंने सकुचा कर अपने मन की बात आपके सामने रख दी । आपने जब काल ज्ञान मन्त्र के बारे में सुना तो मेरे चेहरे की ओर दो क्षण के लिए देखने लगे । मैं उन दो क्षणों में पसीने-पसीने हो गया था कि शायद मुझसे कोई त्रुटि हो गई है, क्योंकि मैं आपकी उस भेदिनी वृष्टि का सामना नहीं कर पा रहा था ।

परन्तु यह मेरा सौभाग्य था कि आपने काल ज्ञान मन्त्र सीखने की स्वीकृति दी, साथ ही इस मन्त्र के बारे में बताया कि यह मन्त्र अत्यन्त गोपनीय है और जो साधक उच्चस्तरीय साधना सम्पन्न कर लेता है, तब उसे काल ज्ञान मन्त्र की साधना सिखाई जाती है । इस मन्त्र की साधना करने के बाद ही वह साधक सिद्धांशम में प्रवेश करने का अधिकारी होता है ।

आपने बताया था कि इस मन्त्र की इक्कीस मालाएं नित्य फेरनी आवश्यक होती हैं, आसन सूती या रेशमी किसी भी प्रकार का हो सकता है, इसका प्रयोग

प्रयोग के समय अन्य किसी भी प्रकार के विषि-विद्वान् की आवश्यकता नहीं होती, केवल सामने गुरुगुल धूप लगाते रहना चाहिये ।

आपने यह भी बताया था कि एक महीने तक इसका अनुष्ठान करने पर यह मन्त्र सिद्ध हो जाता है और इसके साथ-ही-साथ वह व्यक्ति भी सिद्ध पुरुष हो जाता है, और किसी को देखते ही उसका भूत, वर्तमान और भविष्य उसकी आखो के सामने स्पष्ट हो जाता है । उस साधक से कुछ भी छिपा नहीं रहता और वह सामने वाले व्यक्ति की गोपनीय-से-गोपनीय बात जान लेता है, इसी प्रकार वह भविष्य के प्रत्येक क्षण को अपनी आखो के सामने देख लेता है और वह जो कुछ भी कहता है भविष्य में सत्य होता है, एक प्रकार से कहा जाय तो उसका वचन मिथ्या नहीं जाता ।

आपने यह भी बताया था कि यह मन्त्र अत्यन्त गोपनीय होता है और सामान्य रूप से इस मन्त्र का ज्ञान साधक को नहीं दिया जाता, जब तक कि सिद्धाश्रम स्थित गुरु की आज्ञा प्राप्त नहीं हो जाती, सम्भवत यह मेरे पूर्व जन्मो का पुण्योदय था कि आपने मेरी प्रार्थना को स्वीकार करते हुए मुझे काल ज्ञान मन्त्र प्रदान किया था ।

आपने जो मुझे मन्त्र बताया था वह इस प्रकार था

### काल ज्ञान मन्त्र

ओम नमो भगवते ब्रह्मानन्द पद गोलोकादि असर्वा ब्रह्माण्ड भुवन नाथाय शशाक शख गोक्षीर कर्पूर ध्वल गत्राय नीलाभोधि जलद पटलाधिव्यक्तस्वरूपाय व्याघ्रिकर्म निर्मूलोच्छेदन कराय, जाति जरायमरण, विनाशनाय, ससारकान्तारोन्मूल नाय, अचिन्त्य बल पराक्रमाय, अति प्रतिमाह चक्राय त्रैलोक्याधीश्वराय, शब्दे के त्रैलोक्याधिनर्त्तिवल भुवन कारकाय, सर्वसत्य हिताय, निज भवताय, अभीष्ट फल प्रदाय भक्त्याधीनाय सुरासुरेन्द्रादि मुकुटकोटि धृष्टवाद पीठाय, अनन्त युग नाथाय, देवाधि-देवाय, धर्मचक्राधीश्वराय, सर्व विद्या परमेश्वराय, कुविद्या विद्या प्रदाय, तत्पादपक्जा श्रयानि यवनी देवी सासन देवते विभुवन सक्षोभनी, त्रैलोक्य शिवापहारकारिणी श्री अद्भुत जातवेदा श्री महालक्ष्मी देवी (अमुकस्य) स्थावर जगम कृत्रिम विषमुख सहा-रिणी सर्वाभिचार कर्मापहारिणी परविद्योद्देवनी परमन्त्र प्रनाशनी अष्ट महानाम कुलीच्चाटनी कालदण्ड मृत कोत्यापिनी (अमुकस्य) सर्वरोग प्रमोचनी, ब्रह्माविष्णु-रुद्रेन्द्र चन्द्रादित्यदिग्ग्रह नक्षत्रोत्पात मरण भय पीडा मदिन त्रैलोक्य विश्वलोक वशकरि भुविलोक हितक महाभैरवि भैरव शस्त्रोपघारिणी रौद्रे, रौद्ररूपघारी प्रसिद्धे, सिद्ध विद्याधर यक्ष राक्षस गरुड गधर्व किन्नर कि पुरुषो दैत्यारगेन्द्र पूजिते ज्वालापात कराल दिग्न्तराले महावृपभ वाहिनी, खेटक कृपाण त्रिशूल शक्ति चक्रपाश शरासन शिव विराजमान घोड़शार्द भूजे एहि एहि ल ज्वाला मालिनी ही ही हू हू ही हू हू हू हू हू हू देवान् आकर्षय आकर्षय नाग ग्रहान् आकर्षय आकर्षय यक्ष ग्रहान् आकर्षय आकर्षय गधर्व ग्रहान् आकर्षय भूत ग्रहान् आकर्षय आकर्षय दिव्यतर ग्रहान् आक-

## अनंग साधना

परम पूज्य स्वामी जी,

दण्डवत् प्रणाम ।

आज से पाच वर्ष पूर्व आपके चरणों में उपस्थित हुआ था, सभवत आपको मेरा स्मरण नहीं रहा होगा । मैं नैपाल में काठमाण्डू से एक सी पचास मील दूर कोसाना गाव में रहने वाला युवक हूँ और आपका नाम सुनकर आपके चरणों में उपस्थित हुआ था ।

आपके यहा आने से पूर्व मैं अपने जीवन से पूरी तरह से निराश हो चुका था, क्योंकि मैं सामान्य रूप से नपुसक था । मैं सही रूप में सभोग करने में सक्षम नहीं था और इस सम्बन्ध में जितनी भी दवाइया लेता उसका विपरीत असर ही मुझे प्राप्त होता ।

मैं अपने पिता का इकलौता पुत्र था, इसलिए वे मेरा विवाह करने को इच्छुक थे जिससे कि वहाँ घर में आ सके और पौत्र हो जिससे कि उनकी वश परम्परा आगे बढ़े, परन्तु मैं अपने आपको भली प्रकार से जानता था क्योंकि बचपन में कुट्टें और कुसगति में पड़कर अपने स्वास्थ्य को चौपट कर दिया था । मेरी इन्द्री कमजोर और टेढ़ी हो गई थी । मैं किसी कन्या का जीवन वर्वाद नहीं करना चाहता था, इसलिए मैं विवाह करने को इच्छुक नहीं था ।

परन्तु मेरे पिता इस सम्बन्ध में कुछ भी नहीं जानते थे और मैं शर्म के मारे उन्हे कुछ नहीं कह सकता था । फलस्वरूप कुछ समय बाद ही मेरा विवाह हो गया । मैं भन-ही-मन लज्जित रहने लगा । मेरी पत्नी मेरे घर आ गई थी, परन्तु मैं हर समय उससे कटा-कटा रहता, क्योंकि मेरे मन का चोर मुझे खाये जा-रहा था ।

इस प्रकार लगभग एक महीना बीत गया और मैंने एक दिन - भी पत्नी से बातचीत नहीं की, पिताजी भुज्जे ठेलकर छत पर भेज देते तो मैं अलग बिछौना बिछाकर सो जाता और ऐसा प्रदर्शन करता जैसे कि मुझे झींद आ गई हो ।

परन्तु यह कब तक चलता और एक दिन मेरे इस रहस्य का भण्डाफोड़ पत्नी के सामने हो गया । पत्नी को जब विश्वास हो गया कि मैं नपुसक हूँ और मैं किसी भी स्थिति में पत्नी की इच्छा पूर्ण नहीं कर सकता तो उसकी आखो में आसूं आ गये । उस

समय मुझे जितनी ग्लानी और वेदना हुई थी उसे मैं ही जान सकता हूँ। इस प्रकार का दुख और शर्म वही जान सकता है जो भ्रुतभ्रोगी हो।

उस रात मैं एक क्षण के लिये भी सो नहीं पाया। दूसरे दिन मैं बिना घर बालों को बताये घर से भाग खड़ा हुआ। मैं किसी भी हालत में अपने जीवन को समाप्त कर देना चाहता था।

इस प्रकार मैं लगभग दो महीने भटकता रहा, न तो मेरे खाने का ठिकाना था और न रहने का आश्रय। मेरे पास जो थोड़ी बहुत पूजी थी वह भी समाप्त हो गई। अत मैं इलाहावाद में मजदूरी करने लगा। मैं नित्य सगम पर पाकर सो जाता और यदि कोई साधु सन्यासी मिलता तो उसकी थोड़ी बहुत सेवा भी कर लेता।

एक दिन मैंने अपनी व्याधा एक सन्यासी को बताई तो उसने कहा कि इस सबध मेरे पास तो कोई उपाय नहीं है और गरम दवाइया लेकर तुमने अपने शरीर को बर्बाद कर दिया है। अत दवाइयों से अब तुम्हारा कल्याण नहीं हो सकता, यदि कोई 'मदन साधन मन्त्र' का ज्ञान तुम्हें दे या तुम 'अनग यत्र' प्राप्त कर सको तो तुम्हारी समस्या का हल हो सकता है। उन्होंने स्पष्ट बताया कि मैं ऐसे किसी भी साधु को या पण्डित को नहीं जानता, परन्तु मैंने जोधपुर के श्रीमाली जी का नाम अनश्य सुना है, वे समर्थ हैं और यदि तुम्हारी समस्या का समाधान कोई भी कर सकता है तो वे ही कर सकते हैं।

मेरे मन मे जिन्दा रहने की आशा जगी और मैं उसी दिन जोधपुर के लिये रवाना हो गया। जोधपुर मे मैं एक धर्मशाला मे टिक गया, परन्तु आपके सामने आने की हिम्मत नहीं हो रही थी।

एक दिन मन कड़ा करके आपके सामने उपस्थित हुआ और अपनी पूरी राम कहानी आपके सामने प्रकट कर दी। मैं बात कहता जा रहा था और साथ ही साथ मेरी आखों से आसू भी बहते जा रहे थे। सभवत आपको मेरे आसुओं पर तरस आया होगा और आपने मुझे अनग मन्त्र का ज्ञान दिया था और बताया था कि इस मन्त्र का एक लाख जप नर्दी के किनारे किया जाय और जप समाप्ति के बाद एक हजार चमेली के पुष्पों से आहुति दी जाय तो तुम वापस पूर्ण पुरुष बन सकते हो और तुम्हारी वश परम्परा कायम रह सकती है।

आपने जो मन्त्र दिया था वह इस प्रकार था

### मंत्र

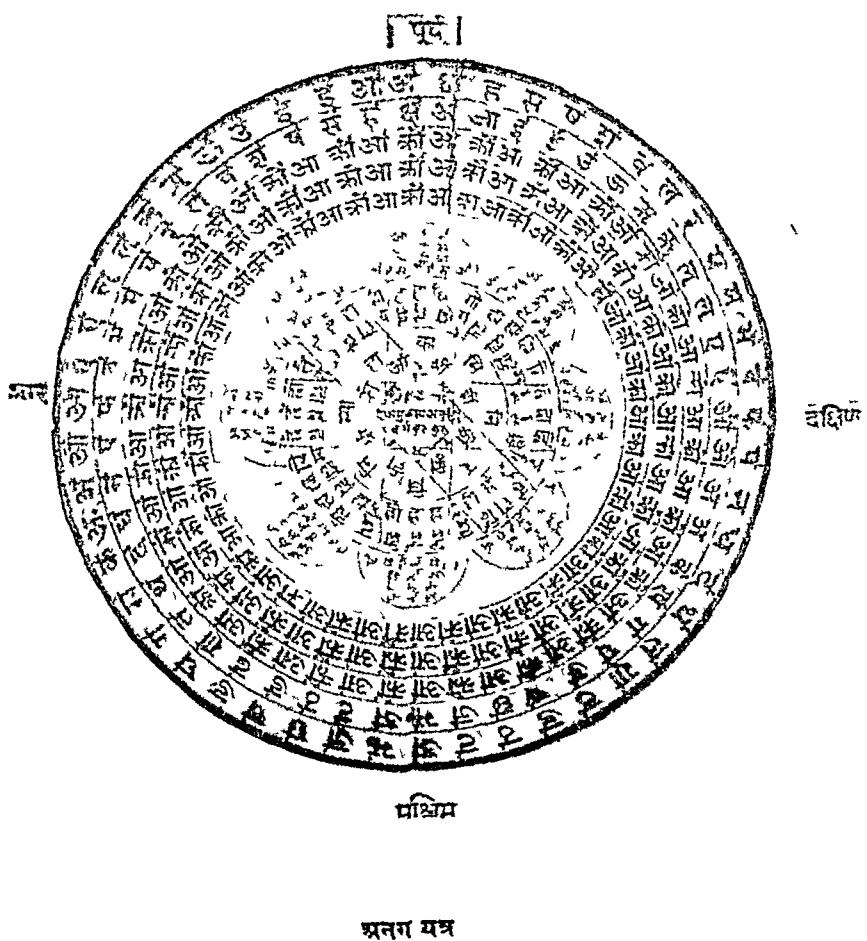
ओम ए मदने मदनविद्रावणे अगसगमे देहि  
देहि क्री-क्री स्वाहा।

मैं बापस इलाहावाद आ गया था, और सगम तट पर इस मन्त्र का जप प्रारम्भ कर दिया था। चौदह दिनों मे मैंने इस मन्त्र का एक लाख जप कर दिया था। दिन मे

मैं एक समय भोजन करता थौर गगा के किनारे इस मन्त्र का जप करता। पन्द्रहवें दिन भैने गगा के किनारे ही एक हजार चमेली के पुष्पों से आहुतिया देकर अनुष्ठान को आपके बताये हुए तरीके से सम्पन्न किया था।

उस रात्रि को पहली बार मुझे अनुशव दुआ जैसे मैं सक्षम पुरुष हूँ। मैंने अपने शरीर को स्पर्श किया तो प्रसन्नता के भारे चीख निकल पड़ी और मुझ में आश्चर्य-जनक परिवर्तन आ गया।

अनुष्ठान सम्पन्न कर मैं सीधा भयने घर चला आया। घर वाले यह समझ चुके थे कि मैं हमेशा-हमेशा के लिए घर से चला गया हूँ। मुझे पाकर उनकी प्रसन्नता



का ठिकाना न रहा । उसी दिन रात्रि को मैंने पूर्ण सन्तुष्टि के साथ अपने पौरुष का प्रदर्शन किया । मेरी पत्नी और मैं पूर्णतः सन्तुष्ट थे ।

आज भेरे दो पुत्र तथा एक पुत्री हैं, और यह जो कुछ भी है वह आपकी कृपा के फलस्वरूप ही है । इसके बाद मैं ऐसे तीन और युवकों को यह अनुष्ठान सम्पन्न करवा चुका हूँ और वे पुन नया जीवन प्राप्त कर चुके हैं ।

मैं लज्जा के साथ यह पत्र लिख रहा हूँ क्योंकि मैं पिछले पात्र वर्षों से आपको पत्र नहीं देसका । आपने मुझे जीवन दान दिया है और मुझ में एक नई चेतना जाग्रत की है । मेरे वश को आगे बढ़ाने में आपका ही मत्र सहयोग रहा है, इसके लिए मैं और मेरा पूरा परिवार आपका आभारी है ।

इस महीने के अन्त में मैं अपनी पत्नी और पुत्रों के साथ आपके दर्शनों के लिए आ रहा हूँ । पिछली बार जब मैं आपके यहाँ आया था तब मैं कुछ भी भेंट करने के योग्य नहीं था, परन्तु इस बार मैं आपके चरणों में पत्र पुष्प अर्पित कर अपने मन के देवग को शान्त करना चाहता हूँ ।

मुझे विश्वास है कि इस महीने के अन्त में आप जोधपुर में ही होगे, जिससे कि मैं और मेरा परिवार आपके दर्शन कर जीवन को सफल बना सके ।

भवदीय,  
(शमशेर बहादुर राणा)

## दत्तात्रेय-साधना

श्रद्धेय पण्डितजी,

सादर चरण स्पर्श ।

आपकी कृपा से मैं सकुशल घर पहुंच गया था । आपने जिस प्रकार से दत्तात्रेय साधना करने को कहा था उसी प्रकार से मैंने उस साधना को सम्पन्न किया है और उसका अनुकूल परिणाम भी मुझे प्राप्त हुआ है ।

आपने मुझे आज्ञा दी थी कि मैं साधना सम्पन्न कर उससे सवधित अनुभव को आपके सामने रखूँ ।

यह मेरा सौभाग्य था कि मुझे इस बार आपके चरणों में बैठकर 'दत्तात्रेय साधना' सीखने का अवसर मिला । आपने बताया था कि यह साधना अभी तक गोपनीय रही । बहुत ही कम साधकों को इस साधना का ज्ञान रहा है । यह मेरे ऊपर आपका विशेष अनुग्रह है कि आपने कृपा कर इस साधना को करने के लिए मुझे प्रेरित किया ।

आपने बताया था कि यदि किसी का बालक खो जाय, या उसका पता नहीं चले, इसी प्रकार किसी भी बन्धु वान्धव के खो जाने पर इस प्रकार की साधना सम्पन्न की जाती है, फलस्वरूप खोया हुआ प्राणी साधना सम्पन्न होते-होते घर आ जाता है ।

आपके कहने के अनुसार मैंने इस साधना को शुक्ल पक्ष की पूर्णिमा से प्रारम्भ किया । सर्वप्रथम मैंने अलग कक्ष में एक ऊनी आसन बिछा दिया था और उसके सामने एक लकड़ी का बाजोट या तख्ता रख दिया था जो डेढ़ फुट लम्बा तथा डेढ़ फुट चौड़ा था । उस पर लाल वस्त्र बिछा दिया था और उस पर चावलों से दत्तात्रेय यत्र बना दिया था जो कि आपने मुझे बताया था ।

इसके बाद इस यत्र पर एक कासी का कटोरा रखकर उसमें एक किलो तेल भर दिया था और उसके सामने एक छोटा-सा दीपक भी जलाकर रख दिया था ।

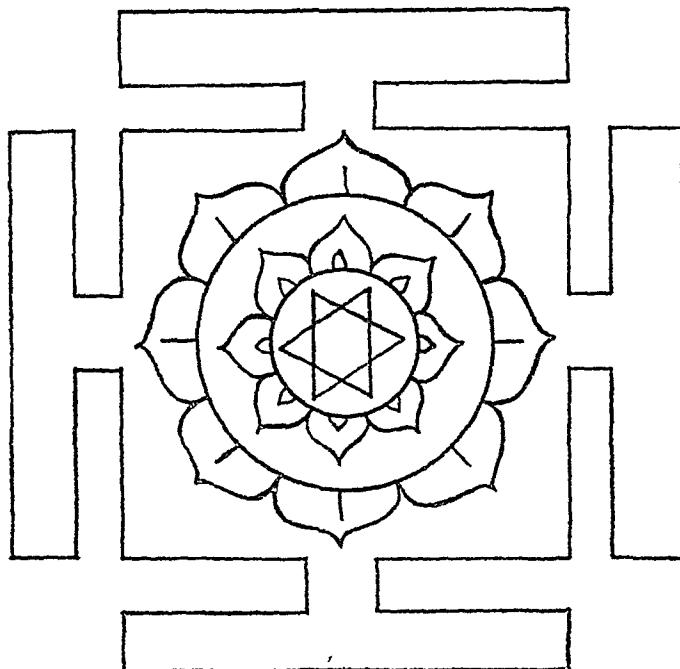
पूर्णिमा की रात्रि को स्नान कर लाल धोती पहन नींबू बजे मैं आसन पर बैठ गया और फिर दत्तात्रेय यत्र की घोड़शोपचार पूजा कर उस पर जो तेल का पात्र था उसकी भी पूजा की ।

तत्पश्चात् सकल्प कर मैंने आपके बताये हुए तरीके से दत्तात्रेय मत्र की इक्यावन मालाएं फेरी । आपने मुझे जो मत्र बताया था वह इस प्रकार था

### मंत्र

ओम् ह्री क्ली एं श्री महायक्षिण्ये  
(लुप्त प्राणी) आगच्छ स्वाहा

रात्रि को जब इक्यावन मालाए समाप्त हुईं तो मैं वही आसन पर सो गया ।  
दिन को मैं एक समय भोजन करता और व्यसन आदि का परित्याग कर दिया था ।  
इस प्रकार तीन रात्रि तक मैंने प्रयोग कर दत्तात्रेय मन्त्र को सिद्ध कर दिया ।



दत्तात्रेय यन्त्र

स्योगवश उन्हीं दिनों मेरे गाव के सेठ श्री कस्तूरचन्द्रजी के इकलौते पुत्र का अपहरण हो गया था, और दो महीने बीतने पर भी उसका कोई पता नहीं लग रहा था । पुलिस एक प्रकार से यक गई थी और सेठजी भी पूरी तरह से निराश हो गये थे ।

एक दिन सेठजी को किसी ने बताया कि मैं श्रीमाली जी से दत्तात्रेय साधना सीखकर आया हूँ जो कि इस प्रकार के कार्यों के लिये उपयुक्त है । तब सेठजी ने मुझसे निवेदन किया कि मेरा इकलौता पुत्र रमेश का अपहरण हो गया है और दो महीनों से पता नहीं चल रहा है, अतः आप यदि श्रीमालीजी से इस प्रकार की कोई साधना

सीखकर आये हो तो कृपया उस अनुष्ठान को सम्पन्न कर दें, जो भी व्यय आयेगा मैं वहन करने को तैयार हूँ।

यह मेरा पहला अवसर था। मैंने इस अनुष्ठान को करने का निश्चय कर लिया और दूसरे दिन से ही इसके लिये व्यवस्था प्रारम्भ कर दी। आपने बताया था कि मत्र सिद्ध होने पर किसी भी दिन से इस अनुष्ठान को प्रारम्भ किया जा सकता है और यह अनुष्ठान प्रात् नी वजे से प्रारम्भ होकर साय पाच वजे तक चलता है। इसमें आसन विछाकर पूर्व की ओर मुह करके बैठना चाहिए और सामने तख्ते पर चावलों से दत्तात्रेय यथा बनाकर उस पर कासी का कटोरा रख देना चाहिए और उसमें एक किलो शुद्ध मूगफली का तेल भर देना चाहिए। इसके अलावा साधक के चारों ओर एक हजार दीपक जला देने चाहिए। एक व्यक्ति इस कार्य के लिये नियुक्त कर देना चाहिए। वह उन दीपकों में तेल डालता रहे, वे द्वुप्लने न पावें। दीपकों में मूगफली या तिल्ली का तेल डाला जाता है।

इस प्रकार वे हजार दीपक प्रात् नी वजे से जलाने चाहिए और साय पाच वजे तक जब तक अनुष्ठान पूरा न हो तब तक उन दीपकों को जलाये रखना चाहिए। इस प्रकार यह प्रयोग सात दिन तक होता है और इसमें दत्तात्रेय मत्र की एक सौ एक माला फेरनी पड़ती हैं। एक माला में एक सौ बाठ मनके होते हैं। कोई भी माला प्रयोग में ली जा सकती है। आसन पर बैठने के बाद साधक को बीच में उठना नहीं चाहिए, ऐसा करने पर सातवें दिन अनुष्ठान सम्पन्न होने से पूर्व ही खोया हुआ बालक या प्राणी घर आ जाता है और यदि वह पहले ही मर गया हो तो उस कटोरे में वह दृश्य स्पष्ट दिखाई दे जाता है कि उस प्राणी को किसने, कब और किस प्रकार मारा है? साथ ही उसकी लाश कहा पर है?

ऊपर जो मत्र दिया है, उसके कोष्टक में लुप्त प्राणी के स्थान पर उस खोए हुए बालक या प्राणी का नाम उच्चारण करना चाहिए।

आपने जिस प्रकार से विधि बताई थी उसी प्रकार से मैंने अनुष्ठान प्रारम्भ कर दिया था और अपने आसन के चारों ओर एक हजार दीपक जला दिये थे। एक व्यक्ति इस बात का ध्यान रखता कि किसी भी दीपक का तेल समाप्त न हो जाय।

अनुष्ठान प्रारम्भ होने के चौथे दिन ही सेठजी का पुत्र रमेश घर आ गया था। उसने जो कहानी बताई वह आश्चर्यजनक थी। उसने बताया कि मुझे डाकू अपहरण करके ले गये थे और किसी एक पहाड़ी में छुपाकर रख दिया था, परन्तु आज से चार रोज़ पूर्व (जिस दिन से अनुष्ठान प्रारम्भ हुआ) एक डाकू का सरदार से मतभेद हो गया और वह रात्रि को चुपचाप मुझे उठाकर भाग गया। उसने आज प्रात् शाव के पास मुझे लाकर छोड़ दिया थे और उसे मार दिया था। उस समय जो मुझे वेदना हुई थी वैसी ही वेदना तुम्हारे माता-पिता को होती होगी, इसलिये मैं तुम्हें छोड़ देता हूँ जिससे कि तुम अपने दुखी माता-पिता से मिल सको।

जब बालक घर आ गया तो चौथे दिन साय मैंने अनुष्ठान को समाप्त कर दिया। वास्तव में ही यह एक आश्चर्यजनक घटना है और इसके लिये मैं आपका अत्यधिक कृतज्ञ हूँ। बालक के घर आने से सेठजी को जो प्रसन्नता हुई है उसका मैं वर्णन नहीं कर सकता, साथ-ही-साथ इस कार्य से मेरी प्रतिष्ठा आसपास के गावों में बहुत अधिक हो गई है।

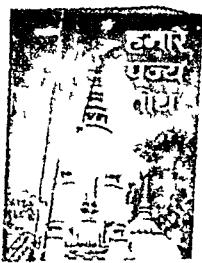
परन्तु पण्डितजी यह सम्मान और प्रतिष्ठा मेरी नहीं अपितु आपकी है। पिछले दस वर्षों से मैं आपसे सम्पर्क रख रहा हूँ और इन दस वर्षों में आपने जो-जो साधनाएं मुझे दी हैं वे अद्भुत हैं। मानव कल्याण में सहायक हैं। जैसा कि आपने कहा था मैं पुन आपके चरणों की सौगन्ध खाकर प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं इन मनों का उपयोग जन-कल्याण के लिये ही करता रहूँगा।

नवरात्रि में मैं आपके चरणों में उपस्थित होना चाहता हूँ, इसकी स्वीकृति देने की अनुकम्पा करें।

आपका चरणानुरज,  
केशव नारायण 'सपा'

## धर्मनिष्ठ लोगो के लिए अद्वापूर्ण उपहार

वडे साइज के  
208 पृष्ठ  
मूल्य 36/-  
डाकखर्च 6/-



### हमारे पर्यय तीर्थ

कैलास पर्वत से कन्याकुमारी, कामाख्या से कच्छ तक के सपूर्ण तीर्थों का विश्वकोश।

यदि आप तीर्थ-यात्रा करना चाहते हैं तो यह पुस्तक आपको सभी तीर्थों की विस्तृत व वाञ्छित जानकारी प्रदान करेगी।

सभी जिज्ञासाओं का समाधान —

- चार धाम कोन-से हैं?
- द्वादश ज्योतिर्लिंग कौन से वने?
- सप्तपुरी यात्रा का महात्म्य?
- पच-सरोवर कितने पावन हैं?
- मातृ व पितृ-गया का विधि-विधान?
- बावन शक्तिपूठों का जन्म?
- जैन व सिक्ख-तीर्थों की महिमा?

- लक्ष्मी महिमा ● हनुमान महिमा
- विष्णु महिमा ● शिव महिमा
- गणेश महिमा ● दुर्गा महिमा



प्रत्यक्ष मूल्य 24/- डाकखर्च 6/-

सभी पुस्तके 272 से 352 पृष्ठों तथा  
मंदिरों व मूर्तियों के असाध्य चित्रों से  
सुसज्जित

### गीताकथा

—ब्रह्मदत्त वात्स्यायन



श्रीमद्भगवद्गीता के सम्पूर्ण श्लोक, उनका पदच्छेद, सरल हिन्दी में पदार्थ, श्लोकानुवाद एवं कठिन स्थलों पर टिप्पणी के रूप में विस्तृत विवेचन, अध्यायों का सारांश, महाभारत और गीता के प्रतिपाद्य विषयों पर विचारोत्तेजक आलेख तथा रोचक एवं शिक्षाप्रद परिशिष्टों से सपन्न इस पुस्तक में गीता-प्रेमियों के लिए परमोपयोगी पाठ्य-सामग्री प्रस्तुत की गयी है।

मूल्य 48/- डाकखर्च 6/-

3,00,00,000

## तीन करोड़ से भी अधिक पाठकों की पसंद

### रैपिडेक्स

#### इंगलिश स्पीकिंग कोर्स

प्रिय अभिभावक,

आपका बच्चा अग्रेजी स्कूल में पढ़ता है,

अग्रेजी अच्छी तरह लिख-पढ़ लेता है

उसकी एकमात्र समस्या

वह, इसे बोलने में हिचकता या अटकता है।

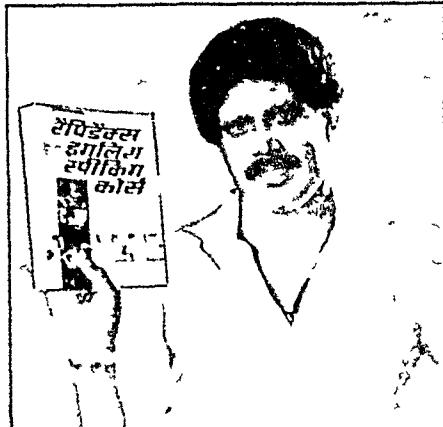
इसका समाधान बता रहे हैं

उसके प्रिय खिलाड़ी कपिलदेव—

अग्रेजी बोलचाल सीखने का एकमात्र सोसं  
रैपिडेक्स इंग्लिश स्पीकिंग कोर्स



12 भारतीय भाषाओं में प्रकाशित



It's really a good book to learn spoken  
English  
—Kapil Dev

कान्वेट स्लर की शुद्ध व फराटेदार अग्रेजी  
मिखलाने वाली ऐमी पुस्तक जो भारत के  
कोने-कोने में फैली, जिसे हर भाषा के लागो ने  
पसंद किया तथा समाज के हर वर्ग ने अपनाया।

सभी भाषाओं में बड़े साइज के 400 से अधिक पृष्ठ  
मूल्य 50/- प्रत्येक

#### स्त्री के सौन्दर्य, स्वास्थ्य एवं रोगों का एनसाइक्लोपीडिया

### लेडीज हैल्थ गाइड

लेखिका: शहिला-बिषयों की विशेषज्ञा श्रीनती आशारानी व्होरा

- \* सौन्दर्य-समस्याएं बेडोलपन, अपब्ल वक्ष,  
छोटा कद, बालो का झड़ना, चेहरे की कमिया  
आदि।
- \* आम शिक्षायतें: मासिक धम की गडवडिया,  
वेजा थकान व तनाव, पीठ-दद, हीन-भावना,  
यौन रोग आदि।
- \* शिशु-जन्म प्रक्रिया: गर्भाधान से लेकर  
प्रसवोपरात का भोजन, सतर्कताएं एवं  
समस्याएं।
- \* सामान्य स्वास्थ्य: नारी शरीर रचना की  
सम्पूर्ण जानकारी, फर्म्ट-एड, मीनूपाज,  
वाञ्छण आदि।
- \* बीमारिया: रक्तचाप, मधुमेह, तपेदिक,  
दमा, वक्ष तथा गर्भाशय का कैन्सर तथा  
ऑपरेशन आदि।



मूल्य 60  
डाकखाच  
6/-

बड़े साइज के  
410 पृष्ठ  
चित्र 300

25 विशेषज्ञानात्मकों के इटरेटर वर

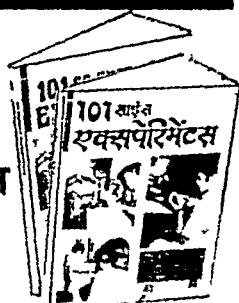
मूल्य 25/-

## खेल-खेल में सीखो विज्ञान

01

### आइंस एक्सपेरिमेंट्स

आइवर यूशिएल



नहे वैज्ञानिकों के लिए लिखी गई एक ऐसी स्तक—जो सर्व व रोचक प्रयोगों द्वारा विज्ञान औ जटिल सिद्धांतों को समझने में निश्चित रूप से बाद देगी।

प्रयोगों की एक सूची —

- कैसे चल पाते हैं जल-सतह पर कीट?
- नहाने के बाद क्यों लगती है ठड़?
- कमरे में बैठ नापो सितारों की दूरी!
- सके साथ ही वर्षायामी, सूक्ष्मदर्शी, डायनेमो, आदि अनेक उपकरण बनाने की सचित्र विधियाँ।

मूल्य 24/- डाकखर्च 5/- पृष्ठ 120

English Edition also available

## अनुभवी फोटोग्राफर द्वारा लिखित घर-बैठे फोटोग्राफी तिखाने बाला

### प्रैक्टिकल फोटोग्राफी कोर्स



लेखक ए एच हाशमी

पोटेट्स, ग्रूप्स, स्टिल-लाइफ, लैण्डस्कैप, स्पोर्ट्स तथा स्पीड फोटोग्राफी, विवाह-उत्सव, जानवर, प्राकृतिक दृश्यावलिया आदि सभी मौकों के फोटो सीधा चना सीखो।

- डेवलपिंग • कार्पेटेट • एन्टार्बेण्ट • रीटर्निंग
- डाक्यूमेण्ट कृपिंग • फिनिशिंग • कलरिंग।

डिमाइ साइज 244 पृष्ठ मूल्य 28/- डाकखर्च 6/-

## तर्वश्रेष्ठ दिवस का अनूठा तंकसन



### चिल्ड्रन्स ट्रिक्स एण्ड स्टंट्स

इस सचित्र पुस्तक में तुम पाओगे

- ऐसी कुर्सी, जिसे तुम नहीं उठा सकोगे।
- ऐसा गुब्बारा, जिसे तुम नहीं फोड़ सकोगे।
- अदृश्य मानव, जो तुम्हारी आखों के सामने से गायब हो जाएगा।
- अगुली, जो हवा में तैरेगी।

तुम्हारे दोस्तों को चकरा देने वाली—रहस्यमय,  
20 में शायान 70 ऐसी

## विवज टाइम

—आइवर यूशिएल

मूल्य 24/-

डाकखर्च 6/-

पृष्ठ 128

## विवज टाइम



जन-सामान्य तथा विद्यार्थियों के लिए समान रूप से उपयोगी प्रश्नोत्तर शैली में लिखी यह पुस्तक विज्ञान, इतिहास, भूगोल, साहित्य, खेलकूद तथा फिल्म जगत से जुड़े आधारभूत 1001 प्रश्नों के सचित्र उत्तर प्रस्तुत करती है।

Also available in English



उद्दीयमान कार्टूनिस्टों  
के लिए विशेष उपयोग

## कार्टून कैसे

## विष्व-प्रसिद्ध श्रुत्याला

जनरुचि के 50 लघु विश्वकोशों की एक अनूठी सग्रहणीय शृंखला



भाषणिक पाठ्य-सामग्री □ सरस कथा-शैली □ सैकड़ो दुर्लभ  
से सुसज्जित □ कलात्मक प्रस्तुतिकरण □ फोटोटाइप सैट  
देखा करगज/ऑफसेट छापार्ट □ बहरगी आवरण □ वाजिब दाम

*Also  
available  
in English*

प्रत्यक्ष का  
मूल्य 24/  
डाकखार्च 5/

स शूखला का मूल उद्देश्य एक औसत पाठक के अतर्राष्ट्रीय घटनाचक्र से जोड़कर सकी चेतना को प्रबढ़ करते हए उसके ज्ञान-क्षेत्र का विस्तार है।

स शृंखला की सभी पुस्तके मानव-जगत से जुड़े लर्गभग सभी महत्वपूर्ण पक्षों जैसे विज्ञान, हस्य, रोमाच, दर्शन, धर्म, खेल, स्स्कृति, अपराध, भ्रष्टाचार आदि पर विहगम दृष्टिपात रखे हए सारणीभर्त विषय-सामग्री प्रस्तुत करती हैं।

**स शब्दाम् प्रकाशित पत्रके -**

रेव-प्रसिद्ध 1 खोजें 2 अनसुलहे रहस्य 3 रोमाचक कररनामे 4 युद्ध 5 101 व्यक्तित्व  
धर्म, मत एव सम्प्रवाय 7 खेल और खिलाड़ी 8 रिकॉर्ड्स-I 9 रिकॉर्ड्स-II 10 वैज्ञानिक  
1 विजाशा-लीलाए 12 दुर्घटनाए 13 गुप्तचर सस्थाए 14 जासूस 15 प्रेरक-प्रसग  
6 विकितस-पद्धतिया 17 बैंक डकैतिया एव जालसाजिया 18 जासूसी-कड़ 19 क्रूर हत्यारे  
0 सम्प्रताए 21 रोमास-कथाए 22 अनमोल खजाने 23 दुस्साहसिक खोज-यात्राए  
4 भूत-प्रेत घटनाए 25 जन-झाँसिया 26 कुख्यात महिलाएं 27 हस्तियों के प्रेम-प्रसग  
8 राजनीतिक हत्याए 29 विलासी सुवरिया 30 तख्ता-पलटकी घटनाए 31 सतकी तानाथाह  
2 मासाहारी तथा अन्य विचित्र पेड़-पौधे 33 असैकिक रहस्य 34. मिथक एव पुराण कथाए  
5 भष्ट राजनीति 36 साहसिक कथाएं 37 आतकजारी तथाठन 38. पारस्पैकिक चमत्कर  
9 वार्षिक एव दर्शन 40 ठग एव जालसाज

## अनजाने तथ्य जानिए

### 501 रोचक तथ्य

मूल्य 15/-  
डाकखर्च 5/-



- सोडावाटर में विलकुल सोडा नहीं होता।
- मनुष्य की रक्तधारिनियों की कुल लम्बाई 1,00,000 मील होती है।
- ऐसे ही गुरुगुदाने वाले व ज्ञान-विज्ञान के नए क्षितिज खोलने वाले 501 अनजाने तथ्य।

### विचित्र दुनिया—विचित्र लोग



#### विश्व के विचित्र इंसान

— ए एच हारामी  
मूल्य 20/- डाकखर्च 5/-  
बड़ साइज क 108 पृष्ठ

- दो सिर वाला अजूबा व्यक्ता कसा था?
- शरीर से जुड़े स्थामी भाई?
- तीन टांगों वाला व्यक्ति कसे चलता था? -
- क्या कोई व्यक्ति आधे टन का था?

ऐसी ही कितनी अन्यान्य विचित्र जानकारिया।

### विचित्र जन्तुओं का संसार

#### विचित्र जीव-जन्तु

— ए एच हारामी  
मूल्य 20/-  
डाकखर्च 5/-



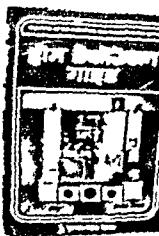
टुआटेरा तान आवे बना विचित्र प्राणी।  
काच मेंठक' जिसकी पारदर्शी त्वचा में से भीतर  
झ मारा शरीर दीख पड़ता है।  
लैपधारी छछली जिसके सिर पर प्रकृति ने  
जलने वाले बन्द दिए हैं।

टमी एकार के 75 से भी अधिक विचित्र-जन।

## भारतीय अशोक गोयल की प्रामाणिक पुस्तकें

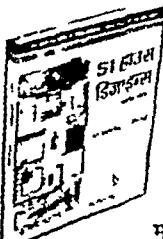
### होम डेकोरेशन गाइड

मूल्य 36/- डाकखर्च 6/-



इस प्रस्तुत म गह-मज्जा नवधी मभी विषयों व  
विस्तारपूर्वक और चिना सहित समझाया गय  
है —धर्म  
इस किताब की मदद से छोटी-छोटी जगहों व  
भी अच्छी तरह सजा कर दर्शनीय बनाया ज  
सकता है —नवभारत टाइम

### 70 से 225 वर्गमीटर के नवशे



### 51 हाउस डिजाइन

मूल्य 48/- डाकखर्च 6/-

प्रत्येक नवशा निम्न बातों को ध्यान में रखकर  
बनाया गया है

- डाइग, डार्फिंग, बैठक व बाथरूम एवं  
रसोईघर आदि का सही तालमेल हो
- जगह का सदुपयोग हो सभी कमरे हवादार  
हों व उनमें कुदरती रोशनी हो आदि।

### 250 से 500 वर्गमीटर के नवशे (फट एलीवेशन के डिजाइनों सहित)

#### माडर्न हाउस प्लान्स



मूल्य 36/- डाकखर्च 6/-

- गोटी-भान्य व डिजाइनों की पूर्ण जानकारी
- मजावटी पेंड-पोधों की जानकारी
- कमरों के परस्पर सही तालमेल के तरीके
- मकान-सम्बन्धी प्राविधिक जानकारिया
- बिल्डिंग चाई-लॉज का विवरण

## बच्चों को इंटैलीजेंट बनाने वाला अद्भुत नॉलिज बैंक

बच्चों के मस्तिष्क में धुमड़ने वाले हजारों अनवूझे 'क्यों और क्यों' के सवालों के प्रश्नों के उत्तर बताने वाला एक अनूठा प्रकाशन

## चिल्ड्रन्स नॉलिज बैंक (छ छण्डों में)



### बच्चे के मस्तिष्क के लिए एक दौरीनिक

जगा भी समझ आते ही बच्चे के मस्तिष्क में 'क्या' और 'क्यैस' क्षिति कहारों प्रश्न धमड़न लगते हैं। उचित समय पर मिले प्रश्नों के उत्तर उनके दिमाग के लिए दौरीनिक का काम करते हैं जबकि उनका न मिलन में उनका मानविक विकास रुक जाता है।

### छ छण्डों की इस शृङ्खला में है

- 1300 बड़े आसारे के पृष्ठ
- 1100 से अधिक चित्र
- 5,00,000 शब्दों की पाठ्य-सामग्री
- 1050 प्रश्नों के सबोध उत्तर

### मूल्य

पेपरबैक 40/- डाकखाच 6/- प्रत्येक

पूरा मैट 240/- (गिप्ट वॉक्स में) डाकखाच माफ

अंग्रेजी तथा 8 भारतीय भाषाओं में  
प्रकाशित

### प्रश्नों में से कुछ की झलक

- महिलाओं की दाढ़ी क्यों नहीं हाती?  क्या अन्य ग्रहों में लोग पृथ्वी पर आते हैं?
- आकाश नीला क्यों है?  मुहाम वर्यों होते हैं?  टर्स्ट ट्यूब बेबी क्या है?  सग्ने क्या दिखाई देते हैं?  इलेक्ट्रोनिक घड़ी मैसूर काम करती है?  मिस्र में ममी क्यों उनाते हैं?  उड़न-तश्तरी क्या है?  गल एम डी क्या है?  हाइड्रोजन बम क्या है? आदि

### विशेषताएं

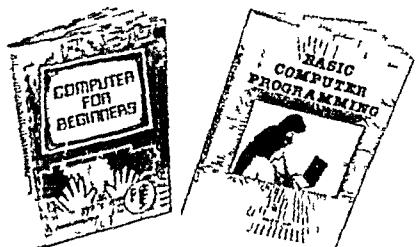
- 50 लाख से भी अधिक पाठकों की पसंद
- विद्यालयों में पुरस्कार के रूप में वितरित
- प्रत्येक खण्ड अपने आप में संपूर्ण
- पत्र-पत्रिकाओं द्वारा प्रशमित

### आधारभूत विषय

- \* पृथ्वी एवं ब्रह्मांड \* आधुनिक विज्ञान, वनस्पति एवं पशु-पक्षी जगत \* भाविष्यकार एवं खोजे \* खल एवं खिलाड़ी \* आश्चर्य एवं रहस्य \* मामान्य ज्ञान \* मानव शरीर विज्ञान आदि.

## Master Computer Today For A Better Tomorrow

Computers are invading every facet of a person's life—the home the office the classroom or the play ground. Whether in job or business they are opening up bright new vistas of knowledge and happiness.



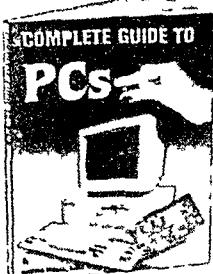
— Er V K Jain

- Computer for Beginners
- Basic Computer Programming

The twin-books are a must for those who are interested in computers their function and operation but are discouraged by their complexities. All is made easy through simple language and instructive illustrations.

*The books are designed for mass education as per Computer Literacy Project of NCERT and also conform to course on computers recently undertaken by C B S E*

Big Size 192 & 172 pages respectively  
Price Rs 36/- each Postage Rs 6/- each

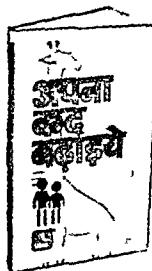


### A Complete Guide to PCs

- \* Creates awareness about modern computer—Hardware & Software & how these can serve as productivity aids
- \* Imparts working knowledge of Computer technology Software Packages like Word Star Lotus 1-2-3 dBASE-II etc to an ordinary man avoiding technical words
- \* Helps in assessing the operations that require computer

Price Rs 48/- Postage Rs 6/-

## कद बढ़ाने के मनुभूत तरीके



### अपना कद बढ़ाइये

मूल्य 20/-  
डाकखार्च 5/-

Also available in English

प्रस्तुत है कद लम्बां करने का आजमाया हुआ वैज्ञानिक अनुसधान। इसमें यूरोप और अमरीका में टेस्ट किया हुआ ऐसा सचित्र कोर्स दिया गया है जिसकी मदद से आप केवल 15 मिनट प्रतिदिन अभ्यास द्वारा कुछ ही हफ्तों में अपनी हाइट 10 सेमी तक तो बढ़ा ही सकते हैं।

## विना हथियार भारधाड़ की जापानी कलाएं



### जूडो कराटे

(जुजुत्सु-वॉर्किंग सहित)

मूल्य 20/- डाकखार्च 5/-  
पृष्ठ 128

Also available in English

हिन्दी में पहली बार प्रकाशित 300 से अधिक दाव-पेचों का सचित्र कोर्स। इसकी मदद से आप चाकू, लाठी, भाला आदि के बार से अपना वचाव करके अपने से चार गुना ताकतवर हमलावर को भी चुटकियों में धराशायी कर सकते हैं।

## आप भी सीखो करना बुनाई



### आधुनिक बुनाई शिक्षा

पुस्तक में 200 से अधिक नई बुनतियों से जनी वस्त्र तैयार करने की विधियाँ दी गई हैं। साथ में उनकी धूलाइ व दाग-धब्बे छुड़ाने के विभिन्न तरीके भी दिये गये हैं। मूल्य रु 48/-

## Skill in correspondence ensures

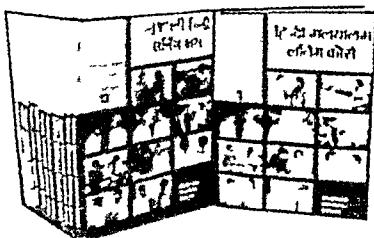
Brighter Career... Faster Promotion... Sure Success in Business...

### Rapidex Self Letter Drafting Course

Whether you are an administrator or a supervisor office superintendent or a steno-typist—the skill in correspondence is an art you must master because almost every situation every occasion calls for a well-drafted letter. And with this skill in hand none can stop you from getting ahead.

While other books teach you to copy ready-made letters given in them this course will teach you how to draft a letter of your own choice.

#### कोई भी भाषा सीखें



रैपिडेक्स

#### लैंग्युएज लर्निंग सीरीज

इतनी सरल व ग्राह्य सीरीज कि आप कुछ ही दिनों में काम चलाने लायक कोई भी भारतीय भाषा बोलने और समझने लगेंगे।

#### 12 खण्डों की सीरीज की पुस्तकें

- हिन्दी-तेलुगू लर्निंग कोर्स
  - हिन्दी-कन्नड़ लर्निंग कोर्स
  - हिन्दी-तमिल लर्निंग कोर्स
  - हिन्दी-बांग्ला लर्निंग कोर्स
  - हिन्दी-गुजराती लर्निंग कोर्स
  - हिन्दी-मलयालम लर्निंग कोर्स
- इसी प्रकार प्रान्तीय भाषाओं से हिन्दी सीखने के लिए भी 6 पुस्तकें उपलब्ध

सभी पुस्तकें लगभग 250 पृष्ठे में



Big Size  
Pages 354  
Price Rs 50/-

#### FEATURES

- Sentences and phrases in abundance
- Tick mark the required ones
- Arrange in proper order instantaneously
- Shape & mould the way you want to

And now make as many letters as you want on the same subject

#### DIVIDED UNDER 3 SECTIONS

It takes care of your personal and social letters commercial correspondence and applications for job

### Books for Science Students

#### General Science

A series of five books

The series provides help and guidance on all the major branches of science—Physics, Chemistry, Biology, Geology & Astronomy

Price 15/- each Postage 4/- each

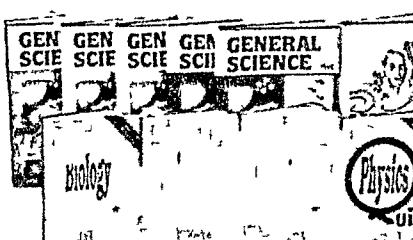
#### Quiz Series

(Work Books for Physics Chemistry Biology & Science)

Each book in this series contains 1000 quiz type questions covering almost every branch of particular science with answers. Also Price 12/- each Postage 4/- each in Hindi

#### Know Science

Know Science offers pupils in the 10-13 age range 1000 questions in the general field of science. Price Rs 15/- Postage Rs 4/-



**खेल-खेल में जादू नीलो, खेल साइंस के खेलो—ज्ञान बढ़ाओ, रोच जाना ओ, भिन्नों में यश सेलो**

**101  
मैजिक  
ट्रिक्स  
—आइवर यूशिएल**



इस सचित्र पुस्तक में दी गई हैं—ऐसी 101 शानदार व जानदार ट्रिक्स, जिनका समझना जितना सरल है, उनका प्रदर्शन—उससे भी आसाने। बस! जरूरत है तो थोड़े से अभ्यास के साथ चन्द्र ऐसी चीजों की, जो तुम्हे आसानी से उपलब्ध हो जाएगी।

ट्रिक्स की एक झलक ■ दृष्टि माला फिर तैयार ■ गिलास का पानी गायब करना ■ रुमाल आग से न जले ■ सर पर रखा हैट स्वयं उछले आदि

मूल्य 24/- डाकघर्च 5/- पृष्ठ 120

Also available in English

**101  
साइंस  
गेम्स  
—आइवर यूशिएल**



विज्ञान के 101 खेलों की यह पुस्तक खेल ही खेल में कुछ ऐसे वैज्ञानिक उपकरण बनाना सिखा देती है, जो बनेगे तो खिलौने ही पर बच्चों को विलकूल असली उपकरण जैसा ही आनंद देगे। जैसे—वैरोधीटर, विद्युत-चुम्बक, हैटोग्राफ, स्टीम टरबाइन, हलेक्ट्रोस्कोप आदि

इनके अलावा बहुत से अन्य रोचक प्रयोग जैसे—कागज के बर्तन में पानी उबालना, भाष से नाय चलाना आदि 101 मनोरजक जादू से प्रतीत होने वाले वैज्ञानिक खेल।

मूल्य 24/- डाकघर्च 5/- पृष्ठ 120

English Edition also available

**योगायास तरारिती श्री रोग से छुटकारा पाइये!**



**योगासन  
एवं  
साधना**

योगासन पर सबसे  
ज्यादा विकने वाली  
पुस्तक

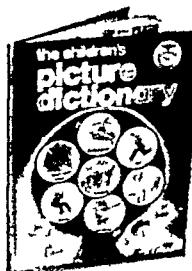
- आसनों का सुवोध व सचित्र विवरण • प्राणायाम विधि • चक्षु-व्यायाम • पौष्टिक भोजन • योगासनों द्वारा रोग निदान आदि

योगासन सैकड़ों शाखाओं में प्रतिदिन हजारों योगाभ्यासी रोगों से छुटकारा पा जीवन का आनन्द ले रहे हैं।

डिपार्ड साइज पृष्ठ 120/- मूल्य 20/- डाकघर्च 4/-

Also available in English

**Get your child admitted in a  
public school**



**CHILDREN'S  
PICTURE  
DICTIONARY**

All in colour

- Successfully prepares your child for admission in a Public School
- Contains 1500 words of daily use
- Each & every word has been explained with colourful pictures & small & simple sentences

The Dictionary is really a treasure trove of knowledge for your children wherein they will discover the names of • Birds • Animals • Fruits • Vegetables • Colours • Parts of Body etc.

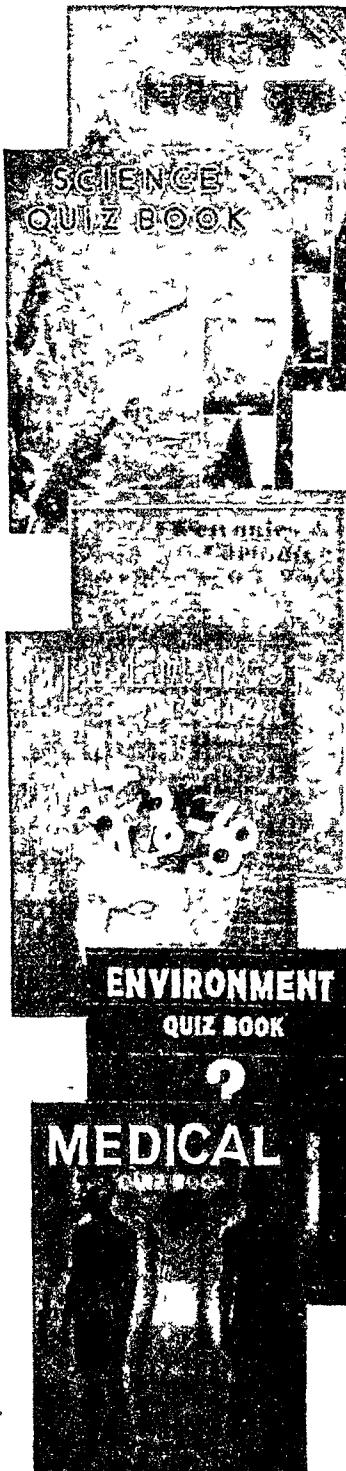
Giant Size Price 40/- Postage 6/-

# **Subject Quiz Series**

in six subjects, so far

## **Science Quiz Book (General)**

Covers advanced topics on Plant Kingdom, Animal World, Human Body, Human Diseases, Medicine, Universe, Science Laws, Scientific Instruments, Domestic Appliances, Computers, Space Exploration, Everyday Science, Scientific Achievements of India, Inventions and Inventors and many more similar topics



## **Electronics & Computers Quiz Book**

From the history and evolution of Electronic science and computers to the latest developments in the field

## **Mathematics Quiz Book**

Crisp questions that can be asked on Arithmetic, Algebra, Geometry, etc., covering all formulae, theorems and short-cuts

## **Environment Quiz Book**

All ecological and biological aspects of the nature surrounding us

## **Medical Quiz Book**

All developments in the field of medicine and medical equipment, diseases and all related zoological topics

## **Astronomy Quiz Book**

The universe in a nutshell — stars, planets, satellites, comets and all the theories based on astronomical inventions

Explanatory answers provided for every question Profusely illustrated for better and quick understanding Helpful for vivas, and competitive tests like MBBS and

Engineering and other scientific courses To face the challenges of competitive quiz programmes on Radio/TV or in Schools and Colleges Useful scientific tips for all interviews Recommended for 10 + 2 classes

'Science Quiz Book' also available in

Big Size ~  
24 each. Postage Rs. 5

**कैमरा ताधारण हो या बढ़िया—भाप स्वयं ट्रिक फोटोग्राफी कर सकते हैं...**

## ट्रिक फोटोग्राफी एंड कलर प्रोसेसिंग

—ए एच हाशमी

बोतल के भीतर आदमी, हथेली पर नाचती औरत, सेब में से ज्ञाकते बच्चे या पत्ते पर प्रेमिका का फोटो उतारिए।

ट्रिक फोटोग्राफी पर हिंदी में प्रथम पुस्तक—जिसमें ट्रिक और इफेक्ट की पूरी-पूरी प्रैक्टिकल जानकारी चित्रों के साथ दी गई है इसके अलावा

कलर फोटोग्राफी व कलर प्रोसेसिंग की प्रैक्टिकल जानकारी भी दी गई है

जिसकी मदद से आप निगेटिव या ट्रासपेरेंसी की प्रोसेसिंग कर सकते हैं और डिमाइ साइज पृष्ठ 248 अच्छे कलर एन्लार्जमैन्ट भी बना सकते हैं।



मूल्य 32/- डाकखर्च 6/-

### डा. नारायणदत्त श्रीधारी द्वारा विरचित

मूल्य 30/-  
डाकखर्च 5/-



मूल्य 40  
डाकखर्च 6

### तात्त्विक सिद्धियां

मन्त्र-अध्येताओं, तात्त्विकों एवं साधकों के लिए ऐसी पथ-प्रदर्शक पुस्तक जिसमें दुष्कर तात्त्विक क्रियाओं का सरल एवं सचित्र विवरण है।

### मंत्र रहस्य

मन्त्रों के मूल स्वरूप, मन्त्र-चेतन्य, मन्त्र कीलन-उत्कीलन, मन्त्र-ध्वनि, मन्त्र-विनियोग एवं मन्त्रों के सफल प्रयोगों के लिए सचित्र ग्रन्थ।

- दुर्गा महिमा
- शिव महिमा
- विष्णु महिमा
- लक्ष्मी महिमा
- गणेश महिमा
- हनुमान महिमा



पुस्तकों में महिमाओं के अतिरिक्त पूजा के मन्त्र, नैवेद्य आदि की विधियां भी हैं।

मूल्य 24/- डाकखर्च 5/-

### 'रिप्ले' की Believe It or Not!

बद हिन्दी में भी....

संसार के  
1500  
अद्भुत  
आश्चर्य



पुस्तक में कुदरत के चमत्कारों, अद्भुत ऐतिहासिक घटनाओं, बादशाहों की अजीब-गरीब सनकों, साहस और वीरता के वेमिसाल कारनामों, पृथ्वी, समुद्र और आकाश के जीव-जन्तुओं और वनस्पतियों की अनजानी विचित्रताओं का सचित्र वर्णन किया गया है।

मूल्य 36/- डाकखर्च 6/- पृष्ठ 224

### तीर्थ-यात्रा का तुरन्त पाइये



हमारे  
पूज्य तीर्थ

वडे 208पृष्ठ  
मूल्य 36/-  
डाकखर्च 6/-

यह पुस्तक आपको, तीर्थों की धार्मिक, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, उपयोग में आने वाले साज-सामान, आने-जाने के मार्ग का निर्देश, ठहरने आदि की वाचित जानकारी प्रदान करेगी।

## घर बैठे दर्जियों जैसी टेलरिंग सिखाने वाला प्रभावी एवं सरल कोर्स

घरभर को पाशार्का अर्थात् नन्हे-मुद्रा को नेपिकन से लेकर युहों को कमोज पैट तक बुल मिलाकर 175 से अधिक डिजाइनों एवं नमूनों की पोशाकों की प्लानिंग कटाइ व रिलाई की सचित्र उनकारी।



### रैपिडैक्स होम टेलरिंग कोर्स

(लेखिका श्रीमती आशारानी व्होरा)

- मनमोहक फ्राकें, तुझावनी मेक्सिया, सलौनी नाइटी, नाइट सूट व गाउन, आकर्पक टाप्स, नन्हे-मुद्रा के रगारग कपड़े, युवक-युवतियों के लिए पट, वेल-वाटम, शर्ट, बुशर्ट व जीन्स
- गृह-सज्जा के लिए परदे, कुशन आदि
- पुराने कपड़ों से बच्चों के कपड़े बनाना
- भाति-भाति की डाट्स, चुन्नट, प्लीट्रूस, जेवे, आस्तीन, कालर योक, बटन आदि
- मणीन के कलापुर्जों की जानकारी भी

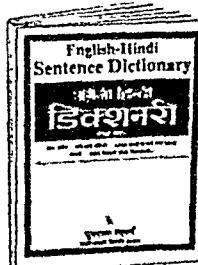
300 से अधिक रेखा व छायाचित्रों से सुसज्जित मूल्य 48/- डाकखर्च 6/-

### English-Hindi Sentence Dictionary

अंग्रेजी-हिन्दी बोलती डिक्षनरी (वाक्यों सहित)

हिन्दी में यह अपने ही प्रकार की पहली ऐसी डिक्षनरी है जिसकी शब्दावली वाक्यों के रूप में बोलती है और अपने पाठकों को उसकी च्याकरण-रचना से परिचित कराकर उसका सही-सद्भार्म में प्रयोग भी सिखाती है। प्राय प्रयोग में आने वाले अंग्रेजी के 4000 शब्दों का हिन्दी में उच्चारण, हिन्दी-अथ तथा उनका अंग्रेजी के वाक्यों में प्रयोग सिखाने वाली अपने प्रकार की पहली डिक्षनरी।

मूल्य 28/-  
डाकखर्च 6/-  
पृष्ठ बड़ 154



भागी मराठी मन्त्रण भी उपलब्ध

### अपना दिवाग तेज कीजिए



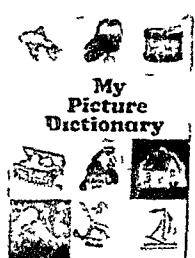
101  
दिमागी  
कसरतें  
हरीश चड्ढ ससी

सिर को खुजलाने के लिए विवरण कर देने वाली ऐसी पहलीनुमा चुनातियाँ, जिनको हल करने की काँशश में जहा एक और आपका मनोरजन होगा वही दसरी ओर आपका दिमाग भी तेज होगा। बच्चों, जवानों तथा बूढ़ों-सभी के लिए मजेदार 101 रोचक दिमागी कसरते

### My Picture Dictionary

For Nursery Classes  
All illustrated 48 multi-colour pages

Price Rs 15/-  
Postage Rs 5/-



प्रतिदृ भविष्यवक्ता, प्रकाण्ड ज्योतिषी, हस्तरेखा-विशेषज्ञ एवं तिंदहस्त  
तांत्रिक-मांचिक डा. नारायणदत्त श्रीनाली की अनमोल पुस्तके

## बृहद् हस्तरेखा शास्त्र



- आप खुद अपने हाथ की रेखाएँ पढ़कर आनन्द भविष्यफल जान सकते हैं। किसी पणि त अथवा ज्योतिषी के पास जाने की आवश्यकता नहीं है।
- हस्तरेखा के 240 विभिन्न योगों का पहली बार प्रकाशन, जैसे—आपके हाथ में धन-सप्तित का योग, पुत्र-योग, विदेश-यात्रा योग आदि हैं या नहीं?
- आपके हाथ की रेखाएँ क्या कहती हैं? कोन से व्यापार से आपको लाभ होगा? नोकरी में तरक्की कब तक होगी? पत्नी के सी मिलेगी? इन्यादि मैकड़ी प्रश्नों के उत्तर।

डिमाई साइज 266 पृष्ठ मत्त्य 40/- डाकखर्च 6/-  
Also available in English

## प्रैविटकल हिप्नोटिज्म



- पुस्तक में हिप्नोटिज्म को सरल-सरस ढंग से चिंत्रों द्वारा समझाया गया है, जिससे साधारण पाठक भी एक अच्छा सम्मोहन विशेषज्ञ बन सकता है।
- पुस्तक में हिप्नोटिज्म के प्रकार, पर्योग, शक्ति, हिप्नोटिज्म के सिद्धात, त्राटक, सम्मोहन के तथ्य आदि पर पूर्ण प्रामाणिकता के साथ सचित्र विवरण है।
- रोग-निवारण, कष्ट दूर करने व जीवन में प्रतिदिन आने वाली वाधाओं व आपदाओं के निराकरण में इस पुस्तक में दिया गया विवरण पूर्णतया उपयोगी है।

मत्त्य 40/- डाकखर्च 6/-  
Also available in English

## रोगों से निबटने में डाक्टर है भी ज्यादा आपकी अपनी भूतिका आवश्यक है

इसेंड के प्रसिद्ध डाक्टरों एवं विशेषज्ञों द्वारा  
लिखित प्रसिद्ध विटिश

## पॉकेट हैल्थ गाइड्स (अब हिन्दी में भी उपलब्ध)

पॉकेट हैल्थ गाइड्स इन बीमारियों के कारणों,  
जटिलताओं, सावधानियों तथा रोकथाम के  
उपायों के बारे में आपका ज्ञानवर्द्धन करेगी।



मत्त्य 8/- प्रत्येक  
डाकखर्च 4/-  
प्रत्येक

हिन्दी में 16 तथा अंग्रेजी में 18 हैल्थ  
गाइड्स

- एलर्जी (Allergies)
- रक्तबीजता (Anaemia)
- संघर्षों एवं गठिया (Arthritis & Rheumatism)
- इम्बा (Asthma)
- पीठ का वर्द (Back Pain)
- बच्चों के रोग (Children's Illnesses)
- रक्त-सचार की समस्याएँ (Circulation Problems)
- अवसाद और चिंता (Depression & Anxiety)
- बघुमेह (Diabetes)
- उच्च रक्तचाप (High Blood Pressure)
- हृदय रोग (Heart Trouble)
- रक्तेनिवृति (The Menopause)
- आघातीसी का वर्द (Migraine)
- पैट्टक अल्सर (Peptic Ulcers)
- रजोपूर्व तनाव (Pre Menstrual Tension)
- त्वचा-रोग (Skin Troubles)
- Cystitis • Hysterectomy

## Out with all Stains

### Spot Check



Straightforward tips to cope with all types of stains A full section on fabrics with a comprehensive chart. Tackle stains on Wallcoverings Carpets Pots Furniture Metals etc

पढ़ पुस्तक हिन्दी में भी उपलब्ध है।  
Price Rs 18/- Postage Rs 5/-

### तमय और घन की बचत करें

### गृह-उपयोगी नुक्ते (Home Hints)

Also available  
in English



चीजों के लवे समय तक बिना सड़े-गले भडारण की विधिया, बोतलों, टी-पॉट आदि की सफाई सहित हजारों नुक्तों का एक बहुरी ग्रन्थित्र संकलन।

मूल्य 18/- डाकघर्ष 5/-

### कमर पतली कोजिए

### लेडीज स्लीमिंग कोर्स



केवल 15 मिनट रोज के इस कोर्स की मदद से आप अपनी कमर और पैट पर चढ़ी फालतू चरबी शीघ्र ही घटा सकती हैं और अपनी कमर का नाप

## घर में ही व्यूटी क्लीनिक

### होम व्यूटी क्लीनिक

-परवेश हाँड़े

Also available in English



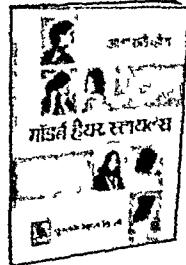
घर-वेठे व्यूटी क्लीनिक जैसे मेकअप की विधिया सिखाने वाली एक ऐसी पुस्तक, जिसमें त्वचा की देखभाल, शरीर को सुडाल बनाने सबधी व्यायाम तथा आकर्षक हेयर स्टायल्स आदि की सपूर्ण जानकारी दी गई है।

चडे 140 पृष्ठ मूल्य 28/- डाकघर्ष 6/-

### आधुनिक केरा-सज्जा सीखो

### मॉडर्न हेयर स्टायल्स

-आशारानी व्होरा



इस पुस्तक की मदद से किसी भी प्रकार की हेयर सेटिंग घर में ही कीजिए। बॉय-कट, बॉब-कट, राउण्ड-कट, स्ट्रेट-कट, फीजर-कट स्टॉप्स पीनी-टेल, रिगलट्रॉस, शोल्डर-कट, शोग-स्टायल या मिव्च-सज्जा—मूल्य 24/- डाकघर्ष 6/-

### 18 मिनट डब्टरों के इंटरव्यूज घर आधारित

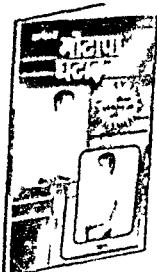
### बेबी हेल्थ गाइड

-आशारानी व्होरा



यह गाइड बच्चों से सबीधित सभी विषयों का एक अनूठा एनसाइक्लोपीडिया है, जिसमें उनके शारीरिक रोगों से लेकर उनके मनोविज्ञान तक

## मोटा पतले हो सकते हैं



20 दिन में  
मोटापा  
घटाइये

Also available in English

मोटापा भयकर वीमारियों की जड़ है, सेक्स-क्रीड़ा में बाधक है, सेहत के लिए अभिभासप है। केवल 15 मिनट नित्य का कोर्स लगातार 20 दिन तक करिए, आपको आश्चर्यजनक फक्त नजर आएगा।

मूल्य 20/- डाकखच 5/- पृष्ठ 72

## बाटिक कला सीखिए



बाटिक  
कला

बड़े साइज़ के 120 पाठ  
मूल्य 20/- डाकखच 5/-

धर की मजावट के साज-सामान से लेकर पहनने के बम्बों तक धर बाटिक कला का प्रयोग कर—पर्द, मेजपोश, टीकोजी, रेडियो कवर, चादरे, कुशन, साड़ी-द्वाउज आदि पर विभिन्न प्रकार के रंग-बिरंगे डिजाइन बना सकते हैं।

## पेण्टिंग सिखाने वाला कोर्स

ड्राइंग  
तथा  
पेण्टिंग कोर्स  
—एच हाशमी



इस कोर्स की मदद से आप कुछ ही दिनों में आकृतियों के एक्षण से भरे चित्र तथा सीन-सीनरिया, वाटर-कलर, ऑयल-कलर, एक्रेलिक-पेण्टिंग, हिन्दी-अंग्रेजी लेटरिंग आदि बीख कर लाभान्वित हो सकते हों।

पृष्ठ 144 मूल्य 28/- डाकखच 6/-

## आकस्मिक दुर्घटना के तथ्य

प्राथमिक  
उपचार  
(First Aid)



Also available in English  
मूल्य 18/- डाकखच 5/-

पुस्तक में डाक्टरी सहायता उपलब्ध होने तक दिल का दारा पड़ने, करट लगने, विषाक्त भोजन खाने, जल जाने, चोट से निरतर धून बहने, हड्डी टूटने आदि जैसी अनेक आकस्मिक दुर्घटनाओं से जूझने की विधियाँ दी गई हैं।

## Bring Greenery Indoors



House  
Plants

Price Rs 18/-  
Postage Rs 5/-

Tips on indoor greenery Get to know all about choosing, buying, watering and feeding House plants. Bottle gardens. Flowering and Foliage plant from BULBS to BONSAI

Full of Colourful Illustrations

## रतोई की सानी बनिये



भारतीय  
ब्यंजन  
—कुमुदिनी मुश्ती

मूल्य 15/- डाकखच 5/-

पराठे, पूरी, सचिया, बाटी, कढ़ी, कोफ्ते, सलाद, चटनी, मुरब्बे, अचार, खीर, हलवा, डोसा-इडली, कचोरिया, शरबत, आइसक्रीम आदि बनाने की विधियाँ।

हिन्दी में पहली बार प्रकाशित बहुरंगी एनसाइक्लोपीडिया

## जूनियर साइंस एनसाइक्लोपीडिया

(Junior Science Encyclopedia)



पृष्ठों में 800 से भी अधिक रगीन चित्रों एवं 200 शब्दों की पाठ्य-सामग्री से युक्त प्रस्तुत गाइक्लोपीडिया वैज्ञानिक विषयों पर लिखा एक अमूल्य सदर्भ-ग्रथ है। बच्चे की हर 'कैसे', और 'कहा' का उत्तर देने में सक्षम संग्रहणीय ग्रथ।

मूल्य 300/- डाकखर्च 10/-

पाच छड़

1. पृथ्वी एवं ब्रह्माद, 2. नाप, गति एवं ऊर्जा, 3. प्रकाश, दृष्टि तथा धर्वनि, 4. इलेक्ट्रॉनों की उपयोगिता, 5. खोज एवं आविष्कार।

Published in India in collaboration with Hamlyn Publishing London

त्रिविल्यात पाक-कला विशेषज्ञा 'श्रीमती आशारानी व्होरा' द्वारा प्रस्तुत

## मॉडर्न कुकरी बुक

तीय एवं पाँचवीं स्थायल में किचन सैर्टिंग 15 से अधिक फोटोग्राफ्स, रमोइंघर के रश्यक-सामान व आधुनिक उपकरणों त।



बड़े साइज के

148 पृष्ठ

सेकड़ों रेखा व

छवि चित्र

मूल्य 24/-

डाकखर्च 5/-

Also available in English

- महमानों का स्वागत कसे करें, परोसने के क्या-क्या तरीके हैं, व्यजनों को प्लेटों में केसे सजाए तथा डायरिंग टेबल पर प्लेटो व ब्रॉकरी आदि को केसे सजाए।

- दिनिक नाश्ते, लजीज सब्जिया तथा विशेष अवसरों के लिए भीठे व नमकीन विशिष्ट पकवानों के साथ-साथ जम, मुरब्बा, जेली, आइसक्रीम, कुल्फी, स्कवैश, फ्रूट-कस्टड, अचार, चटनी, सॉस, सलाद, सप, सेंडविच और फ्रूट-काकेट आदि व्यजनों को बनाने की सचित्र विधियां।

## चमत्कारी किरण—लेसर

रक्षा विभाग भारत नियन्त्रक बोर्ड द्वारा प्रकृत



एक ऐसा चमत्कारिक आविष्कार, जिसके उपयोगों ने आज सारे सासार में धूम भवा दी है। लेसर क्या है तथा लेसर के 50 से भी अधिक उपयोगों की सचित्र जानकारी।

बड़े साइज के  
112 पृष्ठ

अपने लाइसेंस के लिए कोई भी ननपत्राद नाम चुनिए!

बच्चों के  
2001 नाम





## COLLECTION OF VARIOUS

- > HINDUISM SCRIPTURES
- > HINDU COMICS
- > AYURVEDA
- > MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with  
By  
  
Avinash/Shashi

Icreator of  
hinduism  
server

## N.C.E.R.T. द्वारा पुरस्कृत

**51**

### महान आविष्कार

-राजेन्द्र कुमार राजीव



पुस्तक मे आज के विज्ञान और आधुनिक सभ्यता का आधार समझे जाने वाले हजारों साल पहले के पहिए के आविष्कार से लेकर आधुनिक युग के राडोर, कम्प्यूटर, रॉकेट आदि तक के आविष्कारों का सचित्र वर्णन किया गया है।

बड़े 168 पृष्ठ मूल्य 30/- डाकखर्च 6/-

## जीव-जन्तुओं की आत्मकथाएं

**हम**

### जीव-जन्तु

लेखक-रवि लायट  
भूमिका-रामेश बेदी

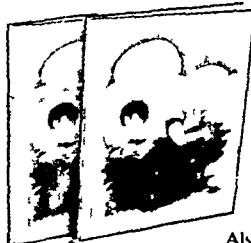


जीव-जन्तुओं के सासार के 50 सदस्यों की रोचक आत्मकथाएं, उनकी जबानी सुनिए-

- \* वे किस जात विरादरी के हैं?
- \* उनकी दिनचर्या क्या है?
- \* वे क्या खाते-पीते हैं? आदि-आदि

बड़े 116 पृष्ठ मूल्य 20/- डाकखर्च 5/-

## नवजात शिशु के लिए तबोहत उपहार



### बेबी रिकार्ड एलबम

Also available in English

इसमें आप अपने बच्चे के जन्म से अगले पाँच वर्ष तक के सीढ़ी-दर-सीढ़ी विकास (दत-अकुरण, पहली बार बैठना व चलना आदि), जन्म सबधी विवरणों (जन्म तिथि, जन्म का वजन, लवाइ व कुड़ली आदि), के रिकार्ड के साथ ही प्रत्येक अवसर के स्मरणीय फोटो भी सजो सकते हों।

पृष्ठ 52 मूल्य 50/- डाकखर्च 6/-

## लैटरिंग की आकर्षक विधियां तीछों



### इगलिश-हिन्दी मॉडर्न लैटरिंग

लेखक ए एच हाशमी

- अक्षरों की बनावट का वर्गीकरण, तर्थवाचक, बनावट, स्टॉक्स लगाने के तरीके, पन, स्टील तथा फ्लेट बुश द्वारा लैटरिंग।
- अक्षराकान के मर्ल मिछात। सभी तरह की अग्रेजी-हिन्दी लैटरिंग करने की विधायां तथा सैकड़ों आकृपक नमूने।

172 पृष्ठ मूल्य 48/- डाकखर्च 6/-

## अपना मनपसन्द बाद्य बजाना सीखिए

- सितार सीखिए
- गिटार सीखिए
- वायलिन सीखिए
- हारमोनियम सीखिए
- मेडोलिन व बेजो सीखिए
- तबला व कोगो-बोगो सीखिए



संगीताचार्य श्री रामावतार 'बीर' रचित युवा पीढ़ी के चेहरे बाद्य, जिन्हे विना शिक्षक के सरलता से सीखा जा सकता है और हमारे इन कोसों की मदद से आप कुछ ही दिनों में फिल्मी व शास्त्रीय धुने निकालने लगेंगे।

मूल्य 22/- डाकखर्च 5/- प्रत्येक